विज्ञप्ति—

नमस्ते सर्वलोकानां कर्त्रे हर्त्रे महात्मने ।
पुरुषाय पुराणाय परं ज्योतिः स्वरूपिणे ॥

(शिवपुराण)

ज्योतिषशास्त्रके अनन्त पारावार में वारि विहार करते हुये छात्रों के रंजनार्थ मैंने कई पुस्तकों का प्रणयन किया। यद्यपि यह पुस्तक सभी श्रेणी के विद्वानों की मोद मंजरी बनेगी परन्तु इसमें विशेष ध्यान उन छात्रों की ओर है जिनके मानस को शास्त्र की दुरूहता मलिन कर रही है। बहुधा देखने में आता है कि भग्नोत्साह विद्यार्थी जीवन संग्राम के थपेड़ों को खाकर किंकर्तव्य विमूढ़ हो जाते हैं। यद्यपि जगत जानता है कि ये तिरस्कृत छात्र जगत के जगमगाते हीरे हैं, परन्तु तो भी उन्हें शान्ति नहीं, उन्हें विश्राम नहीं।

मेरा कल्प ज्योतिषशास्त्र को उनकी अवहेलना सहन नहीं, इस पुस्तक में मानों उसने अपना सर्व सुलभ फाटक खोल रक्खा है। प्रत्येक जिज्ञासु इसमें जाकर अपने जीवन का उद्देश्य निश्चित कर सकता है। इसके द्वारा उसकी निष्ठा प्रतिष्ठा तथा बुद्धि प्रचुरता की वृद्धि होने लगती है। छोटे छात्रों की पाठ्य पुस्तक होने के साथही साथ यह बड़े छात्रों की भी पथ प्रदर्शिनी है। शिक्षित छात्र भी बहुधा कर्म महत्व नहीं होते। परन्तु इसके उदाहरण उनके सामने कोई भी कठिनाई न रहने देंगे। इसमें स्थूल दृष्टि से ज्योतिष के गणित एवं फलित दोनों विभागों को समझाया गया है। नाम में नहीं पर काम में तो अवश्य ही यह ज्योतिषसार है। यह इस शास्त्रकी प्रथम पुस्तक है। कंठस्थ करने वाला छात्र इच्छित फल प्राप्त करेगा।

इसमें नौरत्न निर्मित किये गये हैं, १ संज्ञारत्न, २ मुहूर्तरत्न, ३ संस्काररत्न, ४ विवाहरत्न, ५ यात्रारत्न, ६ गृहरत्न, ७ जन्मांगरत्न, ८ वर्षरत्न, ९ मिश्रितरत्न हैं, जिससे शास्त्रके विशेष अंशों पर विचार करने का ज्ञान होता है।

फाल्गुन कृष्ण,
महाशिवरात्रि।
सम्वत १९९४

भवदीय—
मातृप्रसाद पाण्डेय,
श्रीशंकरपाठशाला
काशी-मिर्जापुर।

॥ इति विषयानुक्रमणिका ॥

नक्षत्र अहोरात्र (दिन) होता है । ३० दिन का सूर्योदय से सावन मास होता है * ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

ऋतु-अयन-वर्ष प्रमाणम् (मदीय सुक्तम्)-

ऋतुर्द्वाभ्यांहि मासाभ्यां षड्भिर्मासै स्तथायनम् ।
मासैर्द्वादशभिः सौरैर्वर्षमेकं निगद्यते ॥ ५ ॥

भा० टी०—दो मास का १ ऋतु, छः मास का १ अयन, और १२ मासों का १ वर्ष होता है ॥ ५ ॥

अयनानयन विधिः (मदीय सुक्तम्)-

मकरादिगतेषट्के सूर्यस्यैवोत्तरायणम् ।
कर्कादिषट्कगे सूर्ये दक्षिणायनमुच्यते ॥ ६ ॥

भा० टी०—मकर आदि ६ राशि में सूर्य के रहने से उत्तरायण और कर्क आदि छः राशि में सूर्य के होने से दक्षिणायन संज्ञा कहते हैं ॥ ६ ॥

गोलानयन विधिः (मतान्तरे)

मेषादिषट्कगे सूर्ये उत्तरो गोल उच्यते ।
तुलादिषट्कगे सूर्ये याम्यगोलः स उच्यते ॥ ७ ॥

भा० टी०—मेष आदि छः राशि में सूर्य के होने से उत्तर गोल और तुला आदि ६ राशियों में सूर्य के प्राप्त होने से दक्षिण गोल होता है ॥ ७ ॥

ऋतु आनयन विधिः (मतान्तरे)

मृगादिराशिद्वयभानुभोगात् षडृतवः [illegible] ।
ग्रीष्मश्च वर्षा च शरच्च तद्वद्धेमन्तनामा कथितोऽत्र षष्ठः ॥ ८ ॥

भा० टी०—मकर आदि दो दो राशियों में सूर्य के रहने से शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् और हेमन्त ये छः ऋतु होते हैं, अर्थात् मकर कुम्भ

---

* [illegible]

शिशिर, मीन मेष वसंत, वृष मिथुन ग्रीष्म, कर्क सिंह वर्षा, कन्या तुला शरद्, वृश्चिक धन हेमंत ऋतु जाने ॥ ८ ॥

मास संज्ञा (मु० ग०)-

मासश्चैत्रोऽथ वैशाखः ज्येष्ठश्चाषाढ संज्ञकः ।
ततस्तु श्रावणो भाद्र पदोऽथाश्विन संज्ञकः ॥ ९ ॥
कार्तिको मार्गशीर्षश्च पौषो माघोऽथ फाल्गुनः ।

भा० टी०-चैत्र*वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ श्रावण, भाद्रपद, (भादों) आश्विन (कुवार) कार्तिक मार्गशीर्ष (अगहन) पौष माघ और फाल्गुन ये १२ मासों के नाम हैं ॥ ९ ॥

मास भेदः (मु० ग०)-

मासोदर्शावधिश्चान्द्रः सौरः संक्रमणाद्रवेः ॥ १० ॥
त्रिंशद् दिनः सावनिको नाक्षत्रो विधुभभ्रमात् ।
प्रोक्तकार्येत्विमे मासाः विज्ञेया कोविदैः सदा ॥ ११ ॥

भा० टी०-अमावस से अमावस पर्यन्त चान्द्रमास, संक्रान्ति से संक्रान्ति तक सौर मास, ३० दिनों का सावन मास, और चन्द्रमा के भगण भोग काल का नक्षत्र मास नाम है ॥ १० ॥ ११ ॥

कस्मिन्कार्ये कि को मास ग्राह्यः (मु० ग०)-

सौरे कार्यो विवाहादि यज्ञयागादिके तथा ।
सावने गर्भवृद्ध्यादि नाक्षत्रे मेघ गर्भजम् ॥ १२ ॥
व्रतयज्ञादिकं चान्द्रे मासे परिणयः क्वचित् ।
चान्द्रस्तुद्विविधो मासः दर्शान्तः पौर्णिमान्तिमः ॥ १३ ॥
देवार्थे पौर्णिमास्यान्तो दर्शान्तः पितृकर्मणि ।

भा० टी०-सौरमास में विवाहादि कार्य करे, यज्ञयागादि कार्य करे, सावन मास में गर्भ वृद्धि आदि नाक्षत्र मास में मेघ का गर्भ आदि और चान्द्र के व्रत यज्ञ आदि कोई २ विवाह भी चान्द्र में करते हैं, चान्द्र मास दो प्रकार का

---

* मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभ, नभस्य, इष, ऊर्ज, सह, सहस्य, तप, तपस्य ये भी चैत्रादि मासों का क्रमसे नाम है।

होता है, शुक्ल प्रतिपदा से अमावस पर्यन्त दूसरा कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से पूर्णिमा पर्यन्त। देव कार्य के निमित्त पूर्णिमा पर्यन्त वाला श्रेष्ठ है, और पितृ कर्म के लिये अमावस पर्यन्त वाला मास उत्तम है। (प्रश्न में तथा चक्रों के विचार में जहाँ २ तिथि को युत करना है वहाँ २ शुक्ल प्रतिपदा से तिथि का गणना होता है दर्शान्त मास का ही मान्य है) ॥ १२ ॥ १३ ॥

पक्ष संज्ञा (मु० ग०)-

शुक्ल कृष्णावुभौ पक्षौ देवे पित्रे च कर्मणि।
ग्राह्यौ तथा शुभं सर्वं शुक्लपक्षे प्रशस्यते ॥ १४ ॥

भा० टी०-शुक्ल, कृष्ण दो पक्ष देव पितृ कर्म के लिये हैं, शुभ सम्पूर्ण कार्य शुक्ल पक्ष में होना विशेष प्रशंसनीय है ॥ १४ ॥

अधिमास क्षयमास ज्ञानम् (संग्रहे०)-

असंक्रान्तिमासोधिमासः स्फुटः स्याद्-
द्विसंक्रान्तिमासः क्षयाख्यः कदाचित् ॥ १५ ॥
क्षयः कार्तिकादित्रये नान्यतः स्यात्
तदा वर्ष मध्येऽधिमासद्वयं च ॥ १६ ॥

भा० टी०—स्पष्ट सूर्य की संक्रांति जिस मास में न हो उसे अधिमास और जिस चान्द्र मास में दो सूर्य की स्पष्ट संक्रान्ति हो उसे क्षयमास कहते हैं। कार्तिकादि ३ मासों में ही क्षयमास होता है, जिस वर्ष में क्षयमास होता है उस वर्ष में दो अधिमास होता है ॥ १५ ॥ १६ ॥

(१९ वर्ष में ७ अधिमास होते हैं चैत्र वै० ज्ये० आ० श्रा० भा० आश्विन ये सात मास अधिमास होते हैं कभी २ फाल्गुन कार्तिक भी अधिमास हो जाता है माघ न तो कभी क्षयमास हो न अधिमास ही होता है। शाके के अनुसार भी अधिमास जानने का प्रकार लिखा है वह कभी २ एक मास न्यूनाधिक हो जाता है अतः वह स्थूल प्रकार है मुख्य प्रकार वही है कि जिस चान्द्र मास में संक्रान्ति न हो वह अधिमास होता है जैसा ऊपर लिखा है)

तत्र विहित कार्याणि (मदीयवृत्तम्)-

गर्भे मृत्ये क्षुरादि च प्रेत कर्मणि मासि के
नित्ये सपिण्डी करणे नाधिमासो विगर्हितः ॥ १७ ॥

भा० टी०–गर्भाधान से अन्नप्राशन ⊛ तक के संस्कार में नौकर रखने में मृतकर्म में मासिकश्राद्ध नित्यश्राद्ध सपिंडीश्राद्ध में अधिमास त्याग नहीं है ॥ १७ ॥

जन्म मास निर्णयः (नारदः)–

आरभ्य जन्म दिवसं यावत् त्रिंशद् दिनं भवेत् ।
जन्ममासः सविज्ञेयः गर्हितः सर्व कर्मसु ॥ १८ ॥

भा० टी०–जन्म के दिन से लेकर ३० दिन पर्यन्त जन्म मास है यह सम्पूर्ण मांगलिक कार्य में वर्जित है ॥ १८ ॥

तिथि नाम (संग्रह सर्वस्वे)–

प्रतिपच्च द्वितीया च तृतीया तदनन्तरम् ।
चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी सप्तमी चाष्टमी ततः ॥ १६ ॥
नवमी दशमी चैवैकादशी द्वादशी ततः ।
त्रयोदशी ततः प्रोक्ता ततो ज्ञेया चतुर्दशी ॥ २० ॥
पूर्णिमा शुक्लपक्षेन्त्या कृष्णपक्षे त्वमा स्मृता ।

भा० टी०–प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और शुक्लपक्ष के अन्त की १५ वीं तिथि पूर्णिमा, और कृष्ण पक्षकी अंतिम तिथि का नाम अमावस्या है ॥ १६ ॥ २० ॥

तिथीशाः (संग्रह सर्वस्वे)–

क्रमात्तिथीनांपतयोऽग्निधाता
गौरीगणेशोऽहिगुहो रविश्च
महेशदुर्गान्तक विश्वविष्णु
कामेशसोमाः पितरो हि दर्शे ॥ २१ ॥

भा० टी०–प्रतिपदादि तिथियों के अग्नि ब्रह्मा गौरी गणेश सर्प कार्तिकेय सूर्य शिव दुर्गा यम विश्वेदेव विष्णु, काम, शिव, पितर क्रमसे स्वामी हैं (अंक-

---

⊛ चौलादि शुभ कार्यार्थं जन्म मासे न दोषकम् ।
वमार्न हृतमरुणिमदोषं नदी विला हर्षदायकम् ।
पुत्र कन्या विवाहश्च जन्ममासे न वर्जयेत् ।

पदाके अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, तृतीया के पार्वती, चतुर्थी के गणेश, पंचमी के सर्प, षष्ठी के षडानन, सप्तमी के सूर्य, अष्टमी के शिव, नवमी के दुर्गा, दशमी के यम, एकादशी के विश्वेदेव, द्वादशी के विष्णु, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव, पूर्णिमा के चन्द्र, अमावस के पितर यही तिथियों के स्वामी हैं॥ २१ ॥

तिथीनां नन्दादि संज्ञा (संग्र० स०)—

नन्दाख्या प्रतिपत् षष्ठी तथा चैकादशी स्मृता।
भद्रा संज्ञा द्वितीया च सप्तमी द्वादशी तथा॥ २२ ॥
जयाख्या च तृतीया स्यादष्टमी च त्रयोदशी।
तथा रिक्ता चतुर्थी च नवमी च चतुर्दशी॥ २३ ॥
पूर्णा पञ्चदशी प्रोक्ता पञ्चमी दशमी तथा।
एवं पञ्चविधातिथ्यो नाम तुल्य फलप्रदा॥ २४ ॥

भा० टी०—१।६।११ नन्दा, २।७।१२ भद्रा, ३।८।१३ जया, ४।९।१४ रिक्ता, ५।१०।१५ पूर्णा संज्ञक तिथि हैं इस प्रकार तिथियों का पाँच संज्ञा लाघव के लिये किया है नाम के सदृश ये फल देती हैं।२२।२३।२४।

असत्तिथयः-(संग्रहे)-

रिक्तापष्ठी द्वादशी च ह्यमावस्याष्टमीतथा।
तिथयो न शुभाप्रोक्ता शेपास्तुतिथयः शुभाः॥ २५ ॥

भा० टी०—रिक्ता (४।९।१४) षष्ठी, द्वादशी, अमावस, अष्टमी ये अशुभ तिथि हैं, और शेष (२।३।५।७।१०।११।१३।१५) तिथि शुभ हैं॥ २५ ॥

आवश्यके वर्ज्यघट्यः (मु० चि०)—

वेदाङ्काष्ट नवार्केन्द्र पक्षरन्ध्रतिथी त्यजेत्।
वस्वङ्क मनुतत्त्वाशा शरा नाडीः पराः शुभाः २६ ॥

भा० टी०—दोनों पक्षोंकी चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी, चतुर्दशी ये पक्ष रन्ध्र तिथि हैं (ये तिथि छिद्र वाली हैं इसमें किये हुए कार्य का स्थिरता नहीं रहता है) वे त्याज्य हैं, परन्तु ये तिथि क्रमशः ८।९।१४।२५।१०।५ नाड़ी के बाद शुभ हैं॥ २६ ॥

वाराः (मदीय सूक्तम्)—

रविश्चन्द्रः कुजश्चान्द्री गुरुर्दैत्यगुरुः शनिः ।
वाराः प्रकीर्तिताः सप्त बुधैः सर्वहिताय वै ॥ २७ ॥
चन्द्र चन्द्रजशुक्रेज्याः वाराः सर्वत्रसौख्यदाः ।
सूर्य मंगल मन्दाश्च प्रोक्त कर्माणिसौख्यदाः ।

भा० टी०—सूर्य, *चन्द्र, मंगल, बुध बृहस्पति, शुक्र, शनि ये ७ वार हैं तिनमें चन्द्र बुध गुरु शुक्र सर्व कार्य में शुभ है और रवि भौम शनि कथित कार्य में शुभ हैं † ॥ २७ ॥

वार प्रवृत्तिः-(वशिष्ठ संहितायां)—

प्रभाकरस्योद्गमनात्पुरेस्याद् वार प्रवृत्ति दशकन्धरस्य ।
चरार्धं देशान्तर नाडिकाभिरूर्ध्वं तथाधोऽथपरत्रनस्मात् २८

भा० टी०—लंका में सदा सूर्योदय से वार प्रवृत्ति होती है अन्य देशों में चरार्ध । देशान्तर के संस्कार द्वारा वार प्रवृत्ति का ज्ञान होता है, यथा रेखा के पश्चिम देशान्तर संस्कार को जोड़े और पूर्व को घटावै जो प्राप्त हो उतना घट्यादि दिनार्द्ध के पूर्व वार प्रवृत्ति होती है ॥ २८ ॥

उदाहरण—कुरुक्षेत्रसे काशीजी ६३ योजनपर है इसमें इसका चतुर्थांश १५। ४५ हीन किया तो ४७ । १५ बचा, इसलिये काशी पूर्व है अतः १५ में घटाया तो घट्यादि १४ । १२ । ४५ दिनार्ध रहने पर वार प्रवृत्ति होगी दिनार्ध १५ ।८ है इसमें १४ । १२ । ४५ को हीन किया तो शेष ०। ४७ । १५ बचे अतः ४७ पल १५ विपल दिन चढ़े वार प्रवृत्ति हुई ॥ २८ ॥

काल होरा ज्ञानम् (मु० चि०)—

वारादेर्घटिका द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेष वर्जिताः ।
सैकातष्टानगैः कालहोरेशाः दिनपात् क्रमात् ॥ २९ ॥

भा० टी०—वार प्रवृत्ति के समय से गत घटी को २ से गुणा करके दो जगह धरे एक जगह ५ का भाग देने से जो शेष बचे उसे दूसरे जगह घटाकर

---

* न वार दोषाः प्रभवन्ति रात्रौ देवेज्य दैत्येज्य दिवाकराणाम् ।
दिवा शशाङ्कार्कजभूसुतानां सर्वत्रनिन्द्यो बुधवार एव ॥
† सं० बु० बृ० शु० शुभप्रद हैं । सू० मं० श० और रा० के० दुखप्रद हैं ।

फिर उनमें १ जोड़ कर ७ के भाग से जो शेष बचे वह उस दिन से होरेश है (होरेश * सूर्य शुक्र बु० चं० श० बृ० मं० होते हैं) ॥ २६ ॥

काल होरा प्रयोजनं (पी० धा०)-

यस्य ग्रहदिने कर्म यत्किञ्चिदभिधीयते ।
तस्यांश संस्थिते सूर्ये चन्द्रे वा तद्विधीयते ॥ ३० ॥

भा० टी०-जिस वार के जो कर्म विहित है आवश्यक कार्य में वह कर्म उस वार में सूर्य चन्द्रादि के काल होरा में करे ॥ ३० ॥

होरा फलं (पी० धा०)-

भानु होरामृतिं कुर्याच्चन्द्र होरा स्थिरासनम् ।
कारावन्धं भौमहोरा बुधहोरा च पुत्रदा ॥ ३१ ॥
वस्त्रालङ्कारदा जीव होरा शौक्रीविवाहदा ।
जडत्वं शनिहोरायां सप्तहोराफलं त्विदम् ॥ ३२ ॥

भा० टी०-सूर्य की होरा मृत्यु करती है, चन्द्र की स्थिर, मंगल की जेल भेजती है, बुध की पुत्रदा,गुरुकी वस्त्र अलंकार देने वाली,शुक्र की विवाहदा,शनि की जड़ बनाने वाली होरा है इस प्रकार का होरा का फल है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

नक्षत्र नामानि (मु० ग०)-

अश्विनी भरणीचैव कृत्तिका रोहिणी मृगः ।
आर्द्रा पुनर्वसुः पुष्यस्ततो श्लेषा मघा तथा ॥ ३३ ॥
पूर्वा फाल्गुनिका तस्मादुत्तराफाल्गुनी ततः ।
हस्तश्चित्रा तथा स्वाती विशाखा तदनन्तरम् ॥ ३४ ॥
अनुराधा ततो ज्येष्ठा ततोमूलं निगद्यते ।
पूर्वाषाढोत्तराषाढात्वभिजिच्छ्रवणस्ततः ॥ ३५ ॥
धनिष्ठा शततारारव्या पूर्वभाद्रपदस्ततः ।
उत्तराभाद्रपाचैव रेवत्येतानिभानि च ॥ ३६ ॥

---

* वार प्रवृत्तेर्दण्डिका द्विनिघ्नाः कालाख्य होरापतयः क्रमेण ।
दिनाधिपाद्या रविशुक्र सौम्य शशाङ्क सौरेज्य कुजाः क्रमेण ३।१ इति रत्नमाला• ।

भा० टी०–अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनि, उत्तराफाल्गुनि, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल,पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पूर्वभाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद, रेवती ये २८ नक्षत्र हैं ॥ ३३–३६ ॥

नक्षत्रेशाः (मु० मं०)-

दस्रः कालोऽनलःको विधु शिवमदितिर्जीव सर्पास्त्वधेशाः,
नक्षत्रेशा भगाख्यश्चार्यम दिवसपतिः त्वष्ट वातोनलेन्द्रौ ।
मित्रे जिष्णुश्चरक्षोजलमथ च ततो विश्वसंज्ञाविधिस्स्याद्,
विष्णुर्वस्वम्बुनाथाजचरणयुगाहिर्बुध्न्य पूषाभिधानौ ॥ ३७ ॥

भा० टी०–अश्विनीकुमार, यम, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा, शिव, अदिती, गुरु, सर्प, पितर, भग, अर्यमा, सूर्य, त्वष्टा, वायु, शक्राग्नि, मित्र, इन्द्र, राक्षस, जल, विश्वेदेव, विधि, विष्णु, वसु, वरुण, अजचरण, अहिर्बुध्न्य पूषा (सूर्य) ये क्रम से अश्विनी आदि नक्षत्रों के स्वामी हैं ॥ ३७ ॥

नक्षत्राणां संज्ञाः तत्र ध्रुवस्थिरादि (रामः)-

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेह शान्त्यारामादि सिद्धये ॥ ३८ ॥

भा० टी०–तीनों उत्तरा, रोहिणी, ये नक्षत्र और रविवार इनकी ध्रुव-स्थिर संज्ञा होती है, इनमें स्थिर कर्म बीज बोना गृहप्रवेश करना और बाग लगाना आदि शब्द से मृदु संज्ञोक्त कार्य करने से शुभ होता है ॥ ३८ ॥

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ३९ ॥

भा० टी०–स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष ये नक्षत्र और चन्द्रवार चर चलसंज्ञक हैं । इसमें हाथी घोड़ा आदि सवारी बागली यात्रा आदि कार्य करने से शुभ होते हैं । तथा लघुनक्षत्रोक्त कर्म भी सिद्ध होते हैं ॥ ३९ ॥

पूर्वात्रयं याम्य मघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घातानि शाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति॥४०॥

भा० टी०–तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, और भौमवार उग्र, क्रूर संज्ञक हैं

इनमें शत्रुको मारणकृत्य, अग्निकृत्य, विषकृत्य तथा दारुण नक्षत्रोक्त कृत्य भी सिद्ध होते हैं ॥ ४० ॥

विशाखाग्नेय भे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्धये ॥ ४१ ॥

भा० टी०-विशाखा, कृत्तिका और बुधवार मिश्र एवं साधारण संज्ञक हैं, इनमें अग्निहोत्रादि वृषोत्सर्गादि कार्य और उग्र नक्षत्रोक्त कार्य भी सिद्ध होते हैं ॥ ४१ ॥

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा ।
तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषा शिल्प कलादिकम् ॥ ४२ ॥

भा० टी०-हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् और गुरुवार क्षिप्र तथा लघु-संज्ञक हैं, इसमें दुकान, स्त्री संभोग, शास्त्रादिज्ञानारंभ, भूषण, शिल्पविद्या, ६४ कला और चर नक्षत्रोक्त कार्य भी सिद्ध होते हैं ॥ ४२ ॥

मृगान्त्य चित्रा मित्रर्क्षं मृदुर्मैत्रं भृगुस्तथा ।
तत्रगीताम्बरक्रीडा मित्र कार्यं विभूषणम् ॥ ४३ ॥

भा० टी०-मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा और शुक्रवार मृदु तथा मैत्र संज्ञक है, इसमें गीतकृत्य, वस्त्र धारणादि, रति, मित्रकार्य भूषण कृत्य तथा ध्रुव नक्षत्रोक्त कार्य करना शुभ है ॥ ४३ ॥

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरि तीक्ष्णंदारुण संज्ञकम् ।
तत्राभिचार घातोग्र भेदाः पशुदमादिकम ॥ ४४ ॥

भा० टी०-मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्लेषा, नक्षत्र और शनिवार तीक्ष्ण तथा दारुण संज्ञक है इनमें अभिचार (जादूगरी) मारणादि, घोड़ा हाथी आदि पशुओं का दमन (शिक्षा या बंधन या नपुंसक करना) और उग्र नक्षत्रोक्त कार्य भी सिद्धि होते हैं ॥ ४४ ॥

मूलाहि मिश्रोग्र मधोमुखं भवेद्-
ध्वास्य मार्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवम् ।
तिर्यङ्मुखं मैत्रकरानिलादिति-
ज्येष्ठाश्विभानीदृश कृत्यमेषु सत् ॥ ४५ ॥

भा० टी०—मूल, श्लेषा, और मिश्रसंज्ञक (वि० कृ०) अधोमुख संज्ञक हैं इनमें नीचे का कार्य अर्थात् भूमि खनन इत्यादि शुभ होता है। आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, और ध्रुव नक्षत्र (उ० रो०) ऊर्ध्वमुख हैं इनमें गृह बनाना राज्याभिषेक आदि कार्य सिद्धि होते हैं। मैत्र संज्ञक (मृ० रे० चि०अनु०) हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अश्विनी, तिर्यङ् मुखसंज्ञक नक्षत्र है इनमें रथ चक्र हल चक्र पशुकृत्य, सायकिल, मोटर आदि चलाना शुभ है॥ ४५॥

अंधकादि नक्षत्राणि (मु० चि०)-

अन्धाक्षं वसु पुष्यधातृजलभ द्वीशार्यमान्त्याभिधं,
मन्दाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेपाश्विचान्द्रं भवेत्।
मध्याक्षं शिव पित्रजैकचरणा त्वष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं,
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्य रक्षोभगम् ॥४६॥

भा० टी०-रोहिणी से आरंभ करके एक नक्षत्र की अंधाक्ष, फिर एक की मंदाक्ष, फिर एक की मध्याक्ष, फिर एक की स्वक्ष (सुलोचन) संज्ञा है। फिर इसके आगे भी इसी प्रकारकी संज्ञा सम्पूर्ण नक्षत्रों की है) चक्रमें देखिये। "अन्धाक्षं वसुपुष्य" इसके अनुसार विस्पष्ट मालूम हो जायगा॥ ४६॥

अन्धाक्ष	रो० पु० उ० वि० पू० ध० रे०
मन्दाक्ष	मृ० श्ले० ह० अ० उ० श० अ०
मध्याक्ष	आ० म० चि० ज्ये० अ० पू० भ०
स्वक्ष	पु० पू० स्वा० मू० श्र० उ० कृ०

अन्धादि नक्षत्राणां फलम् (मु० चि०)-

विनष्टार्थस्य लाभोन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने॥ ४७॥

भा०टी०—उक्त संज्ञक नक्षत्रों का प्रयोजन यह है, कि यदि अन्धलोचन नक्षत्र में वस्तु नष्ट होगया हो तो शीघ्र मिलता है, मन्दलोचन नक्षत्र में गई हो तो

मयत्न से मिले, पञ्चलोचन में दूर सुनाई पड़े, और सुलोचन में गई हुई वस्तु कहाँ है यह सुनाई न पड़े ॥ ४७ ॥

मूल नक्षत्र (मदीय पद्यम्)-

पौष्णाश्विनी मघासार्प पुरुहूताख्यभानि तु ।
मूलं हि तर्क नक्षत्रं मूलाख्यमेषु च ॥
उत्पन्नानां कुमाराणामनिष्टानि भवन्ति च ॥ ४८ ॥

भा० टी०–१ रेवती, २ अश्विनी, ३ मघा, ४ श्लेषा, ५ ज्येष्ठा, ६ मूल ये छ नक्षत्र मूल संज्ञक हैं इन नक्षत्रों में बालक उत्पन्न होय तो अनिष्टकारक होता है । इसलिये उसकी शान्ति अवश्य करनी चाहिये ॥ ४८ ॥

पञ्चकम् (मदीयपद्यम्)-

भानि पञ्च धनिष्ठातः पञ्चकं किल कीर्त्यते ।
पञ्चके याम्य गमनं वर्जयेद् गृहछादनम् ॥ ४९ ॥
स्तंभोछ्रायं प्रेतदाहं तृणकाष्ठादि संग्रहम् ।
सज्जानिर्माणकं कुम्भे मीने चन्द्रे स्थिते त्यजेत् ॥ ५० ॥

भा० टी०–धनिष्ठा से पांच नक्षत्रको पंचक कहते हैं, पंचक में दक्षिणदिशा की यात्रा न करे और गृह न छावे । स्तंभस्थापित न करे न मुरदा जलावे, तृणकाष्ठादिको एकत्र न करे, सज्जा (चारपाई, पलंग) न बनवावे जब कुम्भ मीनके चन्द्रमा रहें । किसी के मत से श्रवण से छ नक्षत्र पंचक, किसी के मत से धनिष्ठा से ५ नक्षत्र, किसी के मत से आधे धनिष्ठा के बाद से ४॥ नक्षत्र को ही पंचक संज्ञा कहे हैं ॥ ४९-५० ॥

स्वामितिथ्यंशाः दिवारात्रि पञ्चदशमुहूर्ताः ।

शिवोऽहि मैत्र पितरो वस्वम्भो विश्ववेधसः ।
विधि रिन्द्रोऽथशक्राग्नि रक्षोऽब्धीशोर्यमा भगः ॥ ५१ ॥
मुहूर्तेशा इति प्रोक्ता दिवा पञ्चदशेक्रमात् ।
मुहूर्ता रजनौ शम्भु रजैकचरणान्त्ययः ॥ ५२ ॥
दास्रात्पञ्चादिति र्जीवो विष्णवर्कौत्त्वमारुतौ ।
दिनमानस्य तिथ्यंशो रात्रे रपि मुहूर्तकः ॥ ५३ ॥

भा० टी०-शिव, सर्प, मित्र, पितर, वसु, जल, विश्वेदेव, ब्रह्मा, इंद्र, इन्द्राग्नि, राक्षस, वरुण, अर्यमा, भग, ये दिनके १५ मुहूर्तों के स्वामी हैं। शिव, अजपाद्, अहिर्बुध्न्य, पूषा, अश्विनी कुमार से पांच (दास, यम, अग्नि, विधि, चन्द्र) अदिती, गुरु, विष्णु, सूर्य, तक्ष, वायु, ये रात्रिके १५ मुहूर्त हैं। दिनमान का १५ वां अंश पर्यन्त दिनका एक मुहूर्त होता है और रात्रिमान का १५ वाँ अंश रात्रि का एक मुहूर्त होता है, दिन ३० दंड पूरा रहता है तब तो "मुहूर्तोघटिकाद्वयं" के अनुसार दो घटीका एक मुहूर्त होता है। और दिनमान के न्यूनाधिक होने पर दिन रात्रि दोनों के मान में १५ का भाग देने से एक मुहूर्त मिलेगा ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

प्रयोजनम् (मदीयवृत्तम्)-

यस्मिन्नृक्षेहि यत्कर्म कथितं निखिलं च यत्।
तद्दैवत्ये तन्मुहूर्ते कार्यं यात्रादिकं सदा ॥ ५४ ॥

भा० टी०-जिस नक्षत्र में जो कार्य कहा है, वह सम्पूर्ण कार्य यात्रा आदि उसके स्वामी के तिथ्यंश में करना शुभ है, दिनमें ३ रे, रात्रि में ५-६-११-१३ ये मुहूर्त में यात्रा शुभ होती है, इसी प्रकार अन्यविषयोंको भी विचार करे॥५४॥

विष्कम्भादि योग ज्ञानम् (मदीय पद्यम्)

यन्नक्षत्रे स्थितश्चन्द्रो यन्नक्षत्रे दिवाकरः।
द्वयोर्योगेत्यजेदेकं योगा विष्कम्भकादिका ॥ ५५ ॥

भा० टी०-जिस नक्षत्र के चन्द्रमा हो और जिस नक्षत्र के सूर्य हो उन दोनो की संख्या एकत्र जोड़ उसमें १ घटाने से विष्कंभादि योग होते हैं। जैसे अश्विनी के सूर्यमें पुष्य के चन्द्रमा है तो सूर्य नक्षत्र की संख्या १ चन्द्र नक्षत्रकी संख्या ८ है दोनों को जोड़ा तो ९ हुआ इसमें १ हीन किया तो ८ बचे अतः विष्कंभादि में ८ वां योग धृति हुआ, इसी प्रकार सब जाने। जहाँ जोड़नेसे २७ से अधिक हो जाय, वहाँ २७ से शोधित कर लेय ॥ ५५ ॥

विष्कम्भादियोगाः।

विष्कभः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्यः शोभनाभिधः।
अतिगण्डः सुकर्माख्यो धृतिशूलाभिधानकः ॥ ५६ ॥

गण्डो वृद्धिः ध्रुवश्चाथ व्याघातो हर्षणाढ्यः ।
वज्र सिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः ॥ ५७ ॥
सिद्धि साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्मा चैन्द्रोऽथ वैधृतिः ।
योगानां ज्ञेयमेतेषां स्वनाम सदृशं फलम् ॥ ५८ ॥

भा० टी०—विष्कम्भ १, प्रीति २, आयुष्मान् ३, सौभाग्य ४, शोभन ५, अतिगंड ६, सुकर्मा ७, धृति ८, शूल ९ गंड १० वृद्धि ११, ध्रुव, व्याघात १३, हर्षण १४, वज्र १५, सिद्धि १६, व्यतीपात् १७, वरियान् १८, परिघ १९, शिव २०, सिद्धि २१, साध्य २२, शुभ २३, शुक्ल २४, ब्रह्मा २५, ऐन्द्र २६, वैधृति २७ यह २७ योग अपने २ नाम के समान फल देने वाले हैं॥५६-५८॥

शुभे त्याग योगौ तथा योग परित्याग घट्यः ।

वैधृती व्यतिपाताख्यौ सम्पूर्णौ वर्जयेच्छुभे ।
वज्र विष्कम्भयोश्चैव घटिका त्रय मादिकम् ॥ ५९ ॥
परिघार्धं पञ्चशूले व्याघाते घटिका नव ।
गण्डातिगण्डयोः षट् च हेया सर्वेषु कर्मसु ॥ ६० ॥

भा० टी०—वैधृती व्यतीपात् योग सम्पूर्ण शुभ कार्य में वर्जित हैं, वज्र विष्कंभ योग के आदि की तीन घटी त्याज्य है, परिघ आधा परित्याग है, शूल-योग का ५ घटी, व्याघात का ९ घटी, गंड अतिगंड का ६ घटी सब कार्यों में वर्जित है ॥ ५९—६० ॥

करणानि (तंत्रदर्पणस्थे)-

करणानि* चराख्यानि बव बालव कौलवम् ।
तैतिल गर वाणिज्ये विष्टिरेतानि सप्त च ॥ ६१ ॥
गताश्च तिथयो द्वाभ्यां निघ्नाशुक्लादितः क्रमात् ।
बवाख्य करणं पूर्वे ज्ञेयं सैकं परेदले ॥ ६२ ॥

---

* पंचमी को करण जानना है, तो गत तिथि चतुर्थी हुई । वर्तमान तिथि के [illegible] तिथि की पूर्वा, पके [illegible] । [illegible] करणम् से ठीक होता है। इसी प्रकार सब जाने ।

परे कृष्णचतुर्दश्यांदले च शकुनि र्भवेत् ।
दर्शे चतुष्पदं नागं पूर्वापर विभागयोः ॥ ६३ ॥
शुक्लं प्रतिपदः पूर्वे दले किंस्तुघ्न संज्ञकम् ।
एतेषां करणानां हि चतुष्कं स्थिर संज्ञकम् ॥ ६४ ॥

भा० टी०—बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि ये ७ चर संज्ञक करण हैं । गत तिथिके दूना करने पर जो अंक हो, वह शुक्लादि से बव आदि करण जाने और पर दलमें १ और मिलाने से करण ज्ञान होता है कृष्णपक्षकी चतुर्दशी के पर दल में शकुनी, अमावस के पूर्व दल में चतुष्पद, पर दलमें नाग, और शुक्ल पक्ष की परवा के पूर्व दलमें बव करण होता है। इन चार करणों का स्थिर संज्ञा है ॥ ६१–६४ ॥

भद्रा ज्ञानम् (मु० चि०)-

शुक्लेपूर्वार्द्धेऽष्टमी पञ्चदश्यो र्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे ।
कृष्णेऽन्त्यार्धेस्यात्तृतीया दशम्यो पूर्वेभागेसप्तमी शम्भुतिथ्योः ६५

भा० टी०—भद्रा शुक्ल पक्ष में अष्टमी पूर्णिमा को पूर्वार्ध में, एकादशी चतुर्थी को परार्ध में होती है, कृष्णपक्ष में तीज दशमी को परार्ध में और सप्तमी चतुर्दशी को पूर्वार्ध में होती है * ॥ ६५ ॥

भद्रानिवासः (मु० चि०)-

कुम्भ कर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात्त्रयेऽलिगे ।
स्त्रीधनुर्जूकनक्रेऽधो भद्रातत्रैव तत्फलम् ॥ ६६ ॥

भा० टी०—कुंभ, मीन, कर्क, सिंह, इन राशियों के चन्द्रमा में भद्रा मृत्युलोक में । मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिक राशि के चन्द्रमा में स्वर्ग में । और कन्या, धन, तुला, मकर राशि के चन्द्रमा में पाताल लोक में रहती है । जिस लोक में भद्रा का वास रहता है वहीं शुभ अशुभ फल होता है ॥ ६६ ॥

तिथिः करणं च (ब्रह्मोवृत्तम्)-

स्वर्गस्थोर्ध्वमुखी भद्रा पातालस्थाप्यधोमुखी ।

---

*भद्रा पूर्वं चतुर्दश्यामष्टम्यां हि पञ्चके । [illegible] हि [illegible] । [illegible] । [illegible] बोधो [illegible] ।

सन्मुखेमर्त्य लोकस्था मृत्यु दात्री हि सन्मुखे ॥ ६७ ॥

भा० टी०—भद्रा का निवास स्वर्ग में रहता है तो उसका ऊपर को ओर मुख, पाताल में नीचे की ओर, मृत्युलोक में सन्मुख मुख रहता है, सन्मुख मुख रहने से मृत्यु करती है ॥ ६७ ॥

भद्रा मुख फलम्।

भद्रामुखेषु यो याति क्रोशमेकन्तु नोत्तरम्।
पुनरागमनं नास्ति सागरात्सरितो यथा ॥ ६८ ॥

भा० टी०—भद्रा के मुख में गमन करने वाला एक कोश से अधिक नहीं जाता है और फिर जिस प्रकार नदी समुद्र में जाकर नहीं लौटती, उसी प्रकार वह भी फिर लौट कर नहीं आता है ॥ ६८ ॥

आवश्यके भद्रापरिहारः।

तिथेः पूर्वार्धजा रात्रौ दिने भद्रा परार्धजा।
भद्रादोषो न तत्रस्यात् कार्येत्यावश्यके सति ॥ ६९ ॥

भा टी०—तिथि के पूर्वार्द्ध की भद्रा रात्रि में और तिथि के परार्द्ध की भ दिन में होती है अतः अत्यावश्यक कार्य में भद्रा का दोष नहीं होता है ॥ ६९

भद्रामुख पुच्छविभागः (मु० चि०)-

पञ्चदपदिकृताष्टरामरसभूयामादि घट्यः शरा,
वृष्टेरास्यमसद्गजेन्दुरसरामाद्यश्विबाणाब्धिषु ॥
याम्येष्वन्त्यघटीत्रयं शुभकरं पुच्छं तथावासरे,
विष्टिस्तिथ्य परार्धजा शुभकरी रात्रौ च पूर्वार्धजा ॥७०॥

भा० टी०—शुक्लपक्ष में ४।८।११।१५ तिथि में और कृष्णपक्ष में इन तिथियों के पूर्व २ की ३।७।१०।१४ तिथि में भद्रा होती है, चतुर्थ्यादि तिथियों के ५।२।७।४।८।३।६।१ इन प्रहरों * में क्रम से भद्रा † का मुख आदिमें ५ घड़ी

* तिथिमान के आठवें भाग का प्रहर कहते हैं। † भद्रा का अङ्ग विभाग इस प्रकार है कि ५ घड़ी मुख, १ घड़ी गला, ११ घड़ी हृदय, ४ घड़ी नाभि, ६ घड़ी कटि, ३ घड़ी पुच्छ। दैत्यों के [illegible] पराजय होने पर शंकरजी के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] दैत्यों का संहार किया [illegible] [illegible] देवताओं ने भद्रा नाम धरा।

रहती है। जैसे चतुर्थी के ५वें महर के आदि में ५ घटी, अष्टमी के २ रे महर के आदि में ५ घटी, एकादशी के ७वें महर के आदि में ५ घटी, पूर्णिमा के चौथे महर के आदि में ५ घटी, तृतीया के ८वें महर के आदि में ५ घटी, सप्तमी के ३रे महर के आदि में ५ घटी, दशमी के ६वें महर के आदि में ५ घटी, और चतुर्दशी के प्रथम महर के आदि में ५ घटी भद्रा का मुख होता है, यह अत्यन्त दूषित है। और चतुर्थी के ८वें, अष्टमी के १ले, एकादशी के छठें, पूर्णिमा के ३रे, तृतीया के ७वें, सप्तमी के दूसरे, दशमी के पाँचवें चतुर्दशी के चौथे महर के अन्त में तीन घटी पुच्छ संज्ञक होती है, भद्रा का पुच्छ दुष्ट नहीं होता है शुभ कार्य में माह्य है। तिथि के उत्तरार्ध की भद्रा दिन में और पूर्वार्ध की रात्रि में शुभ होती है ॥ ७० ॥

कार्यं परत्वेन भद्रायां शुभत्वम् (संग्रहे)-

युद्धे भूपतिदर्शने भयवने घाते च पाते हठे,
वैद्यस्यागमने जलप्रतरणे शत्रोस्तथोच्चाटने।
सिंहोष्ट्रे खरमाहिषाजमृगके चाश्वे गृहपातने,
स्त्री सेवा ऋतुमज्जनेषु सकटे भद्रा सदा सौख्यदा ॥७१॥

भा० टी०–युद्ध, राजदर्शन, घात, पाठ, हठ, वैद्यागमन, जल में तैरना, शत्रु उचाटन, सिंह-ऊँट-गदहा भैंस-बकरी मृगा-घोड़ा को घर में लाने पर और स्त्री सेवा, ऋतु स्नान, और गाड़ी चलाना ये सब कार्य भद्रा म करने से सुख होता है ॥ ७१ ॥

नामपदचमानुसारेण नक्षत्र चरणाः (मु० ग०)-

अश्विनी तु चू चे चो ला, ली लू ले लो भरण्यपि।
कृत्तिका स्याद् अ ई उ ए, रोहिण्यो वा वी वू स्मृता ॥७२॥
वे वो का की मृगश्चार्द्रा, कू घ ङ छाः प्रकीर्तिताः।
के को हा ही पुनर्भस्यात्, हु हे हो डा च पुष्यभम् ॥ ७३ ॥
आश्लेषा तु डी डू डे डो, मा मी मू मे मघाह्वयम्।
मो टा टी टू तु पूर्वाख्या, टे टो पा पी च उत्तरा ॥ ७४ ॥
प्रोक्तः पू ष ण ठो हस्तः, पे पो रा री तु चित्रका।

यदि नाम्नि भवेद्वर्णः संयुक्ताक्षर लक्षणः।
ग्राह्यस्तदादिमोवर्ण इत्युक्तं ब्रह्मयामले ॥ ८० ॥

भा० टी०— नाम के आदि में संयुक्ताक्षर हो तो संयुक्त अक्षर जानने के लिये प्रथम अक्षर का ग्रहण करे (जैसे श्रीधर में शी, प्रद्युम्न में प, ज्ञाननाथ में ग, क्षत्रियनाथ में क इत्यादि) ॥ ८० ॥

अनुक्तत्वा ऋकारस्य रेफोग्राह्यो विचक्षणैः।
ऋद्धिदेवस्य नक्षत्रं यथा त्वाष्ट्रं भवेत् किल ॥ ८१ ॥

भा० टी०—शतपद चक्र में ऋकार नहीं कहा है अतः ऋकार के जगह रेफ का ग्रहण करे। जैसे ऋद्धिनाथ नाम का नक्षत्र चित्रा है ॥ ८१ ॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ दो द्वौ मिथःसमौ।
ब वौ श सौ ख षौ चैव ज्ञेयौ दैव विदा समौ ॥ ८२ ॥

भा० टी०—शतपद चक्र में अकार आकार समान है, इकार ईकार समान हैं, उकार ऊकार बराबर हैं, एकार ऐकार तुल्य है, ओकार औकार सदृश है, बकार वकार सदृश है, शकार सकार समान है, खकार षकार समान है ॥ ८२ ॥

राशिनिर्णयः (मदीयपद्यम्)-

खरास्त्रैर्विकलाभिस्तु कलासंज्ञा प्रकीर्तिता।
षष्ट्या कलाभिरंशैक स्तत् त्रिंशैराशि रुच्यते ॥ ८३ ॥

भा० टी०-६० विकला का १ कला, ६० कला का १ अंश, ३० अंश की १ राशि होती है, (एक राशि में १०८००० विकला १८०० कला होते हैं, १ राशि मे ६ चरण होते हैं अतः प्रत्येक चरण २०० कला का होता है) ॥८३॥

राशिविभागः (मु० ग०)—

अश्विनी भरणी सर्वा कृत्तिका प्रथमाङ्घ्रिकम्।
मेषः स्यात् कृत्तिकापाद त्रितयं रोहिणी तथा ॥ ८४ ॥
वृषभो मृगपूर्वार्धं तदन्त्यार्धं तथार्द्रभम्।
पादत्रयं पुनर्वस्वो सराशिर्मिथुनाभिधः ॥ ८५ ॥
तदन्त्यांघ्रि स्तथा पुष्यः श्लेषान्त्याकर्कटाभिधः।

रु रे रो ता तथा स्वाती, ती तू ते तो विशाखिका ॥ ७५ ॥
अनुराधा ना नी नू ने, ज्येष्ठा नो या यि यू मता ।
तथा ये यो भा भी मूलं, पूर्वाषाढा भू धा फा ढा ॥ ७६ ॥
भे भो जाज्युत्तराषाढा, जू जे जो खा तथाभिजित् ।
खी खू खे खो श्रवो ज्ञेयो, गा गी गू गे धनिष्ठिका ॥ ७७ ॥
गो सा सी सू शताख्यं तु, पू भा से सो द दी मता ।
उभा दू थ झ ञ ज्ञेया, दे दो चा ची तु रेवती ॥ ७८ ॥

इन श्लोकों का भावार्थ निम्नलिखित चक्र से जानें ।

अ०	भ०	कृ०	रो०	मृ०	आ०	पु०	पु०	श्ले०	म०	पू०	उ०	ह०	चि
चू	ली	अ	ओ	वे	कु	के	हु	डी	मा	मो	टे	पू	पे
चे	लू	ई.	वा	वो	घ	को	हे	डू	मी	टा	टो	ष	पो
चो	ले	उ	वी	का	ङ	हा	हो	डे	मू	टी	पा	ण	रा
ला	लो	ए	वू	की	छ	ही	डा	डो	मे	टू	पी	ठ	री

स्वा०	वि०	अ०	ज्ये०	मू०	पू०	उ०	अ०	श्र०	ध०	श.	पू०	उ०	रे०
रू	ती	ना	नो	ये	भू	भे	जू	खी	गा	गो	से	दू	दे
रे	तू	नी	या	यो	धा	भो	जे	खू	गी	सा	सो	थ	दो
रो	ते	नू	यी	भा	फा	जा	जो	खे	गू	सी	दा	झ	चा
ता	तो	ने	यू	भी	ढा	जी	खा	खो	गे	सू	दी	ञ	ची

नामकरणप्रकारः (नक्षत्रे)-

न प्रोक्ता ङ ञ णा वर्णाः नामादौ सन्ति नैव हि ।
चेद् भवन्ति तदा ज्ञेया गजडास्ते यथाक्रमम् ॥ ७९ ॥

भा० टी०-जिस नक्षत्र के जिस चरण में जन्म हो वही वर्ण मनुष्य के नाम के आदि में होना चाहिये, नाम के आदि में ङ, ञ, ण नहीं हो सकते हैं अतः इन के यदि पहले चरण में जन्म हो तो उनके स्थान पर ग, ज, ड क्रमशः करके नाम धरे ॥ ७९ ॥

मघापूर्वोत्तराद्याङ्घ्रि सिंहस्तच्चरणत्रयम् ॥ ८६ ॥
हस्तश्चित्रार्धं पूर्वार्धं कन्याचित्रोत्तरं दलम् ।
स्वातिभं च विशाखाद्य चरणत्रितयं तुला ॥ ८७ ॥
तदन्त्याङ्घ्र्यनुराधाख्ये ज्येष्ठभं वृश्चिकस्मृतः ।
मूलं पूर्वोत्तराषाढा प्रागङ्घ्रि कथितो धनुः ॥ ८८ ॥
उत्तराङ्घ्रित्रयंकरणो धनिष्ठा प्रथमंदलम् ।
मकराख्यो धनिष्ठान्त्यं दलं च शततारका ॥ ८९ ॥
पूभा पादत्रयं कुम्भः तदन्त्यश्चरणस्तथा ।
उभा च रेवती चैव मीनराशिः प्रकीर्तिता ॥ ९० ॥

भा० टी०–अश्विनी भरणी संपूर्ण कृत्तिका एक चरण इन नव चरण से मे
राशि हुई, कृत्तिका के दूसरे चरण से लेकर ३ चरण रोहिणी संपूर्ण औ
मृगशिरा के पूर्व का दो चरण मिलकर वृष राशि हुई, मृगशिरा के आगे
बाद दो चरण आर्द्रा सम्पूर्ण पुनर्वसु के ३ चरण से मिथुन राशि हुई, पुनर्वसु
अन्त्य का १ चरण और पुष्य तथा श्लेषा संपूर्ण मिलकर कर्कराशि हुई। म
पूर्वा फाल्गुनी संपूर्ण उत्तरा फाल्गुनी का पहला चरण मिलकर सिंहराशि हु
उत्तराफाल्गुनीके तीन चरण हस्त सम्पूर्ण चित्राके पूर्व का दो चरण मिलकर कन्
राशि हुई, चित्रा का उत्तरार्ध स्वाती संपूर्ण विशाखा के आरंभ से ३ चरणं मि
कर तुलाराशि हुई, विशाखा के अन्त का १ चरण अनुराधा और ज्येष्ठा संपू
मिलकर वृश्चिक राशि हुई। मूल पूर्वाषाढ संपूर्ण उत्तराषाढ़का पहला चरण मिल
कर धन राशि हुई, उत्तराषाढ़ का ३ चरण श्रवण सम्पूर्ण धनिष्ठा के
आरंभ से २ चरण मिलने से मकर राशि हुई, धनिष्ठा का शेष दो चरण शत
भिष सम्पूर्ण पूर्वभाद्रपदका ३ चरण मिलनेसे कुम्भराशि हुई, पूर्व भाद्रपदके अन्त्यका
१ चरण उत्तराभाद्र पद और रेवती के संपूर्ण चरण मिलने से मीन राशि होती
है। इन राशियों पर सूर्यादिग्रह रहते हैं नव चरण में ग्रहों के ३० अंश व्यतीत
होते हैं प्रत्येक चरण में ३ अंश २० कला बीतता है ॥ ८४-९० ॥

राशयः (मु० ग०)–

मेषो वृषोऽथ मिथुनः कर्कटः सिंहकन्यका ।

तुला च वृश्चिको चापः मकरः कुम्भमीनकौ ॥ ६१ ॥
राशयस्तु क्रमादेते पुंस्त्रियौ क्रूर सौम्यकौ ।
ज्ञेयश्चरःस्थिरश्चैव द्विस्वभावः क्रमात्पुनः ॥ ६२ ॥

भा० टी०—मेष १, वृष २, मिथुन ३, कर्क ४, सिंह ५, कन्या ६, तुला ७, वृश्चिक ८, धन ९, मकर १०, कुम्भ ११, मीन ये १२ राशि हैं इनमें एक पुरुष, एक स्त्री इस क्रमसे सब हैं और १ क्रूर, १ सौम्य इस प्रकार सब है (विषमराशि सब पुरुष तथा क्रूर संज्ञक हैं और स्त्री राशि सौम्य सब हैं । मेषादि राशि का चर * स्थिरद्विस्वभाव संज्ञा है ॥ ६१।६२ ॥

राशीशनिर्णयः (नंमद नर्मदस्ये)—

सिंहादिषट्कस्य पति र्दिनेशः कर्कादि षट्कस्यपति र्निशेशः ।
ताभ्यां प्रदत्तं च कुजादिकेभ्यः एकैकमस्यादि ग्रहाधिपास्ते ॥६३॥

मेषादिराशियों में से सिंहादि छः राशि के स्वामी सूर्य और कर्कादि पृष्ट भाग के छ राशिके मालिक चन्द्रमा हैं मंगलादि मद सूर्य चन्द्रमा से एकदौना है उन दोनों ग्रहों ने एक एक गृह सब ग्रहों को दिया है इसीसे कुमारादिकों के दो दो गृह होगया है ॥ ६३ ॥

राशीशाः (नारदः)—

सिंहस्याधिपति र्भानुश्चन्द्रः कर्कटकेश्वरः ।
मेषवृश्चिकयोर्भौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः ॥ ६४ ॥
धनुर्मीनयोर्देवेज्यः शुक्रोवृषतुलेश्वरः ।
शनिर्मकर कुम्भेश इत्येते राशि नायकाः ॥ ६५ ॥

---

*-चन्द्रमा की चर राशि स्थिर है, मंगल शुक्र शनि की एक राशि चर एक स्थिर है, परन्तु बुध गुरुकी दो राशि द्विस्वभाव है द्विस्वभाव होने का कारण यह है कि "पीयूष पाने हि जनार्दनेन छिन्नो हतो राहु [illegible] यदा । तदा [illegible] [illegible] तो लोकिनो हाथ [illegible] का समुद्र से निकले हुए अमृत के बाँटने के समय जब राहु को नारायण ने दो टुकड़ा किया तब से वह दो रूप होकर राहु केतु नाम से विख्यात हुआ । उन दोनों का हाथ के [illegible] बृहस्पति तथा बुध अपने हाथ से प्रसन्न किये, अतः राहु का कन्या एवं मिथुन तथा केतु का [illegible] धन उच्च हुआ ।

भा० टी०—सिंहका स्वामी सूर्य, कर्कका चन्द्रमा, मेप वृश्चिकका मंगल, मिथुन कन्या का बुध, धनमीन का गुरु, वृप तुलाका शुक्र और मकर कुम्भ का पति शनि है इस प्रकार राशि का स्वामी जाने ॥ ६४–६५ ॥

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु	मी०	राशि
पुरुष	स्त्री	पुरु०	स्त्री	पुरु०	स्त्री०	पुरु०	स्त्री०	पुरु०	स्त्री०	पुरु	स्त्री	पु०स्त्री० संज्ञा
क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रू	सौम्य	क्रूरसौ०
चर	स्थिर	द्वि०	च०	स्थिर	द्वि०	च०	स्थिर	द्वि०	च०	स्थि	द्वि०	चरादि संज्ञा
मं०	शु०	बु०	चं०	सू०	बु०	शु०	मं०	वृ०	श०	श	वृ०	राशीश

चन्द्र राशि विचारमाह (संग्रह सर्वस्वे)—

आद्यश्चन्द्रः श्रियं कुर्यान्मनस्तोषंद्वितीयके ।
तृतीये धन सम्पत्तिं चतुर्थेकलहागमम् ॥ ९६ ॥
पंचमे ज्ञानवृद्धिं च षष्ठे सम्पत्तिमुत्तमाम ।
सप्तमे राजसम्मान मष्टमे प्राणसंशयः ॥ ९७ ॥
नवमे धर्मलाभं च दशमे मानसेप्सितम् ।
एकादशे सर्वलाभं द्वादशे हानि मेव च ॥ ९८ ॥
स्वीयराशौ स्वोचराशौ श्रेष्ठं चन्द्रबलं तथा ।
कृष्ण पक्षे द्वितीयस्तु पंचमे नवमेऽशुभः ॥ ९९ ॥

भा० टी०—जन्म राशि का चन्द्रमा लक्ष्मी को देती है, द्वितीय राशिका संतोष, तृतीय राशि का धन संचि, चतुर्थ राशिका कलह, पंचम राशिका ज्ञान को वृद्धि, षष्ठराशिका उत्तम संपति, सप्तमराशिका राज सम्मान, अष्टम राशि का प्राण नाशक, नवम राशिका धर्म लाभ दशम राशिका मनोरथ सिद्धि, एकादश राशिका सर्व प्रकार का लाभ, और बारहवीं* राशिका चन्द्रमा हानि करता है। अपनी राशि ४ का अपनी उच्च राशि २ का चंद्रमा पला और शुभ देने वाला है, कृष्ण पक्षमें २।५।९ का चन्द्रमा अशुभ होता है ॥ ९६–९९ ॥

*—मतिरेकं निषेकं च आशनं प्रतवन्धने। पाणिग्रहे प्रयाणे च चन्द्रोद्वादशगःशुभः॥

जन्मर्क्षे चन्द्रे विशेषः (मदीय पद्यम्)—

सर्व कर्मसु जन्मर्क्षे स्थितः चन्द्रः शुभप्रदः ।
पथे चौरे च भैषज्ये संग्रामे वर्जयेत्सदा ॥ १०० ॥

जन्म नक्षत्र का चन्द्रमा सब कार्य में शुभ देने वाला है परन्तु यात्रा, चौर औषध सेवन, संग्राम में वर्जित है ॥ १०० ॥

चन्द्रवासः (संग्रहे)—

मेषे च सिंहे धन पूर्वभागे वृषेतुलायां मकरे च याम्ये ।
कुम्भे तुलायां मिथुने प्रतीच्यां कर्कालिमीने दिशिचोत्तरायाम्

भा० टी०—मेष सिंह धन राशिका चन्द्रमा पूर्व, वृष कन्या मकर का दक्षिण, मिथुन तुला कुम्भका पश्चिम, और कर्क वृश्चिक मीन का उत्तर रहता है (ये लग्न भी इस प्रकार चारों दिशामें रहती है) ॥ १०१ ॥

चन्द्रवर्णं तत्फलं च (संग्रह सर्वत्रये)—

रक्तो मेषसिंहेऽरुणो युद्धकारी
सितो गो वणिक् कर्कटेषु सिद्धये ।
धनुर्मीनयुग्मेषु पीतः शशी श्रीः
मृगः स्त्री घटाख्येषु कृष्णो भयञ्च ॥ १०२ ॥

भा० टी०—मेष, सिंह, वृश्चिक राशिका चन्द्र लाल रंगका युद्ध करने वाला है। वृष, कर्क, तुलाका सफेद कार्य सिद्धि करने वाला है। मिथुन, धन, मीनका पीला लक्ष्मी देने वाला होता है। कन्या, मकर, कुम्भ का काला रंगका भय देने वाला है ॥ १०२ ॥

चन्द्र निवास लोक निर्णयः तत्फलञ्च (सं० प्र०)—

तिथिं पञ्चगुणी कृत्वा एकेन च समन्वितम्
त्रिभिश्चैव हरेद्भागं शेषे चन्द्रं विचारयेत् ॥ १०३ ॥
एकेन वसते स्वर्गे द्विके पातालमेव च ।
तृतीये वसते मर्त्ये सर्व कर्माणि कारयेत् ॥ १०४ ॥
पातालस्थो यदा चन्द्रः षट् कर्माणि विवर्जयेत् ।
गृह होम कृषी यात्रा तडागे कूप कर्मणि ॥ १०५ ॥

भा० टी०—तिथि को ५ से गुणा कर उसमें १ और भी मिला दे ३ का भाग देने से १ शेष बचे तो स्वर्ग में, २ शेष में पाताल में, ३ शेष में मर्त्यलोक में चन्द्रमा रहता है १ । ४ । ७ । १० । १३ तिथियों में मर्त्यलोक में, २ । ५ । ८ । ११ । १४ तिथियों में पाताल में ३ । ६ । ९ । १२ । १५ तिथियों में स्वर्गलोक में चन्द्रमा का वास रहता है) पाताल चन्द्र रहने पर गृह, वन, खेत का जोतना, बोना, यात्रा, तालाव, कूप का खनना ये छः कर्म त्याग हैं ॥ १०३-१०४-१०५ ॥

घातचन्द्रनिर्णयः (संग्र० सर्व०)–

मेष कन्या घटहरि नक्रयुग्म धनुर्वृषाः ।
मीनसिंह धनुःकुंभा घातचन्द्रा अजादितः ॥ १०६ ॥

भा० टी०—मेष आदि राशिवालों को क्रम से १।६।११।५।१०।३।६।२। १२।५।६। इन राशियों पर चन्द्रमा रहने पर घातचन्द्र होते हैं ॥ १०६ ॥

कृष्णपक्षेताराबलवती (रत्नमा०)–

न खलु बहुल पक्षे शीतरश्मेःप्रभावः
कथितमिहाहि तारा वीर्यमार्ये प्रधानम् ।
अतिविकल शरीरे प्रेयसि प्रोषिते वा
प्रभवति खलुकर्तुं सर्वकार्याणि योषा ॥ १०७ ॥

भा० टी०—कृष्णपक्ष में चन्द्रमा का प्रभाव नहीं होता है, इसमें ताराबल की प्रधानता विद्वानों ने कही है । जैसे पुरुष की विकलता में या अनुपस्थिति में गृह का सर्वकार्य का विचार व्यवहार स्त्री के ही द्वारा होता है ॥ १०७ ॥

ताराज्ञानं दुष्ट तारा तत्परिहारं च (मु०मञ्जी०)–

अथोजन्म सम्पद्विपत् क्षेम सञ्ज्ञा ।
अरिसाधिका मृत्यु मैत्रातिमैत्र्याः ।
जनुर्भाद् त्रिरावर्त्य ताराश्चस्त्र
त्रिपञ्चप्रशस्ता न मध्यादिमास्यात् ॥ १०८ ॥
त्रिकोणोच सन्मित्र वर्गेस्ववर्गे
विधौशोभने दुष्ट ताराप्रिशस्ता ।

तृतीयेस्त्रिज्ञाःपर्ययेताः शुभा
नो द्वितीये क्रमादाद्यतूर्यत्रिभागे ॥ १०६ ॥

भा०टी०—मनुष्य के जन्म के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक तीन चार तारा गिने तो जन्म, संपत, विपद्, क्षेम, प्रत्यरि, साधिका, मृत्यु, मैत्र, अतिमैत्र संज्ञावाली होती है। तिसमें ३रा, ५वां, ७वां प्रथमा तथा द्वितीयावृत्ति की अच्छी नहीं है, तृतीयावृत्ति की अच्छी है द्वितीयावृत्ति में भी तृतीय का पहला चरण, पंचम का चौथा चरण, सप्तम का तीसरा चरण अनिष्ट है, त्रिकोण (५।९) में उच्चराशि मित्र वर्ग स्ववर्ग में चन्द्रमा के होने से दुष्ट तारा भी शुभ होती है ॥१०८॥१०९॥

दुष्ट तारादानं।

तिलानां सुवर्णस्य दानं मृतौ स्यादथो प्रत्यरौ क्षारदानं विदध्यात्।
त्रिजन्माख्यतारासुशाकं प्रदद्याद्विपत्तौ गुडं शान्तये दानमाहुः ॥

भा० टी०—मृत्यु तारा में तिल सुवर्ण का दान, प्रत्यरि तारा में लवण का दान, तृतीय विपद् तारा में और जन्म*तारामें शाक और गुड का दान शान्ति के निमित्त करके कार्य करे ॥ ११० ॥

आनन्दादि योगाः (मु० चि०)।

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो
धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतुक्रमेण।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरं च
छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ॥ १११ ॥
उत्पातमृत्यू किल काण सिद्धी
शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च।
मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्यः—
प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥ ११२ ॥

भा० टी०—आनंद १, कालदंड २, धूम्र ३, धाता ४, सौम्य ५, ध्वांक्ष ६ केतु ७, श्रीवत्स ८, वज्र ९, मुद्गर १०, छत्र ११, मित्र १२, मानस १३ पद्म १४, लुम्ब १५, उत्पात १६, मृत्यु १७, काण १८, सिद्धि १९, शुभ

* जिन कार्यों में जन्मनक्षत्र त्याग है उनमें केवल [illegible]

अमृत २१, मुसल २२, गद २३, मातंग २४, रत्न २५, चर २६, सुस्थिर २७, प्रवर्धमान २८ ये अट्ठाइस योग अपनेर नामके सदृश फल देते हैं॥१११॥११२॥

आनन्दादियोग प्रकारः (मु० चि०)-

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद् भौमे कराद् बुधे।
मैत्राद् गुरौ भृगौ वैश्वाद् गएया मन्दे च वारुणात् ॥११३॥

भा० टी०—सूर्यवार को अश्विनी से, सोमवार को मृगशिरा से मंगल को श्लेषा से, बुध को हस्त से, बृहस्पति को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ से और शनैश्चर को शतभिषा से दिन नक्षत्र को गिनें, गिनने पर जो संख्या होवे उतने संख्यावाला उस दिन आनंदादि योगों में योग होता है। जैसे कि सोमवार के पुष्य नक्षत्र है तो मृगशिरा से गिनने पर पुष्य चार हुआ अतः उस दिन धाता योग हुआ इसी प्रकार सब जाने ॥ ११३ ॥

आनन्दादि	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	फला
आनन्द	अ.	मृग	श्ले.	हस्त	अनु.	उ. षा.	श.	सिद्धि
कालदंड	भ	आर्द्रा	म.	चि.	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	मृत्यु
धूम्र	कृ.	पुन	पू. फा.	स्वा	मू.	श्र.	उ. भा.	अस
धाता	रो	पुष्य	उ. फा.	वि.	पू. षा.	ध.	रे.	सौभा
सौम्य	मृ.	श्ले.	ह.	अनु	उ. षा.	श.	अश्वि	अतिसु
ध्वांक्ष	आ	म.	चि	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	भ.	अरि
केतु	पुन	पू. फा	स्वा	मू.	श्र.	उ. भा.	कृ.	सौभा
श्रीवत्स	पुष्य	उ.फा	वि.	पू. षा.	ध.	रे.	रो.	सुभ
वज्र	श्ले	ह.	अनु	उ. षा	श.	अश्वि	मृ.	बल
मुद्गर	म	चि.	ज्ये	अभि.	पू. भा.	भ.	आ.	धा
छत्र	पू.	स्वा	मू	श्र.	उ. भा.	कृ.	पुन.	रहि
मित्र	उ.	वि	पू. षा	ध.	रे.	रो.	पुष्य	सौख
मानस	ह.	अनु	उ.षा.	श	अश्वि	मृ.	श्ले	धनप

पद्म	चि	ज्ये.	अभि.	पू. भा	भ.	आर्द्रा	म.	शुभकर्म
लुम्ब	स्वा.	मू.	श्र.	उ भा.	कृ.	पुन	पू. फा.	धनहानि
उत्पात	वि	पू. षा	ध.	रे.	रो	पुष्य	उ फा	प्राणहा०
मृत्यु	अ.	उ. षा.	श.	अश्वि-	मृ.	श्ले	ह.	मृत्यु
काण	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	भ.	आ.	म.	चि.	धनहानि
सिद्धि	मू.	श्र	उ. भा.	कृ	पुन	पू. फा	स्वा	मनो पूर्ण
शुभ	पू.	ध.	रे.	रो.	पुष्य	उ. फा.	वि.	सर्व सौ०
अमृत	उ	श.	अश्वि	मृ.	श्ले.	ह.	अनु	राज स०
मुशल	अ.	पू.	भ.	आर्द्रा	म.	चि.	ज्ये.	मानहानि
गद	श्र	उ.	कृ.	पुन	पू. फा	स्वा.	मू.	रोग
मातंग	ध.	रे.	रो	पुष्य	उ. फा	वि.	पू. षा.	वाहन
रक्ष	श.	अश्वि.	मृ.	श्ले.	ह.	अनु.	उ. षा.	अशुभ
चर	पू.	भ.	आर्द्रा	म.	चि.	ज्ये.	अभि.	कार्यसि०
सुस्थिर	उ.	कृ.	पुन	पू. फा	स्वा.	मू.	श्र.	गृहलाभ
प्रवर्धमान	रे.	रो.	पुष्य	उ फा.	वि.	पू. षा.	ध.	वृद्धि

दुष्टयोगेषु त्याज्य घट्यः (मु० चि०)–

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषु नाड्यो वर्ज्याः वेदाः पद्मलुम्बे गदेऽश्वाः ।
धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं द्वे रक्षो मृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ॥११४॥

भा० टी०–ध्वांक्ष, वज्र, मुद्गर योग में ५ दंड, पद्म, लुम्ब योग में ४ घड़ी, गद में ७ दंड, धूम्र में १ दंड, काण,' मुसल में २ घड़ी और मृत्यु, उत्पात कालयोग का कुल घड़ी सम्पूर्ण शुभ कार्यों में त्याज्य है ॥ ११४ ॥

सूर्य नक्षत्रवशात्दुष्टयोगाः (मु० चि०)–

सूर्यभाद् वेद गोतर्क दिग्विश्व नख सम्मिते ।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसंघविनाशकाः ॥ ११५ ॥

भा० टी०-सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनने पर जो ४, ६, ६, १०, १३, २० संख्या हो तो समस्त दोषों के समूहों के विनाश करनेवाला रवियोग होता है ॥ ११५ ॥

सर्वार्थ सिद्धियोगाः (मु० चि०)-

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं, चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रे ।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं, ज्ञेब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं
शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि
सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥ ११७ ॥

भा० टी०-रविवार को हस्त, मूल, उत्तरा ३, पुष्य, अश्विनी । सोमवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा । मंगल को अश्विनी, उत्तरा फा०, कृत्तिका, श्लेषा । बुध को रोहिणी, अनु०, हस्त, कृत्ति०, मृगशिरा । बृहस्पतिको रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य । शुक्र को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुन०, श्रव० और शनिवार को श्रवण, रोहिणी स्वाती नक्षत्र हो तो पूर्वाचार्यों ने सर्वार्थसिद्धियोग कहा है ॥ ११६ ॥ ११७ ॥

अमृतसिद्धियोगः (रत्नमालायाम्)-

हस्तो रवौ शशधरे च मृगोत्तमर्क्षं
भौमेऽश्विनी बुधदिने च तथानुराधा ।
तिष्यो गुरौ भृगुसुतेऽपि च पौष्णधिष्ण्यं
रोहिण्यथार्कतनयेऽमृतसिद्धियोगाः ॥ ११८ ॥

भा० टी०-सूर्यवार को हस्त, सोमवार को मृगशिरा, मंगल को अश्विनी, बुधवार को अनुराधा, गुरुवार को पुष्य, शुक्रवार को रेवती, और शनिवार को रोहिणी नक्षत्र हो तो अमृतसिद्धियोग होता है ॥ ११८ ॥

यमघंट योगः (संग्रहग्रंथे)-

मघा विशाखा चार्द्रातु मूलाग्नि रोहिणी करः ।
भवन्त्यर्कादिवारेषु यमघण्टो भवेत्तदा ॥ ११६ ॥

भा० टी०–सूर्य्यादि वारों में क्रमसे मघा, विशाखा, आर्द्रा, मूल, कृत्तिका, रोहिणी और हस्त नक्षत्र हो तो यमघंटयोग होता है ॥ ११९ ॥

दग्धयोगः (नारदे)–

यमर्क्षमर्कवारेऽब्जे चित्राभौमे तु विश्वभम् ।
बुधेश्रविष्टार्यम्णार्क्षं गुरोर्ज्येष्ठा भृगोर्दिने ॥ १२० ॥
रेवती शनिवारे तु दग्धयोगा भवन्तमी ।

भा० टी०–रविवार के भरणी, सोमवार के चित्रा, मंगलवार के उत्तराषाढ़, बुधके धनिष्ठा, गुरुवार के उत्तराफाल्गुनि, शुक्रवार के ज्येष्ठा और शनिवार के रेवती हो तो दग्धयोग होता है। इसमें यात्रा और विवाह करने से अशुभ होता है ॥ १२० ॥

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	वारादि
अश्विनी पुष्य उ०३ह० मू० ७	रो०मृ० पुष्य अनु० श्र० ५	अश्वि० कृ०३ले० उ०फा० ४	कृ०रो० मृ०ह० अनु० ५	अश्वि० पु०पुष्य अनु० रे० ५	अश्वि० पु० श्र०अ० रे० ५	रो० स्वा० श्र० ३	सर्वार्थसिद्धियोग
ह०	मृ०	अ०	अनु०	पु०	रे०	रो०	अमृत सिद्धियोग
म०	वि०	आ०	मू०	कृ०	रो०	ह०	यमघंट योग
भ०	चि०	उ०षा०	ध०	उ० फा०	ज्ये०	रे०	दग्धयोग
पू०षा०	धा०	वि०	रो०	पु०	श०	मू०	चर योग
म० ध०	वि० मृ०	आ० ह०	पू०षा० पु०	उ०षा० कृ०	रो० अ०	अ० ध०	यमदंष्ट्र योग

हुताशनादियोगः (मु० ग०)–

द्वादश्यर्के विषो षष्ठी भौमे सप्ताष्टमी बुधे ।
दश शुक्रे शनौ रुद्रा गुरौ नव हुताशनः ॥ १२१ ॥
द्वादश्यर्के विषो रुद्रा भौमे पञ्च बुधेग्नयः ।
गुरौ षष्ठयष्टमी शुक्रे दग्धाख्यो नवमी शनौ ॥ १२२ ॥

चतुर्थेर्के विधौ षष्ठी द्वितीयाज्ञेष्टमी गुरौ ।
नवशुक्रे विषाख्या च सप्तमी कुजमन्दयोः ॥ १२३ ॥
शनौषष्ठी भृगौ सप्ताष्टमीजीवे बुधे नव ।
कुजे दश विधौ रुद्राः क्रकचो द्वादशी रवौ ॥ १२४ ॥
प्रतिपद् ज्ञेरवौ सप्त संवर्तोयोग ईरितः ।
दग्धादींस्तिथिवारोत्थांस्त्यजेद्योगान् शुभे सदा ॥ १२५ ॥

इन श्लोकों का अर्थ चक्र से स्पष्ट ज्ञात होगा ।

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	वारादि
१३	६	७	८	९	१०	११	हुताशन योग
१२	११	५	३	६	८	९	दग्ध योग
४	६	७	२	८	९	७	विषाख्य योग
१२	११	१०	९	८	७	६	क्रकच योग
७	०	०	१	०	०	०	संवर्ताख्य योग
नन्दा	भद्रा	नन्दा	जया	रिक्ता	भद्रा	पूर्णा	मृत्युयोग
०	०	जया	भद्रा	पूर्णा	नन्दा	रिक्ता	सिद्धियोग

कुलिकादि मुहूर्तः (मु० चि०)-

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः ।
वाराद्द्विघ्ने क्रमान्मन्दे बुधे जीवेकुजेक्षणः ॥ १२६ ॥

भा० टी०-कुलिक मुहूर्त * जानने के लिये वर्तमान वारसे शनिवार तक गिनकर दूना करने पर होता है, वर्तमान वारसे बुधवार की जो संख्या हो उसे दूना करने से कालवेला, गुरुकी संख्या को दूना करने से यमघंट और भौम की संख्या को दूना करने से कंटक मुहूर्त होता है ॥ १२३ ॥

* मन्दक दशनागन्तु वेद नेत्रमिताः क्रमात् कुलिकाख्ये त्वेशांसान्वमतः कण्टकं बुधात् । गुरोश्चै कालवेलाख्याः शुक्रान्ते यमघंटकाः । त्यजेदेतान् शुभे कार्ये निशि दंडान् मुहूर्तकान् ।

वारवेला (मु० ग०)-

अर्धयामाः परित्याज्या वेदसप्तद्विपञ्चमाः ।
अष्टत्रिषट्संख्याकाः क्रमतो रविवासरात् ॥ १२७ ॥

भा० टी०-रविवार के चौथे सोम के ७ वें मंगल के २ रे बुध के ५ वें गुरुवार के ८ वें शुक्रवार के ३ रे शनिवार के ६ ठे पहर का आधा पहर वारवेला अर्धयाम होता है यह शुभ कार्य में त्याग है ॥ १२७ ॥

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	वारादि
१४	१२	१०	८	६	४	२	कुलिक
८	६	४	२	१४	१२	१०	कालवेला
१०	८	६	४	२	१४	१२	यमघंट
६	४	२	१४	१२	१०	८	कंटक
४	७	२	५	८	३	६	वारवेला

शून्य तिथयः (मु० ग०)-

चैत्राष्टमी नवम्यौ च वैशाखे द्वादशी तिथिः ।
श्रावणे द्वि तृतीये च भाद्रे भू नेत्र सम्मिते ॥१२८
दशम्येकादशी त्वीपे सप्तम्यष्टौ च मार्गके ।
चतुर्थी पंचमी पौषे शून्यास्ताः पच [illegible]
कार्तिके पञ्चमीकृष्णा तथा शुक्ला [illegible]
आपाढ़े बहुला पष्ठी शुक्लपक्षे तु [illegible]
चतुर्थी फाल्गुने कृष्णा शुक्ल [illegible]
ज्येष्ठे चतुर्दशीकृष्णा शुक्ले [illegible]
कृष्णा तु पञ्चमी माघे [illegible]

भा० टी०-चैत्र की ८ । ९, [illegible]
पद की १ । २, आश्विन की [illegible]

चतुर्थी पंचमी शून्य है, कार्तिक के कृष्ण पक्ष की पंचमी शुक्लपक्ष की चतुर्दशी, आषाढ के कृष्णपक्ष की षष्ठी शुक्ल पक्ष की सप्तमी, फाल्गुन के कृष्णपक्ष की चतुर्थी शुक्लपक्ष की तृतीया, ज्येष्ठ के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी शुक्लपक्ष की त्रयोदशी, माघके कृष्णपक्ष की पंचमी, शुक्लपक्ष की षष्ठी ए तिथियां दोनों पक्षकी शून्य हैं ॥ १२८-१३१ ॥

शून्य नक्षत्राणि (मु० ग०)-

अश्विनी रोहिणी चैत्रे चित्रा स्वाती च माधवे ।
ज्येष्ठे पुष्योत्तरापाढे धनिष्ठा योनिभे शुचौ ॥ १३२ ॥
श्रावणे श्रवणोपाख्या पूर्वाभाद्र पदाश्विने ।
रेवती शतभं भाद्रे कार्तिके कृत्तिका मघा ॥ १३३ ॥
मार्गे चित्रा विशाखा च पौषे त्वार्द्राश्विनी कराः ।
फाल्गुने भरणी ज्येष्ठा माघे मूलं श्रवस्तथा ॥ १३४ ॥
एतानि मास शून्यानि भानि प्रोक्तानि कोविदैः ।

इन श्लोकोंकाभावार्थस्पष्टार्थ है ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥

चैत्रादिमासेषु शून्यराशयः (मु० चि०)-

घटो झषो गौर्मिथुनं मेष कन्यालितौलिनः ।
धनुः कर्को मृगः सिंहः चैत्रादौ शून्यराशयः ॥१३५ ॥

भा० टी०-चैत्रादि मासों में क्रमशः ११ । १२ । २ । ३ । १ । ६ । ८ । ७ । ९ । ४ । १० । ५ शून्य राशि है, अर्थात् चैत्र में कुंभ, वैशाख में मीन, ज्येष्ठ में वृष इत्यादि जाने ॥ १३५ ॥

विषम तिथि दग्ध लग्नानि (मु० चि०)-

पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटेणौ मृगेन्द्रनक्रौ मिथुनाङ्गने च ।
चापेन्दुभे कर्कहरी हयान्त्यौ गोन्त्यौ च नेष्टे तिथिशून्यलग्ने ॥

भा०टी०-पक्षके आदि में विषम १ । ३ । ५ तिथियों में शून्य लग्न कहते हैं अर्थात् प्रतिपदा के तुला-मकर, तृतीया के सिंह-मकर, पंचमी के मिथुन-कन्या, सप्तमी के धन-कर्क, नवमी के कर्क सिंह, एकादशी के धन-मीन, त्रयोदशी के वृष मीन लग्न होता है यह शुभकार्य में वर्जित हैं १३६ ॥

शुभकृत्यावश्यके परिहारः-(मु० चि०)-

तिथयो मास शून्याश्च शून्य लग्नानि यान्यपि।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणि तरेषु तु ॥ १३७ ॥
पंग्वन्धकाण लग्नानि मास शून्याश्च राशयः।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशेन गर्हिताः ॥ १३८ ॥

भा० टी०-जो तिथि शून्य, मास शून्य, लग्न शून्य कहा है इनके निमित्त नारद कहते हैं ये मध्य देशमें वर्ज्य है अन्य देशो में इनका दोष नहीं है। पंगु-अंध-काणा-लग्न * और मास शून्य राशि शून्य गौडदेश, मालवदेश में वर्जित है, अन्य देशों में निन्द्य नहीं है ॥ १३७ ॥ १३८ ॥

अमृत,सिद्धियोगे कुयोग (रामः)-

वर्जयेत्सर्वकार्येषु हस्तार्कं पञ्चमी तिथौ।
भौमाश्विनी च सप्तम्यां षष्ठ्यांचन्द्रेन्दवं तथा ॥ १३९ ॥
बुधानुराधामष्टम्यां दशम्यां भृगुरेवतीम्।
नवम्यां गुरु पुष्यं चैकादश्यां शनि रोहिणी ॥१४०॥

भा० टी०-यदि पंचमी तिथि में हस्त रविवार हो, सप्तमी तिथि में भौम अश्विनी हो, षष्ठी तिथि में मृगशिरा चन्द्रवार हो, अष्टमी तिथि में बुध अनुराधा हो, दशमी तिथि में शुक्रवार रेवती हो, नवमी तिथि में गुरु पुष्य हो, और एकादशी तिथि में शनिवार रोहिणी ये नक्षत्र हों तो सम्पूर्ण कार्य में वर्जित है, नक्षत्र वार के मिलने से अमृत सिद्धि और सर्वार्थसिद्धि योग होता है परन्तु उक्त तिथियों के न मिलने से वह योग नहीं होता किन्तु दूषित योग हो जाता है॥

भौमादिक्न्यादि सर्वार्थसिद्धियोग कार्य विषये त्यागः—

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम्।
भौमाश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ॥१४१॥

---

* घटे तुलाली बधिरौ मृगाद्यौ रात्रौ च सिंहाज मृगादिवान्धाः।
कन्यानृयुक् कर्कटका निशान्धा दिने घटोऽन्त्यो निशिपंगुसंज्ञः ॥ १ ॥
बधिरा धन्वि तुलालयोपराह्णे मिथुनं कर्कट कोऽङ्गना निशान्धाः।
दिवसान्धा हरिगो क्रियास्तु कुब्जा मृगकुम्भान्तिमभाग सन्धयोर्हि ॥२॥

भा० टी०—गृहप्रवेश, यात्रा, और विवाह में क्रमशः भौमाश्विनी, शनि रोहिणी, गुरु पुष्य ए तीनों वर्जित हैं ॥ १४१ ॥

दुष्ट योगों का देशभेदेन परिहार (रामः)—

कुयोगास्तिथि वारोत्था तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूणवङ्गखशेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥ १४२ ॥

भा० टी०—जो तिथि वार से उत्पन्न क्रकच आदि हैं, तिथि नक्षत्र से उत्प "अनुराधाद्वितीयार्या" इत्यादि हैं, और नक्षत्रवार से उत्पन्न "याम्यं त्वाष्ट्र इत्यादि हैं, तिथिवार नक्षत्र तीनों से उत्पन्न "वर्जयेत्सर्वकार्येषु हस्तार्के पञ्च तिथौ" इत्यादि हैं, ये सम्पूर्ण दोष हूण, बंग (बंगाला) खस (उत्तराखंड) वर्जित हैं, अन्य देशों में वर्जित नहीं हैं ॥ १४२ ॥

चन्द्रशुद्धौ मृत्यु क्रकचादियोगापवाद (रामः)—

मृत्यु क्रकच दग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभान्जगुः ।
केचिद्याम्योत्तरे चान्ये यात्रायामेव निन्दितान् ॥१४३॥

भा० टी०—मृत्युयोग, क्रकच (वारदग्ध) योग, दग्धादि "द्वादश्यर्केविशे हुताशन, दग्ध विषाख्ययोगादि जो दुष्ट योग हैं ये चन्द्रमा के शुभ होने प शुभ हो जाते हैं, दुष्टता नहीं करते किन्तु शुभ फल देते हैं, कोई २ कहते हैं ए पहर के बाद ये शुभ होते हैं कोई कहते हैं ये यात्रा ही में वर्जित है अन्यत्र नहीं अर्थात् अन्यत्र जगह शुभ हैं ॥ १४३ ॥

सुयोगे क्रकचादि कुयोग परिहारः ।

अयोगे सुयोगोपिचेत्स्यात्तदानी
मयोगं निहन्त्येष सिद्धिं तनोति ।
परेलग्न शुद्ध्या कुयोगादिनाशं
दिनार्धोत्तरं विष्टि पूर्वं च शस्तम् ॥ १४४ ॥

भा० टी०—अयोग (क्रकच, मृत्यु आदि दुष्ट योग) सुयोग (अमृतसिद्धि सर्वार्थसिद्धि आदि) दोनों अयोग और सुयोग जिस दिन हो उस दिन अयोग (दुष्टयोग) के फल (सुयोग) कार्यसिद्धि को देता है,अन्य आचार्यों का यह मत है कि

लग्न बलवान होतो प्रकम्प, दग्ध, मृत्यु योगादिकों का नाश होता है, और भद्रा व्यतीपात आदि का दोष मध्यान्ह के पूर्व रहता है बाद शुभ*फल हो जाता है ॥

होलिकाष्टकं (रामः)-

विपाशेरावती तीरे शतुद्र्याश्च त्रिपुष्करे।
विवाहादि शुभे नेष्टं होलिकाप्रागदिनाष्टकम् ॥१४५॥

विपाशा, इरावती, शतजल इन नदियों के तट के देशों में और त्रिपुष्कर देश में विवाहादि सब मंगल कार्य में होलिका के पूर्व आठ दिन वर्जित है (इसको होलाष्टक कहते हैं) इन देशों के अतिरिक्त देश में यह त्याग नहीं है ॥ १४५ ॥

सर्व शुभकार्येषु वर्जित विषय (रामः)-

सर्वस्मिन् विधुपापयुक्तनुलवावर्ये निशाह्नोर्घटी।
त्र्यशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम् ॥
उत्पातग्रहतोऽध्यहांश्च शुभदोत्पातैश्च दुष्टं दिनं।
षण्मासं ग्रहभिन्नभं त्यजशुभे योद्धं तथोत्पातभम् ॥१४६॥

भा० टी०—चन्द्रमा तथा पापग्रह (सू० मं० श० रा० के०) से युत लग्न और नवांशक सब शुभ कार्य में त्याज्य हैं । मध्यान्ह और मध्य रात्रि के मध्य एक घटी अभिजित् मुहूर्त श्रेष्ठ होता है,परन्तु इसके ठीक मध्य के घटी त्र्यंश (२०पल) दश पल पूर्व की दश पर भाग की भी त्याग है । सूर्यग्रहण से तीन दिन पहिले और उत्पात (प्रकृति से विरुद्ध हो उसको उत्पात कहते हैं) ग्रहण में मतांतर से सर्व ग्रास में ७ दिन (त्रिभागोन में ६ दिन, अर्ध ग्रास में ४ दिन, चतुर्थांश में ३ दिन, १, २, ३, अंगुल के ग्रास में एक दिन) त्याग है, शुभउत्पात में एक दिन त्याग है, पापग्रह से वेधित नक्षत्र तथा जिस नक्षत्र से ग्रह युद्ध हुआ हो, और जिस नक्षत्र में भयंकर उत्पात हुआ हो ये सब छः महीने पर्यन्त त्याग हैं ॥ १४६ ॥

ग्रासभेदेन ग्रहण नक्षत्र त्याग (रामः)-

नेष्टं ग्रहर्क्षं सकलार्धपाद
ग्रासेक्रमाद् तर्क गुणेन्दुमासान् ।

---

* विष्टिरङ्गारकश्चैव व्यतीपातोऽप्यवैधृती ।
प्रत्यरि जन्मनक्षत्रं मध्याह्नात् परतः शुभः ॥

पूर्वं परस्तादुभयोस्त्रिघस्रा
ग्रस्तेऽस्तगेवाभ्युधितेऽर्धे खंडे ॥ १४७ ॥

भा० टी०-सर्वग्रास ग्रहण हो तो नक्षत्र छः महीने, अर्द्धग्रास में तीन महीने, चौथाई ग्रास में एक महीने वर्जित करे, और ग्रस्तास्त हो तो पहले तीन दि और ग्रस्तोदय हो तो पीछे के ३ दिन अशुभ है और अर्धग्रास में पूर्व क पर के तीन २ दिन, सर्वग्रास में सात दिन त्याग है ॥ १४७ ॥

जन्मराशेः सकाशाद्ग्रहणफलम् (रामः)

जन्मर्क्षे निधनं ग्रहे जनिभतो घातः क्षतिः श्रीर्व्यथा
चिन्ता सौख्य कलत्र दौस्थ्य मृतयः स्युर्माननाशः सुखम्
लाभोऽपाय इति क्रमात्तदशुभध्वस्त्यै जपः स्वर्णगो
दानं शान्तिरथोग्रहं त्वशुभदं नोवीक्ष्य माहुः परे ॥ १४८

भा० टी०-जन्म के नक्षत्र पर ग्रहण हो तो नाश हो, जन्म की राशि हो तो घाव, दूसरी पर हानि, तीसरी पर लक्ष्मी प्राप्ति, चौथीपर पीड़ा, पाँचवीं पुत्र चिन्ता, छठवीं पर सौख्य, सातवीं पर स्त्री कष्ट, आठवीं पर मृत्यु, न पर मानपात, दशवीं पर सुख, ग्यारहवीं पर लाभ, और बारहवीं राशि व्यय यह क्रम से फल जाने, और इस अशुभ के शान्ति के निमित्त जप सु दान गोदान करना उचित है, कोई २ कहते हैं अशुभ ग्रहण को देखना यो नहीं है ॥ १४८ ॥

शुक्रोदयास्त निर्णयः (संग्रह सर्वस्वे)

यमशरास्तु दिनानि च वक्षिणे नयन सप्तदिनान्युशनोऽस्त
गगन बाणयमा दिशि पश्चिमे नवदिनानि भृगुरविमण्ड

भा० टी०-पूर्व में शुक्र जिस दिन उदय होते हैं उस दिन से २५२ तक अर्थात् ८ मास १२ दिन उदय रहते हैं और ७२ दिन अस्त रहते हैं अ २ मास १२ दिन इसके बाद पश्चिम में उदय होते हैं तब २५० दिन उदय कर १०दिनके लिये अस्त होते हैं । फिर पूर्वमें उदय होतेहैं यह मत स्थूल है ; सौर आदि * पाँच ग्रह के उदय अस्त पास्ता के अनुसार टिप्पणी

* पूर्व में मंगल १ वर्ष १०मास,बुध १ मास ६ दिन,गुरु १ वर्ष ८ दिन,श मास १६ दिन, श.में १० मास १८ दिन ये सब ग्रह उदय रहते हैं और बुध १

लिख दिया है वह भी स्थूल विचार है। इसका सूर्यसिद्धान्त, महलाघव, भास्वती आदि में जो केन्द्रांशका नियम लिखा है उसी के अनुसार होता है ॥ १४९ ॥

गुरुशुक्रास्तादिके निषेध वस्तूनि (रामः)

वाप्याराम तडागकूपभवनारम्भप्रतिष्ठे व्रता-
रम्भोत्सर्गे वधूप्रवेशनमहादानानि सोमाष्टके।
गोदानाग्रयणप्रपाप्रथमकोपाकर्म वेदव्रतं
नीलोद्वाहमथातिपन्न शिशुसंस्कारान् सुरस्थापनम् ॥१५०॥
दीक्षामौञ्जि विवाह मुण्डनमपूर्वं देवतीर्थेक्षणं
सन्यासाग्निपरिग्रहो नृपतिसंदर्शाभिषेकौगमम्।
चातुर्मास्यसमाव्रती श्रवणयोर्वेधं परीक्षात्यजेद्
वृद्धत्वास्तशिशुत्व इज्यसितयोर्न्यूनाधिमासे तथा ॥१५१॥

भा० टी०—नवीन बावली, बगैचा, तालाब, कूवाँ, इनके बनाने का आरंभ और प्रतिष्ठा, व्रतका आरंभ और उद्यापन, वधूप्रवेश, महादान, सोमयज्ञ, और अष्टकश्राद्ध गोदान, पवसरा, प्रथमउपाकर्म (श्रावणी) वेदव्रत उपनिषद् व्रत, काम्य वृषोत्सर्ग बालकोंके जातक। संस्कार जिसका मुख्य काल बीत गयाहो, देवताओं का स्थापन, मंत्रग्रहण, यज्ञोपवीत विवाह, मुंडन, प्रथम किसी देवता का अथवा तीर्थ का दर्शन, सन्यास, अग्निहोत्र, राजा का दर्शन, राज्याभिषेक, यात्रा, चातुर्मास्य व्रत, समावर्तन, कर्णछेदन, और दिव्यपरीक्षा, ये कार्य बृहस्पति और शुक्रके वृद्धत्व अस्त और बालत्व में और क्षय तथा अधिक मास में न करे ॥ १५०–१५१ ॥

गुरुशुक्रयो र्बाल्य वार्धक दिन संख्या (रामः)

पुरः पश्चाद्भृगोर्बाल्यं त्रिदशाहं च वार्धकम्।
पक्षं पञ्च दिनं ते द्वे गुरोः पक्षमुदाहृते ॥ १५२ ॥

भा० टी०—शुक्र के पूर्व उदय में ३ दिन पश्चिम उदय में १० दिन बाल्या-

दिन, शुक्र २ मास १८ दिन अस्त रहते हैं। पश्चिम में बुध १ मास, ६ दिन, शुक्र मास १६ दिन उदय रहते हैं। और मंगल ४ मास, बुध १६ दिन, गुरु १ मास २ दिन, शुक्र १० दिन शनि १ मास १२ दिन ये सब ग्रह अस्त रहते हैं।

वस्था रहती है, और पूर्वास्त में १५ दिन, पश्चिमास्त में १५ दिन वृद्धत्व रह है और बृहस्पति १५ दिन बाल और १५ दिन वृद्ध रहता है ॥ १५२ ॥

तथा च (रामः) .

ते दशाहं द्वयो प्रोक्तं कश्चिद् सप्तदिनं परैः ।
त्र्यहं त्वात्ययिकेऽप्यन्यैरर्धाहं च त्र्यहं विधोः ॥ १५३ ॥

भा० टी०—कोई २ आचार्य बृहस्पति शुक्र के उदय अस्त में बाल और वृद्धत्व के दश दश दिन कहते हैं, और किसी ने ७ दिन कहे हैं कोई २ आचार्य आपत्काल में ३ दिन कहे हैं और चन्द्रमा का आधे दिनका बाल्यत्व और तीन दिन का वृद्धत्व कहा है ॥ १५३ ॥

सिंहस्थादि गुरुः दोषः गुर्वादित्य त्रयोदशादिनात्म पक्षस्याशः (मु० चि०)

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थ जीवेवर्ज्यं केचिद्वक्रगेचातिचारे।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपिपक्षे प्रोचुस्तद्वद्दन्त रत्नादि भूषाम्

भा० टी०—जो कार्य गुरु के अस्त में वर्जित हैं वे कार्य सिंह मकर राशि के गुरु में भी वर्जित हैं और कोई २ आचार्य कहते हैं कि जो कार्य गुरु के अस्त में वर्जित हैं वे कार्य वक्र में तथा अतिचार में वर्जित करते हैं, और कोई २ आचार्य * गुर्वादित्य में तथा १३ दिन के पक्ष में भी वर्जित करते हैं और इसी प्रकार दांतों के दांत और रत्न सहित आभूषणों का निर्माण करना भी अशुभ कहा है ॥ १५४ ॥

सिंहस्थगुरौ प्रकार प्रदेश परिहारः (मु० चि०)

सिंहेगुरौ सिंहलवे विवाहो नेष्टोऽथ गोदोत्तर तश्चपारात्।
भागीरथी याम्यतटे हि दोषो नान्यत्र देशे तपनेऽपि मेषे।

भा० टी०—सिंह राशि का बृहस्पति सिंह के ही नवांश में हो तो विवाह वर्जित है, गोदावरी के उत्तर तट से गंगा के दक्षिण तट तक (गंगा गोदावरी के मध्य देश में) सिंहके बृहस्पति का दोष है, अन्यत्र दोष नहीं है, मेष राशि के सूर्य हों तो सब देशों में सिंहके बृहस्पतिका दोष नहीं है।

* —जब सूर्य और बृहस्पति एक राशि के हों तो उसको गुर्वादित्य कहते हैं।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

तथा च (रामः)

मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः ।
गङ्गागोदान्तरं हित्वा शेषाङ्घ्रिषु न दोषकृत् ॥ १५६ ॥
मेषेऽर्केसद् व्रतोद्वाहौ गङ्गा गोदान्तरेऽपि च ।
सर्वसिंह गुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौड गुर्जरे ॥ १५७ ॥

भा० टी०-मघा आदि पांच चरण के (चार मघा का १ पूर्वाफाल्गुनि का अर्थात् सिंहका १६ अं० ४० कला पर्यन्त) जब बृहस्पति रहे तब तक समस्त देशों में निन्द्य है, शेष चरण (पूर्वाफाल्गुनि के दूसरे तीसरे चौथे चरण और उ० फा० का एक चरण तक अर्थात् १६ अं० ४० कला के बाद ३० अंश तक) में गंगा गोदावरी के मध्य देशों में ही वर्जित है अन्य देशों में वर्जित नहीं है । यदि सिंह राशि के बृहस्पति और मेषराशि के सूर्य हो तो गंगा गोदावरी के बीच में भी व्रतबंध विवाह होना शुभ है और समस्त सिंह के गुरु कलिंग, गौड और गुर्जर देश में वर्जित हैं ॥ १५६-१५७ ॥

गुरु शुद्धि विचार (रामः)

वटुकन्या जन्मराशेस्त्रिकोणायद्वि सप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः ॥ १५८ ॥
स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमो गुरुः ।
रिस्फाष्टतुर्यगोपीष्टो नीचारिस्थः शुभोप्यसत् ॥ १५९ ॥

भा० टी०-वटु (जिस बालक का उपनयन करना हो) की जन्म राशि और कन्या की जन्मराशि से पंचम नवम एकादश द्वितीय सप्तम में गुरु रहे तो उत्तम हैं, दशम-षट्-तृतीय-प्रथम (जन्म) इन स्थानों में हो तो पूजा करने से शुभ होता है, अन्यत्र चतुर्थ अष्टम द्वादश स्थानों में हो तो अशुभ जाने । अपने उच्चे, अपने रांशि, अपने मित्रं की राशि, अपने नमवांश, अपने वर्गो-

१-कर्कराशिका उच्च ।
२-धन-मीन राशिका स्वामी ।
३-मेष, कर्क, सिंह, वृश्चिक मित्र राशि ।
४-मेष, सिंह, धन का नवाँ अंश (२६ अं० ४० कला के बाद ३० अं० तक) वृष, कन्या, मकर का तीसरा अंश (६ अं० ४० क० के बाद १० अंश तक मिथुन, तुला,

थाम*में बृहस्पति हो तो (४।८।१२) इन स्थानों में रहने पर भी उत्तम है, नीच (मकर) का और शत्रु (बुध शुक्र) की राशि में होने पर शुभस्थान (२।५। ११।२।७) में रहता हुआ भी अशुभ फल को देता है ॥ १५८-१५९ ॥

रवि शुद्धि विचारः (मदीयपद्यम्)—

शुभप्रदो दिनेश्वरो त्रिषट् दशायगो यदा,
चतुर्थ रिस्फरन्ध्रगो हि निन्दितो निरन्तरम्।
द्विपञ्च सप्त रत्न जन्म संस्थितो विवाहके,
सुपूज्यकः शुभाशुभं विचारयेद्द्विजोत्तम ॥ १६० ॥

भा० टी०—हे द्विजोत्तम ! वर की जन्म राशि से ३।६।१०।११ भाव में सूर्य स्थित हों तो शुभ है, ४।१२।८ भाव में हो तो निश्चय से निन्दित है, २।५।७। ९।१ भाव में हो तो पूजा करने से विवाह में शुभ होते हैं ॥१६०॥

चन्द्र शुद्धि विचारः (मदीयपद्यम्)—

निशाकरो त्रिषट् सप्त दशायेषु शुभप्रदः ।
दुष्टोरिस्फाष्टतुर्येषु पूज्यश्चान्यत्रगो यदा ॥ १६१ ॥

भा० टी०—चन्द्रमा ३।६।७।११।१० भावों में शुभ, ४।८।१२ में दुष्ट, अन्यत्र (१।२।५।९) भाव में पूज्य है, इसका विचार विवाह के अतिरिक्त अन्य कार्यों में होता है ॥ १६१ ॥

अष्टवर्ग का चक्र मात्र और उन चक्रों के साधन की शैली लिख देता हूँ, इस विषय में जिसे विशेष रूपसे देखने की जिज्ञासा हो वह मेरी बालबोधिनी से विभूषित बृहज्जातक में देखे ।

कुम्भ का तीसरा छठवाँ अंश (६ अं० ४० क० के बाद १० अंश तक और १६ अंश ४० कलाके बाद २० अङ्क पर्यन्त) कर्क, वृश्चिक, मीनका छठवा-नवां अङ्क (१६ अङ्क ४० क० के बाद २० अङ्क और २६ अङ्क ४० कला के बाद ३० अंश पर्यन्त स्वांश है ।

* चर राशि (मे० क० तु० म०) का प्रथमांश (आरंभ से ३ अंश २० क० तक) स्थिर राशि (वृ० सिं० वृ० कु०) का पंचमांश (१३ अंश २० कला से १६) अंश ४० कला तक) द्विस्वभाव राशि (मि० क० ध० मी०) का नवां अंश (२६ ४० क० से ३० अं० पर्यन्त) वर्गोत्तम है । परन्तु मेषार्क के समय के अतिरिक्त सिंहांशका त्याग है । और नीच राशि मकर और शत्रु राशि (वृष मि० या तु०) के गुरु शुभ स्थान में भी अशुभ हैं, हां अष्टवर्ग के शुद्धि से सर्वथा शुभ है ।

धाम*में बृहस्पति हो तो (४।८।१२) इन स्थानों में रहने पर भी उत्तम है, नीच (मकर) का और शत्रु (बुध शुक्र) की राशि में होने पर शुभस्थान (५।६। ११।२।७) में रहता हुआ भी अशुभ फल को देता है ॥ १५८-१५९ ॥

रवि शुद्धि विचारः (मदीयवृत्तम्)–

शुभप्रदो दिनेश्वरो त्रिषट् दशायगो यदा,
चतुर्थ रिस्फरन्ध्रगो हि निन्दितो निरन्तरम्।
द्विपञ्च सप्त रत्न जन्म संस्थितो विवाहके,
सुपूज्यकः शुभाशुभं विचारयेद्द्विजोत्तम ॥ १६० ॥

भा० टी०–हे द्विजोत्तम ! वर की जन्म राशि से ३।६।१०।११ भाव में सूर्य स्थित हों तो शुभ है, ४।१२।८ भाव में हो तो निश्चय से निन्दित है, २।५।७। ९।१ भाव में हो तो पूजा करने से विवाह में शुभ होते हैं ॥१६०॥

चन्द्र शुद्धि विचारः (मदीयपद्यम्)–

निशाकरो त्रिषट् सप्त दशायेषु शुभप्रदः ।
दुष्टोरिस्फाष्टतूर्येषु पूज्यश्चान्यत्रगो यदा ॥ १६१ ॥

भा० टी०–चन्द्रमा ३।६।७।११।१० भावों में शुभ, ४।८।१२ में दुष्ट, अन्यत्र (१।२।५।९) भाव में पूज्य है, इसका विचार विवाह के अतिरिक्त अन्य कार्यों में होता है ॥ १६१ ॥

अष्टवर्ग का चक्र मात्र और उन चक्रों के साधन की शैली लिख देता हूँ, इस विषय में जिसे विशेष रूपसे देखने की जिज्ञासा हो वह मेरी बालबोधनी से विभूषित बृहज्जातक में देखे ।

कुम्भ का तीसरा छठवाँ अंश (६ अं० ४० क० के बाद १० अंश तक और १६ अंश ४० कलाके बाद २० अङ्क पर्यन्त)कर्क, वृश्चिक, मीनका छठवा-नवां अङ्क (१६ अङ्क ४० क० के बाद २० अङ्क और २६ अङ्क ४० कला के बाद ३० अंश पर्यन्त स्थांश है ।

* चर राशि (मे० क० तु० म०) का प्रथमांश (आरंभ से ३ अंश २० क० तक) स्थिर राशि (वृ० सिं० वृ० कु०) का पंचमांश (१३ अंश २० कला से १६) अंश ४० कला तक) द्विस्वभाव राशि (मि० क० ध० मी०) का नवां अंश (२६ अं० ४० क० से ३० अं० पर्यन्त) वर्गोत्तम है । परन्तु मेषार्क के समय के अतिरिक्त सिद्ध सिद्धांतका त्याग है । और नीच राशि मकर और शत्रु राशि (वृष मि० कन्या तु०) के गुरु शुभ स्थान में भी अशुभ हैं, हां अष्टवर्ग के शुद्धि तो सर्वथा उत्तम है ।

धाम*में इष्टराशि हो तो (४।८।१२) इन स्थानों में रहने पर भी उत्तम है, नीच (मकर) का और शत्रु (वृष शुक्र) की राशि में होने पर शुभस्थान (२।३ ११।२।७) में रहता हुआ भी अशुभ फल को देता है ॥ १५८-१५९ ॥

सूर्य शुद्धि विचारः (मदीयपद्यम्)-

शुभप्रदो दिनेश्वरो त्रिषट् दशायगो यदा,
चतुर्थ रिस्फरन्ध्रगो हि निन्दितो निरन्तरम्।
द्विपञ्च सप्त रत्न जन्म संस्थितो विवाहके,
सुपूज्यकः शुभाशुभं विचारयेद्द्विजोत्तम ॥ १६० ॥

भा० टी०–हे द्विजोत्तम ! वर की जन्म राशि से ३।६।१०।११ भावमें सूर्य स्थित हों तो शुभ है, ४।१२।८ भाव में हो तो निश्चय से निन्दित है, २।५।७ ९।१ भाव में हो तो पूजा करने से विवाह में शुभ होते हैं ॥१६०॥

चन्द्र शुद्धि विचारः (मदीयपद्यम्)-

निशाकरो त्रिषट् सप्त दशायेषु शुभप्रदः ।
दुष्टोरिस्फाष्टतूर्येषु पूज्यश्चान्यत्रगो यदा ॥ १६१ ॥

भा० टी०–चन्द्रमा ३।६।७।११।१० भावों में शुभ, ४।८।१२ में दुष्ट, अन्यत्र (१।२।५।९) भाव में पूज्य है, इसका विचार विवाह के अतिरिक्त अन्य कार्यों में होता है ॥ १६१ ॥

अष्टवर्ग का चक्र मात्र और उन चक्रों के साधन की शैली लिख देता हूँ, इस विषय में जिसे विशेष रूपसे देखने की जिज्ञासा हो वह मेरी बालबोधनी से विभूषित बृहज्जातक में देखे ।

कुम्भ का तीसरा छठवाँ अंश (६ अं० ४० क० के बाद १० अंश तक और १६ अंश ४० कलाके बाद २० अङ्क पर्यन्त) कर्क, वृश्चिक, मीनका छठवा-नवां अङ्क (१६ अङ्क ४० क० के बाद २० अङ्क और २६ अङ्क ४० कला के बाद ३० अंश पर्यन्त स्वांश है ।

* चर राशि (मे० क० तु० म०) का प्रथमांश (आरंभ से ३ अंश २० क० तक) स्थिर राशि (वृ० सि० वृ० कु०) का पंचमांश (१३ अंश २० कला से १६) अंश ४० कला तक) द्विस्वभाव राशि (मि० क० ध० मी०) का नवां अंश (२६ अं० ४० क० से ३० अं० पर्यन्त) वर्गोत्तम है । परन्तु मेषार्क के समय के अतिरिक्त सिंह सिंहांशका त्याग है । और नीच राशि मकर और शत्रु राशि (वृष मि० कन्या तु०) के गुरु शुभ स्थान में भी अशुभ हैं, हां अष्टवर्ग के शुद्धि से सर्वथा उत्तम है ।

प्राचीनमते गोचरस्याभावेऽष्टवर्गशुद्धिरेव (राजमार्तण्डे)-

अष्टवर्ग विशुद्धेषु गुरुशीतांशु भानुषु ।
व्रतोद्वाहौ तु कर्तव्यौ गोचरेण कदाचन ॥ १६२ ॥
अष्टवर्गेण ये शुद्धास्तेशुद्धा सर्वकर्मसु ।
सूक्ष्माष्टवर्ग संशुद्धिः स्थूला शुद्धिस्तुगोचरे ॥ १६३ ॥

भा० टी०-अष्टवर्ग की शुद्धि में गुरु चंद्र सूर्य के रहने पर व्रतबंध और विवाह करे, गोचर के शुद्धि रहने पर न करे क्योंकि जो अष्टवर्ग में शुद्ध है वह सब जगह शुद्ध है, अष्टवर्ग का सूक्ष्म (बारीक) विचार है, और गोचर का विचार स्थूल (मोटा-सामान्य) विचार है ॥ १६२-१६३ ॥

याम्यायने देवप्रतिष्ठादि निषेधः (मद्दीयसूत्रम्)-

अग्न्याधानं व्रतं चौलं प्रतिष्ठा देव तोययोः ।
गृहप्रवेशोद्वाहौ च नैव याम्यायने शुभम् ॥ १६४ ॥

भा० टी०-अग्निहोत्र प्रारंभ करना, व्रतबंध (यज्ञोपवीत) मुंडन देवता और जल की प्रतिष्ठा, गृह प्रवेश, विवाह इन कार्य्यों को दक्षिणायन में न करे अर्थात् कर्क की संक्रांति जब से आरंभ होती है तब से और धन की संक्रांति पर्यंत तक न करे ॥ १६४ ॥

भूमिशयन विचारः (वास्तु० मा० र०)-

रवेर्भाच्छरागाङ्क सूर्याः गृहेन्दू,
रसद्विः शशांकस्य तारा यदा चेत् ।
तदा रुद्र मन्वर्क मन्वर्क वेदाः,
क्रमेणैव नाड्यः सुशेते धरित्री ॥ १६५ ॥
शरादौ नवादौ तथा द्वादशे च,
तथैकोनविंशेऽपि चाद्यास्तु नाड्यः ।
नगे मध्यनाड्यो विवर्ज्या हि विप्रा ।
नखेऽङ्गान्विते चान्त्यभागे विवर्ज्याः ॥ १६६ ॥

भा० टी०-सूर्य्य के नक्षत्र से यदि चंद्र का नक्षत्र ५।७।९।१२।१९।२६वां

धान्यमर्दन मुहूर्तः (व्यव०)

फल्गुन्यौ श्रवणश्चैव मघा मूलं तथा मता ।
अनुराधा तथा ज्येष्ठा रेवती धान्यमर्दने ॥ ९ ॥
केवले सिंह लग्ने वा गुरु शुक्रोदये तथा ।

भा०टी०—पू०फा०उ०फा०श्र०म०मू०अनु०ज्ये०रे०इनमें धान्यमर्दन शुभहै।

धान्यस्थितिः (मदीय वृत्तम्)

मृदुध्रुव क्षिप्रचरे शिवे मूले निशाकरे ।
धान्य स्थितिः शुभकरी द्विस्वभाव स्थिरे तनौ ॥ १० ॥

भा० टी०—मृदु, ध्रुव, चर, क्षिप्र, आर्द्रा, मूल, नक्षत्र के चंद्रमामें द्विस्वभाव लग्न में धान्य स्थापन करना (खाता गाड़ आदि में धरना) शुभ है ॥ १० ॥

धान्यवृद्धिः (मदीयवृत्तम्)

इन्द्रे चरे ध्रुवे पुष्ये विशाखायां द्वि दास्रभे ।
देयं धान्यं हि वृद्ध्यर्थे शुभवारे चरे तनौ ॥ ११ ॥

भा० टी०—ज्ये० चर ध्रुव पु० वि० अ० इन १३ नक्षत्रों में और शुभवारों चर लग्नों में अनको सवाई डेवढ़ आदि ब्याज पर देना शुभ है ॥ ११ ॥

पशु भोजनार्थ तृणस्थापन धन: मुहूर्तश्च (मदीयपद्यम्)

सूर्यभाद् वसु श्रेष्ठानि षोडशान्य शुभानि च ।
वेदशेषाणि श्रेष्ठानि तृणसंस्थापने सदा ॥ १२ ॥
ध्रुवे क्षिप्रे स्वपे पित्रे मित्रे च पूर्विकात्रये ।
अरिक्त तिथ्यामकुजे द्विस्वभावे स्थिरोदये ॥ १३ ॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से ८ शुभ १६ अशुभ फिर शेष ४ शुभ तृण (घास) के धरने में है और ध्रुव क्षिप्र मू० म० अनु० नक्षत्र और रिक्ता तिथि वा छोड़ सम्पूर्ण तिथि, मंगलके छोड़ सबवारों में घास धरना शुभ है १२-१३

नवान्नभोजन मुहूर्तः (ग्रन्थ:)

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दाविषघटी मधु पौषार्कि भूमिजान् ॥ १४ ॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से चंद्र नक्षत्र तक गनने पर ३ के भीतर हो तो अशुभ, उसके बाद ८ शुभ, फिर ६ अशुभ फिर ८ नक्षत्र शुभ हलचक्र में मुनीश्वरों ने कहे हैं ॥ ३ ॥

बीजवपन मुहूर्तः (रत्न:)-

हस्ताश्वि पुष्योत्तर रोहिणीषु चित्रानुराधा मृगरेवतीषु ।
स्वातौ धनिष्ठासु मघासु मूले बीजोप्तिरुत्कृष्टफलप्रदिष्टा ॥ ४ ॥

भा० टी०—ह० अ० तीनों उत्तरा, रो० अ० मृ० रे० स्वा० चि० ध० म० मू० तेरह नक्षत्रों में बीज का बोना अत्यंत श्रेष्ठ है ॥ ४ ॥

राहुभाद्बीजोप्ति चक्रम् (संग्रहसर्वस्वे)-

राहुभादष्टकं यावद् द्वादशं षोडशं तथा ।
विंशन्मितं तथाचान्ते वेद संख्यां त्यजेद्बुधः ॥ ५ ॥

भा० टी०—राहु के नक्षत्र से ८ नक्षत्र और १२।१६।२०वाँ नक्षत्र २४वें से चार नक्षत्र त्याग कर अन्य नक्षत्रों में बीज बोना शुभ है ॥ ५ ॥

धान्यरोपण मुहूर्तः (राजमार्तण्डे)

पूर्वभद्रपदामूल रोहिण्युत्तरफल्गुनी ।
विशाखा वारुणं चैव धान्यानां रोपणे वराः ॥ ६ ॥

भा० टी०—पू० भा० मू० रो० उ०फा० वि० शत० इन ६ नक्षत्रों में धान्य को एक जगह से उखाड़ कर दूसरे जगह रोपना (लगाना) शुभ है ॥ ६ ॥

धान्यछेदन मुहूर्तः (राजमार्तण्डे)

रौद्रे पित्रे तथा सौम्ये हस्ते पुष्येऽनिले तथा ।
सस्य छेदं प्रशंसन्ति मूल श्रवणवासवे ॥ ७ ॥

भा० टी०—आ० म० मृ० ह० पु० स्वा० मू० श्र० ध० इन नव नक्षत्रों में धान्य का छेदन करना शुभदायक होता है ॥ ७ ॥

तत्र शुभवाराः (व्यवहारसमुच्चये)

धान्यानां लवनं कुर्याद् गुरौ शुक्रे च सर्वदा ।
बुधवारे तथा चन्द्रवारेऽपि शुभदंस्मृतम् ॥ ८ ॥

भा०टी०—गुरु शुक्र बुध चन्द्र ये वार धान्य छेदन में शुभ हैं ॥ ८ ॥

धान्यमर्दन मुहूर्तः (व्यव०)

फल्गुन्यौ श्रवणश्चैव मघा मूलं तथा मता ।
अनुराधा तथा ज्येष्ठा रेवती धान्यमर्दने ॥ ९ ॥
केवले सिंह लग्ने वा गुरु शुक्रोदये तथा ।

भा०टी०—पू०फा०उ०फा०श्र०म०मू०अनु०ज्ये०रे०इनमें धान्यमर्दन शुभहै।

धान्यस्थितिः (मदीय वृत्तम्)

मृदुध्रुव क्षिप्रचरे शिवे मूले निशाकरे ।
धान्य स्थितिः शुभकरी द्विस्वभाव स्थिरे तनौ ॥ १० ॥

भा० टी०—मृदु, ध्रुव, चर, क्षिप्र, आर्द्रा, मूल, नक्षत्र के चंद्रमामें द्विस्वभाव र में धान्य स्थापन करना (खाता गाड़ आदि में धरना) शुभ है ॥ १० ॥

धान्यवृद्धिः (मदीयवृत्तम्)

इन्द्रे चरे ध्रुवे पुष्ये विशाखायां हि दास्रभे ।
देयं धान्यं हि वृद्ध्यर्थं शुभवारे चरे तनौ ॥ ११ ॥

भा० टी०—ज्ये० चर ध्रुव पु० वि० अ० इन १३ नक्षत्रों में और शुभवारों लग्नों में अन्नको सवाई ड्योढ़े आदि ब्याज पर देना शुभ है ॥ ११ ॥

पशु भोजनार्थं तृणस्थापन घास मुहूर्तश्च (मदीयपद्यम्)

सूर्यभाद् वसु श्रेष्ठानि षोडशान्य शुभानि च ।
वेदशेषाणि श्रेष्ठानि तृणसंस्थापने सदा ॥ १२ ॥
ध्रुवे क्षिप्रे स्वपे पित्रे मित्रे च पूर्विकात्रये ।
अरिक्त तिथ्यामकुजे द्विस्वभावे स्थिरोदये ॥ १३ ॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से ८ शुभ १६ अशुभ फिर शेष ४ शुभ तृण (घास) के धरने में है और ध्रुव क्षिप्र मृ० म० अनु० नक्षत्र और रिक्ता तिथि को छोड़ सम्पूर्ण तिथि, मंगलके छोड़ सबवारों में घास धरना शुभ है १२-१३

नवान्नभोजन मुहूर्तः (राम०)

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दाविषघटी मधु पौषार्कि भूमिजाम् ॥ १४ ॥

भा० टी०-चर, क्षिप मृदु नक्षत्रों में और शुभ लग्नों में नन्दा तिथि रिक्त घटी चैत्र पौष मास शनि मंगल इनको त्याग कर नवीन अन्न का प्रथम २ प्रत्येक साल भोजन करना शुभ है ॥ १४ ॥

बुधर्क्षाच्छ्रवणचक्रम् (मदीयपद्यम्)-

पञ्च तारा च बाणेषु वेद नेत्र निशाकरात् ।
शुभं शुभं शुभं नाशं शुभं व्यर्थं शुभं क्रमात् ॥ १५ ॥

भा० टी०-बुध के नक्षत्र से ५।५।५।५।४।२।१ इन नक्षत्रों में क्रमसे शुभ, शुभ, शुभ, नाश, शुभ, व्यर्थ, शुभ फल होता है। (बुध के नक्षत्र से १५ नक्षत्र तक शुभ, १६ से २० पर्यन्तनाश, २१ से २४ तक शुभ, २५-२६ तक व्यर्थ, २७ वां शुभ है) ॥ १५ ॥

दीक्षाग्रहण मुहूर्तः (म० मं० रामसेवकः)-

माघ फाल्गुनिक मार्ग माधवे कार्तिकाश्व ...
सादितीतुलघुरेवती ध्रुवे पितृमित्र हरिमूलभ
कृष्णवार तिथिमूचिरेऽकुजे शुक्ल पक्ष
केन्द्रकोण धन विक्रमे शुभे शत्रु लाभ .
शाक्त शैवो वैष्णवो द्विस्वभावे मन्त्रे
ग्रासेग्राह्यः सर्वदा संक्रमे वा देवीपीठे

भा० टी०-माघ ... वैशाख
लघु रेवती ध्रुव मघा, ...
दोनों पक्ष में ...
तिथियों में दुर्गा का ...

...
भे लघ्याणती ४० ...
मनो १४ द्विदैवानल ...
२४ शुभ्यभ तोय
नाडिकाः ... वर्ज्याः
...
...-पहली
नवान्न

इत्यादि में दीक्षाग्रहण (गुरुमुख) हो। श्रावण मास में तथा किसी के मतसे आषाढ़ मास में भी दीक्षाग्रहण करना लिखा है, शाक्त द्विस्वभाव लग्न में, शैव चर लग्न में, वैष्णव स्थिर लग्न में दीक्षाग्रहण करे, सूर्य चन्द्र ग्रहण में संक्रान्तिके पुण्यकाल में देवी केसिद्धि पीठ (विन्ध्याचल ज्वाली देवी, शारदा मैहर, काली कामाक्षा देवी पटना दुर्गाखोह इत्यादि) में प्रयाग में काशी में गया यात्रा के समय सम्पूर्ण मास तिथिवार लग्नों में दीक्षाग्रहण करे प्रत्येक मासों के किसी २ विशेष तिथि को भी दीक्षाग्रहण करना लिखा है मेरे दीक्षासर्वस्व को देखिये ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

धर्म क्रिया मुहूर्तः (मु० ग०)

रेवती द्वितये हस्त त्रितये रोहिणीद्वये।
श्रवण त्रयोत्तरा पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ १६ ॥
ज्ञेज्य शुक्रेन्दु सूर्येषु ज्ञेज्यषड्वर्गशालिनि।
लग्ने जीवे युते जीवे बलिष्ठे धर्म माचरेत् ॥ २० ॥

भा० टी०--रे० अ० ह० चि० स्वाती, रो० मृग० श्र०, ध० श० तीनों उत्तरा, पुष्य, पुन० अनु० इन नक्षत्रों में बुध, गुरु, शुक्र चन्द्रवार में बुध गुरुके षड्वर्ग में लग्न गुरु से युत बलवान् बृहस्पति के रहने पर धर्म क्रिया (वेदयज्ञ) का आरम्भ करे ॥ १६ ॥ २० ॥

हवनादि शान्ति कर्म मुहूर्तः (मु० चि०)

क्षिप्र ध्रुवान्त्यचर मैत्र मघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं च सह पौष्टिक मङ्गलाभ्याम्।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादि दुष्ट समये शुभदं निमित्ते ॥ २१ ॥

भा० टी०--क्षिप्र ध्रुव रेवती चर मैत्र मघा नक्षत्र में, लग्न से १० वें सूर्य, ४ थे चन्द्रमा, लग्नगत गुरु हो तो मूल गंडान्तादि उत्पात दर्शनादिशान्ति तथा पौष्टिकर्म करे नैमित्तिक शान्ति गुरु शुक्रास्त बालवृद्धादि तथा दुष्ट समय में भी शुभ होता है ॥ २१ ॥

१--श्रावणे चित्तवर्धनम्
२--आषाढ़े सुख सम्पदा

इन नक्षत्रों में रिक्ता तिथि, शनि चंद्र और मंगलवार को त्यागकर अर्थात् नंदा, भद्रा, जया पूर्णा तिथि बुध गुरु शुक्रवार में मूंगा हाथीदांत के भूषण, शङ्ख के भूषण, तथा सुवर्ण के भूषण और वस्त्र को धारण करना चाहिये। मंगलवार को लाल वस्त्र पहिनना शुभ है। भौमवार ध्रुव पुन० पुष्य इन नक्षत्रों में सौभाग्यवती स्त्री को वस्त्र पहिनना निषेध है * ॥ २४ ॥

वस्त्रक्षालन मुहूर्तः (मु० म०)-

पुनर्वसुद्वयेऽश्विन्यां धनिष्ठा हस्तपञ्चके ।
हित्वार्कार्किबुधान् रिक्तां षष्ठी श्राद्ध दिनं तथा ॥ २५ ॥
व्रतं पर्व च वस्त्राणि क्षालयेद्रजकादिना ।

भा० टी०-पुन० पुष्य अ० ध० ह० चि० स्वा० वि० अनु० इन नक्षत्रों में सूर्य, शनि, बुधवार रिक्ता षष्ठी तिथि, श्राद्ध दिन, व्रत का दिन पर्व को छोड़ कर रजक (धोबी) से वस्त्र धोवावे † ॥ २५ ॥

चूड़ीधारण चक्रम् (मदीयपद्यम्)-

सूर्यभाद्गजनेष्टानि श्रेष्टानि नगभानि च ।
नवनेष्टानि सौम्यानि भानि त्रीणीन्दुभेऽव्ययम् । २६ ॥
चूड़ी चक्रमिदं प्रोक्तं श्रीमद् दैवज्ञभूषणैः ॥ २७ ॥

भा० टी०- सूर्य के नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यंत गिनने पर ८ तक अशुभ उसके बाद ७ शुभ फिर उसके बाद नव अशुभ, फिर तीन शुभ अन्त का एक अशुभ है अर्थात् ६ वें से १५ वें तक, और २५ वें से २७ वें तक शुभ है और शेष सब अशुभ हैं यहां अभिजित् नक्षत्र का भी ग्रहण है ॥ २६ ॥ २७ ॥

सूचीकर्म मुहूर्तः (व्यवहारतत्त्वमुक्तावे)-

अदितिर्वासवं त्वाष्ट्र मैत्रमैन्दववाजिनः ।
सूचीकर्म तनुत्राणमेभिर्ऋक्षैः प्रशस्यते ॥ २८ ॥

भा०टी०-पु०, ध०, चि०, अ०, मृ०, अ० इन नक्षत्रों में सिलाई का कर्म प्रारंभ करे और शरीर रक्षार्थ कवच आदि का धारण करे ॥ २८ ॥

---

* मुहूर्तमार्तण्डे — [illegible]
† मदंग — [illegible]
[illegible] ॥ १ ॥

होमाहुति चक्रम् (मु० मञ्जी)-

अर्क चान्द्रि भृगु सौरि चन्द्रमो भौमदेव गुरु राहु केतवः ।
त्रित्रिभेषु रविभान्निशाकरे होममाहर शुभं खलग्रहे ॥ २२ ॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र तक गिने तीन २ नक्षत्र क्रमसे सूर्य, बुध, शुक्र, शनि, चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति, राहु, केतु के मुखमें आहुति जाती है, चौथे से ६ वें तक १३ वें से १५ वें तक १९ वें से २१ वें तक शुभ है) शुभ ग्रह के मुख की आहुति श्रेष्ठ है और पाप ग्रह के मुख की आहुति अनिष्ट है॥२२॥

अग्नि वास विचारः (मु० मञ्जी)-

सैकयुक्ततिथिवार संयुता वेदहृत सगुणावशेषिते ।
भूमि वह्निरियसता शुभप्रदा चन्द्रबाहु दिवि भूतलेऽशुभः॥२३

भा० टी०—शुक्लादि तिथिमें वार युक्त करके एक युक्त करे फिर उसमें ४ का भाग देवेंगे यदि शून्य और ३ शेष बचे तो अग्नि का वास पृथिवी पर रहता है सो शुभ है। और यदि १।२ शेष बचे तो अशुभ है (१ शेष में प्राणनाशक, २ शेष में धननाशक है) ॥ २३ ॥

वस्त्रधारण मुहूर्तः (मु० चि०)

पौष्णा ध्रुवाश्विकर पञ्चक वासवेज्या-
दित्ये प्रवाल रद शङ्ख सुवर्णवस्त्रम् ।
धार्यं [illegible] शनि चन्द्र कुजेऽह्नि रिक्ते
मैत्रे ध्रुवादितियुगे शुभगा न दद्यात् ॥ २४ ॥

भा० टी०—रे० ध्रु० अ० ह० [illegible] [illegible] [illegible] अनु० पु० पुन० पु० [illegible]

[illegible]

इन नक्षत्रों में रिक्ता तिथि, शनि चंद्र और मंगलवार के त्यागकर अर्थात् नंदा, भद्रा, जया पूर्णा तिथि बुध गुरु शुक्रवार में मूंगा हाथीदाँत के भूषण, शङ्ख के भूषण, तथा सुवर्ण के भूषण और वस्त्र को धारण करना चाहिये। मंगलवार को लाल वस्त्र पहिनना शुभ है। भौमवार ध्रुव पुन० पुष्य इन नक्षत्रों में सौभाग्यवती स्त्री के वस्त्र पहिनना निषेध है * ॥ २४ ॥

वस्त्रक्षालन मुहूर्तः (मु० ग०)-

पुनर्वसुद्वयेऽश्विन्यां धनिष्ठा हस्तपञ्चके ।
हित्वार्कार्किबुधान् रिक्तां षष्ठी श्राद्ध दिनं तथा ॥ २५ ॥
व्रतं पर्व च वस्त्राणि क्षालयेद्रजकादिना ।

भा० टी०-पुन० पुष्य अ० ध० ह० चि० स्वा० वि० अनु० इन नक्षत्रों में सूर्य, शनि, बुधवार रिक्ता षष्ठी तिथि, श्राद्ध दिन, व्रत का दिन पर्व को छोड़ कर रजक (धोबी) से वस्त्र धोवावे † ॥ २५ ॥

चूड़ीधारण चक्रम् (मदीयपद्यम्)-

सूर्यभाद्गजनेष्टानि श्रेष्टानि नगभानि च ।
नवनेष्टानि सौम्यानि भानि त्रीणीन्दुभंव्ययम् ॥ २६ ॥
चूड़ी चक्रमिदं प्रोक्तं श्रीमद् देवज्ञभूषणैः ॥ २७ ॥

भा० टी०- सूर्य के नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यंत गिनने पर ८ तक अशुभ उसके बाद ७ शुभ फिर उसके बाद नव अशुभ, फिर तीन शुभ अंत्य का एक अशुभ है अर्थात् ६वें से १५वें तक, और २५ वें से २७ वें तक शुभ है और शेष सब अशुभ हैं यहाँ अभिजित् नक्षत्र का भी ग्रहण है ॥ २६ ॥ २७ ॥

सूचीकर्म मुहूर्तः (व्यवहारसमुच्चये)-

अदितिर्वासवं त्वाष्ट्रं मैत्रमैन्दववाजिनः ।
सूचीकर्म तनुत्राणमेभिर्ऋक्षैः प्रशस्यते ॥ २८ ॥

भा०टी०-पु०, ध०, चि०, अ०, मृ०, अ० इन नक्षत्रों में सिपाई का कर्म प्रथम प्रारंभ करे और शरीर रक्षार्थ कवच आदि का धारण करे ॥ २८ ॥

---

* मुहूर्तमंजरी—रामलभ्य डलपाणिपीडने नो मुहूर्त उदितो द्विजाबया ।

† गणेशः—पौष्णादित्यादि पञ्चाश्विवसुषु च मधेवाससां क्षालनाद्यम् । हित्वा षष्ठी च पर्वाण्यसुन शनिदिने श्राद्ध दर्श शुभंस्यात् ॥ १ ॥

मुद्रापातन मुहूर्तः (सार समुच्चये)-

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु भेषु योगे प्रशस्ते शनिचन्द्रवर्ज्ये ।
वारे तिथौ पूर्णजयाख्ययोश्च मुद्राप्रतिष्ठा शुभदा नराणाम्॥२९॥
गुर्वस्ते वा सितास्ते वा मुद्रायाः घट्टनं क्वचित् ।
क्रूरग्रहांशांश लग्ने न कार्यं भूति मिच्छता ॥ ३० ॥

भा० टी०-मृदु, ध्रुव, क्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्रों में प्रशस्त योगोंमें शनि च० के अतिरिक्त वारोंमें पूर्णा जया तिथियों में रूपयाआदि का बनाना शुभ है, किसी का मत है कि गुरु शुक्र के अस्तमें क्रूरग्रह के अंश लग्नमें शुभ को चाहने वाला रुपिया आदि न बनावे ॥ २९ ॥ ३० ॥

शिल्पकर्म मुहूर्तः (मु० चि०)-

मृदुध्रुवक्षिप्रचरे ज्ञे गुरौ वा खलग्नगे ।
विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पविद्या प्रशस्यते ॥ ३१ ॥

भा० टी०-मृदु, क्षिप्र ध्रुव, चरसंज्ञक नक्षत्रों में बुध या गुरु दशवें अथवा लग्नमें हो या चन्द्रमा बुध गुरु के षड्वर्गमें हो तो शिल्प विद्या का आरम्भ करना शुभ है ॥ ३१ ॥

नौकाकर्म मुहूर्तः (मु० चि०)-

याम्यत्रयविशाखेन्द्र सार्पपित्रेश मित्रभे ।
भृग्वीज्यार्क दिने नौका घट्टनं सत्तनौ शुभम् ॥ ३२ ॥

भा० टी०-भ०, कृ०, रो०,वि०, ज्ये०, श्ले०, म०, आ० इन नक्षत्रों को छोड़कर शुक्र,बृहस्पति,सूर्यवारों में और शुभ लग्नमें नौका बनाना शुभ है॥३२॥

नौकाचालन मुहूर्तः (दीपिकायाम्)-

शुभाहे विष्णुयुग्मेन्दु भगमैत्राश्वि पौष्णभे ।
चालनं घट्टनस्यानामावः शुभं निर्धान्दुषु ॥ ३३ ॥

भा०टी०-श्र०, ध०, पू० फा०, अनु०, अ०, रे० इन नक्षत्रों में शुभ तिथि वारोंमें शुभ चन्द्रमा में नौका आदि बनाना हो वहां से पानी में ले जाकर चलाने का मुहूर्त शुभ है ॥ ३३ ॥

क्रयविक्रय मुहूर्तः (रामः)-

क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि न
पौष्णाम्बुपाश्विनी वातश्रवश्चित्रा क्रये शुभाः ॥ ३४ ॥

भा० टी०–क्रय (खरीदने) के नक्षत्र में (विक्रय) बेचना और विक्रय के नक्षत्र में क्रय करना अशुभ है, क्रयमें मूल्य देकर वस्तु लेने में रेवती, शतभिषा, अश्विनी, स्वाती, श्रवण और चित्रा नक्षत्र अच्छे हैं ॥ ३४ ॥

विक्रयविपण्योर्मुहूर्तौ (रामः)-

पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रत्रिकोणे शुभैः ।
षड्त्र्यायेष्वशुभैर्विना घटं तनुं सन्विक्रयः सत्तिथौ ।
रिक्ताभौमघटान् विना च विपणिर्मैत्रध्रुवक्षिप्रभे-
र्लग्ने चन्द्रसिते व्ययाष्टरहितैः पापैः शुभैर्द्व्यायखे ॥३५॥

भा० टी०–तीनों पूर्वा, वि०, कृ०, श्ले०, भ० इन नक्षत्रों में केन्द्र-कोण में शुभ ग्रह हो और ६ । ३ । ११ में पाप ग्रह हो कुंभ के छोड़ कर अन्य लग्न और शुभ तिथियों में वस्तु का बेचना शुभ है। रिक्तातिथि मंगलवार कुंभ लग्न को छोड़कर अन्य तिथि वार लग्नों में और मित्र ध्रुव क्षिप्र इन नक्षत्रों में लग्न में चन्द्रमा शुक्र और बारहवें आठवें के छोड़ कर अन्य स्थानों में पापग्रह द्वितीय एकादश दशम स्थानों में शुभग्रह के स्थित रहने पर दुकान करना या बाजार हाट लगाने का कार्य सिद्धि होता है ॥ ३५ ॥

गोक्रयविक्रयमुहूर्तः-

करेज्यशाक्राम्बुपवासवेषु द्विदैव पौष्णादितिदास्रभेषु ।
गवां क्रयो विक्रयकोऽतिशस्त उक्तो बुधाःमातृप्रसाद विप्रैः ३६

भा० टी०–ह०, पु०, ज्ये०, श०, ध०, वि०, रे०, पुन०, अ० इन नक्षत्रों में गाय बैलका खरीदना बेचना अत्यन्त शुभ मातृप्रसाद विप्र कहे हैं ॥ ३६ ॥

पशूनां रक्षामुहूर्त-स्थितिनिवेशन मुहूर्तः (रामः)-

लग्नेशुभेनाष्टमशुद्धि संयुते रक्षापशूनां निजयोनिभे वरे।
रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवो ध्रुवत्वाष्ट्रेपुयानं स्थितिवेशनं न सत् ॥

भा० टी०–लग्नमें शुभग्रह हो लग्न से अष्टम गृह शुद्ध हो अन्येक पशुओं के

सामान्यतः समस्तशुभकार्येषु लग्नशुद्धिमाह (मु० चि०)-

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४२ ॥

भा० टी०-लग्न से ८। १२ वां भाव शुद्ध हो जन्म लग्न वा राशि का उपचय स्थान की राशि लग्न में हो शुभग्रह से युत दृष्टि हो और चन्द्रमा ३। ६। १०। ११ वें भावमें हो तो सम्पूर्ण कार्य आरंभ करने से सिद्धि होते हैं ॥ ४२ ॥

सेवकस्य स्वामिसेवा मुहूर्तः (रामः)

क्षिप्रे मैत्रे विशितार्केज्यवारे सौम्ये लग्नेऽर्के कुजे वा खलाभे।
योनेर्मैत्र्यां राशिपोश्चापि मैत्र्यां सेवा कार्या स्वामिनः सेवकेन ४३

भा० टी०-क्षिप्र, मैत्र नक्षत्र, बुध, शुक्र, सूर्य, गुरुवार, शुभग्रह युत लग्न में हो और सूर्य या मंगल १० वें ११ वें हो योनि मैत्री और राशीश मैत्री रहै तो सेवक स्वामी का कार्य आरंभ करे अर्थात् नौकर को रक्खो ॥ ४३ ॥

राजदर्शनमुहूर्तः (रत्नमालायाम्)-

सौम्याश्वि पुष्य श्रवणश्रविष्ठा हस्तध्रुवत्वाष्ट्रभ पूषभानि।
मैत्रेययुक्तानि नरेश्वराणां विलोकने भानि शुभप्रदानि ४४

भा० टी०-मृ०, अ०, पुष्य, श्र०, ध०, ह०, ध्रुव चि०, रे० ये १३ नक्षत्र में राजा का दर्शन करना शुभ दायक है ॥ ४४ ॥

द्रव्यप्रयोग ऋणग्रहणमुहूर्तः (रामः)-

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे,
लग्नेधर्मसुताष्ट शुद्धिसहिते द्रव्यप्रयोगः शुभः।
नारे ग्राह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेर्केऽह्नि यत्,
तद्वंशेषु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥ ४५ ॥

भा० टी०-स्वा०, पुन०, मृदुसंज्ञक, वि०, पु०, श्र०, ध०, श०, अ०, इन नक्षत्र में चर लग्न में लग्न से ९। ५। ८ वां भाव शुद्ध रहे तब धन वृद्धि के लिये देवे, मंगलवार, संक्रान्ति, और रविवार युत हस्त नक्षत्र में ऋण न ले यदि लेवे तो उसके वंश से भी ऋण न उतरे, और बुधवार के कदापि भी ऋण न दे अर्थात् धन को न दे ॥ ४५ ॥

नृत्यारम्भमुहूर्तः (वशिष्टः)

त्रिषोत्तरामित्रगुरुःश्रविष्ठा हस्तेन्द्रवारीशपौष्णभेषु ।
संगीतनृत्यादि समस्तकर्म कार्यं विभौमार्कजवासरेषु ॥४६॥

भा० टी०—तीनों उत्तरा, अनु०, पुष्य, ध०, ह०, ज्ये०, श०, रे० इन नक्षत्रों में मंगल शनि को छोड़ कर अन्य वारों में संगीत नृत्य आदि का सम्पूर्ण कार्य करना शुभ है ॥ ४६ ॥

नक्षत्रेषु ज्वरोत्पत्तौ तन्निवृत्त दिन संख्या ज्ञानम् (मु० चि०)-

स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे मृतिर्ज्वरेऽन्त्यमैत्रे स्थिरता भवेद्रुजः ।
याम्यश्रवो वारुणतक्षभेशिवा घस्राहि पक्षोद्भवविपार्कवासवे ॥४७॥
मूलाग्निदास्रे नवपितृभे नखाः बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः ।
मासोऽब्जवैश्वेऽथ यमाहिमूलभे मिश्रेशपित्रे फणिदंशने मृतिः ॥४८॥

भा०टी०—स्वा०, ज्ये०, तीनों पूर्वा, आ०, श्ले० में ज्वर उत्पन्न हो तो मृत्यु हो । रे०, अनु० में ज्वर उत्पन्न हो तो ज्यादे दिन रहे, भ०, श०, श्र०, चि० में ११ दिन, वि०, ह०, ध० में १५ दिन, मू०, कृ०, अ० में ९ दिन, म०, में २० दिन तीनों उत्तरा, पुष्य, पुन०, रो० में ७ दिन, मृ०, उ० षा० में ३० दिन पर्यन्त ज्वर रहे * । भरणी, श्ले०, मू० मिश्र संज्ञक आ०, म० इन नक्षत्रों में मंगलवार में सर्प काटे तो मृत्यु हो ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

रोग रोगि मरण विशिष्टयोगम् (दैवज्ञ मनोहरे)-

उग्रवरुणरुद्रा वासवेन्द्रत्रिपूर्वा
यमदहन विशाखाः पापवारेणयुक्ताः ।
त्रितिथिनवमिषष्ठी द्वादशी वा चतुर्थी
मृदजमरणयोगो रोगिणां कालहेतुः ॥ ४९ ॥

भा० टी०—श्ले०, श०, आ०, ध०, ज्ये०, तीनों पूर्वा, भ०, वि० ये नक्षत्र पाप वार में होवें ३ । ६ । ९ । १२ । ४ तिथि युक्त हों तो [illegible] में [illegible] रोगियों का काल का हेतु [illegible] है । ४९॥

* [illegible]

वस्ति विरेचन शिरा मोक्षण मुहूर्तः (पी० धा०)-

चित्रायुगे विधियुगे मित्रयुगे लघुपुवारुणे विष्णोः ।
वस्तिविरेचन वेधाः शुभदिन तिथिचन्द्रलग्नेषु ॥ ५० ॥

भा० टी०—चि०, स्वा०, रो०, मृ०, अनु०, ज्ये०, लघु श०, श्र० इन नक्षत्रों में शुभ दिन शुभ तिथि शुभ चन्द्रमा शुभ लग्न में नस्तर लेना छांट करना जुलाब लेना शुभ है ॥ ५० ॥

भैषज्य मुहूर्तः (वसिष्ठः)-

हस्तत्रये पुष्य पुनर्वसौ च विष्णुत्रयेचाश्विनि पौष्णभेषु ।
मित्रेन्द्रमूलेषु च सूर्यवारे भैषज्यमुक्तं शुभवासरेऽपि ॥ ५१ ॥

भा० टी०—ह०, चि०, स्वा०, पु०, पुन०, श्र०, ध०, श०, अ०, रे०, अनु०, मृ० मूल इन नक्षत्रों में सूर्यवार में तथा शुभवार में भैषज्य शुभप्रद है * ॥ ५१ ॥

अथ महानिषादे निषिद्ध कार्य (मु० चि०)-

शुक्रारार्किषु दर्शभूतमदने नन्दासु तीक्ष्णोग्रभे,
पौष्णे वारुणभे त्रिपुष्करदिने न्यूनाधिमासेऽयने ।
याम्येऽब्दात्परतश्चपातपरिघे देवेज्य शुक्रास्तके,
भद्रा वैधृतियोः शवप्रतिकृते दाहो न पक्षेसिते ॥ ५२ ॥
जन्मभत्परितारयो र्मृतिसुखान्त्येऽब्जे च कर्तुं न सन् ।
मध्यो मैत्रभगादिति ध्रुवविशाखाग्न्यहिर्बुध्न्यभे ह्येऽपि च ॥
श्रेष्ठोऽर्केज्य विधेर्दिने श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये तथा,
त्वाशौचात् परतो विचार्यमखिलं मध्ये यथा सम्भवम् ॥५३॥

भा०टी०—शुक्र मंगल शनिवार में अमावस्या चतुर्दशी त्रयोदशी तिथि और नन्दा तिथियें तीक्ष्ण उग्र रे०, श० नक्षत्र † त्रिपुष्करयोग न्यून अधिमास कर्क की संक्रान्ति के दिन, एक वर्ष के बाद दक्षिणायन, व्यतीपात और परिघ

---

* पौष्णद्वयेऽश्वादितिभ द्वये च हस्त त्रये च श्रवण त्रये च ।
मैत्रे च मूले च मघे च हस्तभैषज्यकर्म प्रवदन्ति सन्तः ।

† भद्रा तिथौ च विष्टयु लक्तार्कं वारे त्रिपादर्क्षगत त्रिपुष्करे ।
[illegible]

भा० टी०—रे०, ध्रुव, मृ०, ह०, स्वा०, अ०, अनु० इन १० नक्षत्रों में रवि, भौम, गुरु इन तीन वारों में * सूतिका स्त्री को प्रथम स्नान करना शुभ है। आ०, पुन०, पु०, श्र०, म०, भ०, मिश्र, मू०, चि० इन ११ नक्षत्रों में शनिवार अष्टमी षष्ठी द्वादशी रिक्ता ये तिथियां सूतिका स्नान में शुभ नहीं हैं। और शेष नक्षत्र वार तिथि सूतिका स्नान में मध्यम हैं ॥ ३ ॥

जातकर्म नामकरण मुहूर्तः (मु० चि०)—

तज्जात कर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोन तिथौ शुभेऽह्नि ।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदु ध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात् ॥ ४ ॥

भा० टी०—पुत्रोत्पन्न होने पर जातक कर्म करे यदि उस समय किसी कारण से न हो सके तो †नामकर्म के साथ करे, जातक कर्म आदि का मुहूर्त कहते हैं, पर्व और रिक्ता तिथि को छोड़कर शुभवार में ग्यारहवें तथा बारहवें दिन मृदु-ध्रुव-क्षिप्र-चर नक्षत्रों में करे (११वें ब्राह्मण का, १२वें क्षत्रियों का, [illegible] दिन वैश्यों का और शूद्रों का एक मास में सूतकान्त मुहूर्त कहा है) ॥ ४ ॥

जलपूजा (मु० म०)—

पुनर्वसुद्वयेहस्ते मृगेमूलानुराधयोः ।
श्रोगुरौबुधेचन्द्रे सत्तिथौ जलपूजनम् ॥ ५ ॥
गुरौ शुक्रेऽस्तगे चैत्रपौषे वा मलमासके ।
मासपूर्णो रिक्तादि न कुर्याच्च जलार्चनम् ॥ ६ ॥

भा० टी०—पुन०, पु०, ह०, मृ०, मू०, अ०, श्र० इन नक्षत्रों चन्द्र, बुध, गुरुवार में प्रसूता स्त्री जल पूजा करे, गुरु शुक्र के अस्त समय तथा चैत्र पौषमास में मलमास में [illegible] रिक्ता दिन में जलपूजा न करे ॥५-६॥

स्तनपान मुहूर्त. (ग्रन्थान्तरे)

एकत्रिंशत्तमेऽह्नि वा शुभे चान्द्रागमोदिने ।
पूर्वाह्ने न शुभस्थाने पयःपानं शिशोःस्मृतम् ॥ ७ ॥

---

* [illegible]

† [illegible]

भा०टी०—जन्म से ३१वें दिन कश्यपादानोक्त नक्षत्रादिकों में पूर्वान्ह में शुभ वारों में बालक को दूध पिलाना शुभ है ॥ ७ ॥

प्रथमादि मासोत्पन्न दन्त फलम् (मु० चि०)—

मासे चेत्प्रथमे भवेत्सदशनो बालो विनश्येत्स्वयं ।
हन्यात्स क्रमतोऽनुजातभगिनीमात्रग्रजान्द्वयादिके ॥
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात्सुखं पुष्टतां ।
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनौ सदशनो वोर्ध्वं स्वपित्रादिहा ॥८॥

भा० टी०—यदि प्रथम मास में ही बालक को दाँत जम जाय तो वह स्वयं नाश को प्राप्त होता है, दूसरे मास में छोटे भाई को, तीसरे मास में बहिन को, चौथे मास में माता को, पाँचवें मास में ज्येष्ठ भाई को, छठवें मास में अतुल सुख, सातवें मास में पिता से सुखी, आठवें मास में बलवान्, नवें मास में लक्ष्मीवान्, दशवें मास में तथा ग्यारहवें मास में दाँत जमै तो सुखी होता है। यदि जन्म के समय दाँत के सहित उत्पन्न हो वा तालू में प्रथम दाँत जमै तो पिता मातादि का नाश करनेवाला होता है ॥ ८ ॥

अन्नप्राशन मुहूर्तः (रामः)—

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारान्
लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च ।
हित्वा षष्ठात्समे मास्यथ हि मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात् स्थिराख्यैः समृदुलघुचैरर्बालकान्नाशनं सत् ॥९॥
केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः खशुद्धे
लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं
मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच केचित् ॥ १० ॥

भा० टी०—रिक्ता, नन्दा, अष्टमी, अमावस्या और द्वादशी ये तिथियां, शनि, मंगल, रवि ये वार, जन्मराशि और जन्म लग्न से आठवीं राशि का लग्न या लग्न में उन्हीं का नवमांश मीन, मेष, वृश्चिक लग्न इन सबों को त्याग करके छठे महीने से सम महीनों में पुत्र का, पाँचवें मास से विषम मास से कन्या का, स्थिर,

मृदु, लघु, चर नक्षत्रों में अन्नप्राशन करना शुभप्रद है। केन्द्र त्रिकोण इन स्थानों में शुभग्रह हो १०वाँ स्थान शुद्ध हो ३।६।११वें पापग्रह हों लग्न, ६, अष्टम, इन स्थानों से भिन्न स्थानों में चन्द्रमा हो तो अन्नप्राशन करना मङ्गल होता है, अनु०,श०, स्वा० नक्षत्र किसी २ के मत में शुभप्रद नहीं है॥९-१०॥

ताम्बूल भक्षण मुहूर्तः (मु० ग०)—

अनुराधात्रयेहस्त त्रितये रेवतीद्वये
उत्तरासु च रोहिण्यां श्रवणद्वितये मृगे ॥ ११ ॥
पुनर्वसौ तथा पुष्ये शनिभौमान्यवासरे
ताम्बूल भक्षणं सार्द्धं द्विमासेन्नाशनेऽथवा ॥ १२ ॥
ज्ञार्किजान्यनृपेलग्ने कार्यं ताम्बूलभक्षणम् ।

भा० टी०—अनु०, ज्ये०, मू०, ह०, चि०, स्वा०, रे०, अ०, तीनों उत्तरा, रो०, श्र०, ध०,मृ०,पुन०,पु० इन नक्षत्र में शनि मंगल को छोड़ अन्य वारों में ढाई महीने पर या अन्नप्राशन के समय ही पान खिलाना शुभ है ॥ ११ ॥१२॥

निष्क्रमण मुहूर्तः (संग्रहसर्वस्वे)—

हस्तःपुष्य पुनर्वसू हरियुगं मैत्र त्रयं रोहिणी
रेवत्युत्तर फाल्गुनी मृगयुताषाढोत्तरास्वातिभे ।
मासौ तूर्य तृतीयकौ शनिकुजौ त्यक्त्वा च रिक्ता तिथि
सिंहादि त्रय कुम्भराशि सहितं निष्काशनं शस्यते ॥१३॥

भा० टी०—जन्म से तीसरे वा चौथे मास में ह०, पु०, पुन०, श्र०, ध०, श०, अनु०, ज्ये०,पू०, रो०, रे०, उ०फा०, मृ०,उ० षा०, स्वा०इन नक्षत्र में सिंह, कन्या, तुलाराशि के चन्द्रमा में शनि मंगलवार और रिक्ता तिथि को छोड़ कर बालक को गृह के बाहर पहले पहल निकालने और सूर्य का दर्शन कराकर [illegible] [illegible] [illegible] गो-ब्राह्मण कुलदेव वृद्ध आदि पूज्यों का दर्शन करावें ॥

कर्णवेधन मुहूर्तः ([illegible])—

पूर्वीनगदमभिपूज्य कुले विशुद्धे

* [illegible]
[illegible]

हरिशयन रिक्ता तिथि में भद्रा में दुष्ट समय में न करे। सूर्य अनुकूल रहे चन्द्रमा शुभ हो बलवान तारा रहे शुक्लपक्ष में वा पूर्ण अथवा मध्य चन्द्रमा रहे विषम वर्ष रहे। रे०, श्र०, ह०, अ०, चि०, पु०, ध०, पुन०, अनु०, मृ० इन नक्षत्रों में बालकों के कर्णवेध करने को मुनि लोग कहा है। मुहू०चि० में "ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे" भी लिखा है जिससे चन्द्र, बुध, गुरु शुक्रवार में हो इन नक्षत्रों के मध्य होने पर कर्णवेध होना निश्चयार्थ है। मार्तण्ड में "पुंस्त्री कर्णौ सविधि पटुना दक्षवामादिवेध्यौ" के लिखने से पुरुष का दक्षिण स्त्री का वामकर्ण प्रथमच्छेदन करना स्पष्ट मालुम होता है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

चूडाकर्ममुहूर्तः (मु० चि०)—

चूडा वर्षात्तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टार्करिक्ताद्यषष्ठी-
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम्।
वारे लग्नांशयोश्च स्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः ॥ १६ ॥

भा० टी०—जन्म से तीसरे पाँचवें इत्यादि विषम वर्ष में अष्टमी रिक्ता प्रतिपद् षष्ठी और पर्व इनको तथा चैत्र को छोड़कर उत्तरायण सूर्य में बुध, सोम, शुक्र, गुरु, इन वारों में लग्न और नवमांश में अशुभ ग्रहों की राशियाँ जन्म और जन्म राशि से ८वीं राशि का लग्न न हो लग्न से अष्टम शुद्ध हो ज्येष्ठा नक्षत्र में और अनुराधा को छोड़कर मृदु, चर, लघु नक्षत्रों में ११।६।३ इन स्थान में पापग्रह हो और केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह हो तो बालकका मुंडन करना शुभ है॥

ताराबलस्यावश्यकत्वं दुष्टताराप्रतीकारश्च (मु० चि०)—

तारादौष्ट्येऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे।
सौम्यैर्भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ॥२०॥

भा० टी०—चन्द्रमा त्रिकोण या उच्च के वा शुभग्रह अथवा अपने मित्र के वर्ग में हो तो दुष्ट तारा रहने पर भी क्षौर कर्म करना शुभ होता है। शुभग्रहों की राशि में चन्द्रमा बैठा हो और स्वयं शुभ हो तो क्षौर यात्रादि में तारा शुभ होती है॥

गर्भिण्यादिषु क्षौरकालनिषेधः—

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत्।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥ २१ ॥

भा० टी०-जिस बालक का क्षौर कर्म करना है उसकी माता को यदि पाँच मास से अधिक गर्भ हो तो क्षौर कराना शुभ नहीं होता है। परन्तु यदि बालक की अवस्था पाँच वर्ष से अधिक हो तो पाँच मास से अधिक गर्भ रहने पर भी बालक का मुण्डन करना शुभदायक है ॥ २१ ॥

चौलादिषु कालान्तरनिषेधः (रामः)-

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ॥ २२ ॥

भा० टी०-यदि बालक की माता मुंडन के दिन रजोवती हो तो बालक का चौल (मुंडन) न करे, ज्येष्ठ पुत्र ज्येष्ठ मास में तथा किसीके मत से मार्गशीर्ष में भी मुंडन न करे ॥ २२ ॥

सामान्य क्षौरादिमुहूर्तः (रामः)-

दन्तक्षौरनखक्रियाऽत्र विहिता चौलोदिते वारभे ।
पातङ्ग्यारखीन्विहाय नवमं घस्रं च सन्ध्यां तथा ॥
रिक्तां पर्व निशां निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यत ।
स्नाताभ्यक्त कृताशनैर्नहि पुनः कार्या हितप्रेप्सुभिः ॥ २३ ॥

भा० टी०-दंत का कार्य, क्षौर कराना, नख कटाना, आदि का कर्म चौल में कहे हुए तिथि वार नक्षत्रों में, शनि भौम, रविवार को छोड़ अन्य वारों में, ९ वें दिन, संध्या समय में, रिक्ता, पर्व, रात्रि, इनको छोड़कर, बिना आसन का, युद्ध यात्रा में उत्सुक, स्नानादि नित्यकर्म के बाद, उबटन लगा के भोजन करके, अपने कल्याण के चाहनेवाले को बाल नहीं बनवाना चाहिये ॥ २३ ॥

क्षौरकर्मणि विशेषकाल (मु० चि०)-

क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे क्षुरकर्म च द्विज नृपाज्ञयाचरेत् ।
शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरमाचरेन्न खलु गर्भिणीपतिः ॥२४॥

भा० टी०-यज्ञ में, विवाह में, मरण (मृतकर्म) में जेलखाने से छूटकर आने पर ब्राह्मण-राजा की आज्ञा से क्षौर कर्म करा ले । गर्भिणी स्त्री के स्वामी को, मुर्दा का ढोना, तीर्थ यात्रा, समुद्र स्नान और क्षौर कर्म नहीं कराना चाहिये॥२४॥

हरिशयन रिक्ता तिथि में भद्रा में दुष्ट समय में न करे। सूर्य अनुकूल हो चन्द्र शुभ हो बलवान तारा रहे शुक्लपक्ष में वा पूर्ण अथवा मध्य चन्द्रमा हो तिस वर्ष रहे। रे०, श्र०, ह०, अ०, चि०, पु०, ध०, पुन०, अनु०, मृ० इन नक्षत्रों में बालकों के कर्णवेध करने को मुनि लोग कहा है। बृह०वि० में "इन्दुजे-न्दुवारे" भी लिखा है जिससे चन्द्र, बुध, गुरु शुक्रवार में ही इन नक्षत्रों के रहने होने पर कर्णवेध होना निश्चयार्थ है। मार्तण्ड में "पुंस्त्री कर्णौ सविधि पटुना दक्षवामादिवेध्यौ" के लिखने से पुरुष का दक्षिण स्त्री का वामकर्ण प्रथमच्छेदन करना स्पष्ट मालुम होता है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

चूडाकर्ममुहूर्तः (मु० चि०)—

चूडा वर्षात्तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टार्करिक्ताद्यषष्ठी-
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम्।
वारे लग्नांशयोश्च स्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः ॥ १६ ॥

भा० टी०—जन्म से तीसरे पाँचवें इत्यादि विषम वर्ष में अष्टमी रिक्ता प्रतिपदा षष्ठी और पर्व इनको तथा चैत्र को छोड़कर उत्तरायण सूर्य में बुध, सोम, शुक्र, गुरु, इन वारों में लग्न और नवमांश में अशुभ ग्रहों की राशियाँ जन्म और जन्म राशि से ८वीं राशि का लग्न न हो लग्न से अष्टम शुद्ध हो ज्येष्ठा नक्षत्र हो और अनुराधा को छोड़कर मृदु, चर, लघु नक्षत्रों में ११।६।३ इन स्थान में पापग्रह हों और केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह हों तो बालक का मुंडन करना शुभ है॥

चन्द्रबलवशाद्दुष्टतारापि प्रशस्ता (मु० चि०)—

नागद्वाष्टपेऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा चौरे मत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे।
सौम्यैर्भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया चौरयात्रादिकृत्ये ॥२०॥

भा० टी०—चन्द्रमा त्रिकोण या उच्च का या शुभग्रह अथवा अपने मित्र के वर्ग में हो तो दुष्ट तारा रहने पर भी चौर कर्म करना शुभ होता है। शुभग्रह की राशि में चन्द्रमा बैठा हो और वर्ग शुभ हो तो चौर यात्रादि में तारा शुभ होती है॥

गर्भिण्यादिषु कालान्तर निर्णयः—

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत्।
पञ्चवर्षात्स्थिरे गर्भिण्यामपि मातरि ॥ २१ ॥

वर्षे वाप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे ।
वैश्यानां पुनरष्टमेप्यथपुनः स्याद्द्वादशेवत्सरे
कालेऽथद्विगुणेगते निगदितं गौणंतदाहुर्बुधाः ॥ २८ ॥

भा० टी०—गर्भ से या जन्म से आठवें वा पाँचवें वर्ष में ब्राह्मण का, छठें वा ग्यारहें क्षत्रिय का, आठवें या बारहवें वर्ष वैश्य का व्रतबंध करना शुभ होता है, यदि इन कहे हुए समय में न हो तो इन समयों के द्विगुणित समय को गौण काल कहा है ॥ २८ ॥

व्रतबन्धमुहूर्तः (मु० चि०)-

क्षिप्र ध्रुवाहि चरमूल मृदुत्रिपूर्वा-
रौद्रार्क विद्गुरु सितेन्दु दिने व्रतं सत् ।
द्वित्रीषु रुद्र रवि दिग्प्रमिते तिथौ हि
कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ॥ २९ ॥

भा० टी०—क्षिप्र, ध्रुव, श्लेषा, चर मूल, मृदु तीनों पूर्वा, आर्द्रा इन नक्षत्रों में रवि गुरु बुध शुक्र सोम वारों २।३।५।११।१२।१० इन तिथियोंमें शुक्लपक्षमें और कृष्णपक्ष के प्रथम तृतीयांश (परवा से पंचमी तक) में भी पूर्वाह्णकाल में उपनयन करना श्रेष्ठ है * ॥ २९ ॥

लग्नशुद्धिः (मु० चि०)-

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ-मृतौ व्रतेऽधमाः,
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ।
व्रतवन्धेऽष्टषड्रिःफवर्जिताः शोभनाः शुभाः,
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थेविधुस्तनौ ॥ ३० ॥

भा० टी०—शुक्र, बृहस्पति, चन्द्र, लग्नेश छठवें, आठवें तथा चन्द्र, शुक्र, बारहवें, लग्न, अष्टम, पञ्चम में पापग्रह हो तो व्रतबन्ध में शुभ नहीं है ८।६।१२

---

* चण्डेश्वरः—आर्द्रेन्दुविदस्तीक्ष्ण [illegible] पञ्चगुणे च [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥

नृपाणां हितं चौरभे श्मश्रुकर्म दिने पञ्चमे पञ्चमेऽस्योदये वा।
षडाग्निस्त्रिमैत्राष्टकः पञ्चपित्रोऽब्दतोऽर्य्यमाचौरकृन्मृत्युमेति ॥

भा० टी०—चौर में कहे नक्षत्रादिकों में पाँचवें पाँचवें दिन शृंगारार्थ डाढ़ी बनवावे अथवा स्योदय में ६ दफे, कृत्तिका में ३ दफे, अनुराधा में ८ दफे, रोहिणी में ५ दफे, मघा में ४ दफे, उ०फा० में एक वर्ष में यदि चौर करावे तो मृत्यु को पावे ॥ २५ ॥

अक्षरारम्भमुहूर्तः (रामः)

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके,
तिथौ शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके रवावुदक् ।
लघुश्रवोनिलान्त्यभादितीशतक्ष मित्रभे,
चरो न सत्तनोशिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ॥ २६ ॥

भा० टी०—बालक के जन्म से पंचम वर्ष में गणेश, विष्णु, शारदा, लक्ष्मी इन सब देवोंकी पूजाकर ११, १२, २, ६, ५, ३, इन तिथियों में उत्तरायण सूर्यमें लघु, श्र०, स्वा०, रे०, पुन०, आ०, चि०, अनु० इन नक्षत्रोंमें और चर राशि इन राशि को छोड़कर शुभग्रह की राशि में शुभ दिन में बालकों को प्रथम अक्षरारंभ कराना श्रेष्ठ होता है ॥ २६ ॥

विद्यारम्भमुहूर्तः (रामः)

मृगात् कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूल पूर्विकात्रये
गुरुद्वयेऽर्कजीव वित्सितेऽह्नि षट्शरत्रिके ।
शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोण केन्द्रगैःस्मृता ॥ २७ ॥

भा० टी०—मृगशिरा से ३, हस्त से ३, श्रवण से ३, अ०, मू०, पूर्वा तीनों पुष्य, आ० इन १६ नक्षत्रों में सूर्य्य, गुरु, बुध, शुक्रवारों में ६।५।३।११।१२ १०।२ इन शुभ तिथियों में शुभ ग्रहों त्रिकोण और केन्द्र में शुभग्रहों के रहने पर विद्यारम्भ कराना शुभ है ॥ २७ ॥

व्रतबन्धकालः (मु० चि०)—

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाष्टमे

वर्षे वाप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे।
वैश्यानां पुनरष्टमेप्यथपुनः स्याद्द्वादशेवत्सरे
कालेऽथद्विगुणेगते निगदितं गौणंतदाहुर्बुधाः॥ २८॥

भा० टी०—गर्भ से या जन्म से आठवें वा पाँचवें वर्ष में ब्राह्मण का, छठें या ग्यारहें क्षत्रिय का, आठवें या बारहवें वर्ष वैश्य का व्रतबंध करना शुभ होता है, यदि इन कहे हुए समय में न हो तो इन समयों के द्विगुणित समय को गौण काल कहा है॥ २८॥

व्रतबन्धमुहूर्तः (मु० चि०)-

क्षिप्र ध्रुवाहि चरमूल मृदुत्रिपूर्वा-
रौद्रार्क विद्गुरु सितेन्दु दिने व्रतं सत्।
द्वित्रीषु रुद्र रवि दिग्प्रमिते तिथौ हि
कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्ने॥ २९॥

भा० टी०—क्षिप्र, ध्रुव, श्लेषा, चर मूल, मृदु तीनों पूर्वा, आर्द्रा इन नक्षत्रों में रवि गुरु बुध शुक्र सोम वारों २।३।५।११।१२।१० इन तिथियोंमें शुक्लपक्षमें और कृष्णपक्ष के प्रथम तृतीयांश (परवा से पंचमी तक) में भी पूर्वान्हकाल में उपनयन करना श्रेष्ठ है *॥ २९॥

लग्नशुद्धिः (मु० चि०)-

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ-मृतौ व्रतेऽधमाः,
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः।
व्रतबन्धेऽष्टषड्रिःफवर्जिताः शोभनाः शुभाः,
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थेविधुस्तनौ॥ ३०॥

भा० टी०—शुक्र, बृहस्पति, चन्द्र, लग्नेश छठवें, आठवें तथा चन्द्र, शुक्र, बारहवें, लग्न, अष्टम, पञ्चम में पापग्रह हो तो व्रतबन्ध में शुभ नहीं है ८।६।१२

---

* चण्डेश्वरः—माघेन्द्वित्तशीलाढ्यः फाल्गुने च दृढव्रतः।
चैत्रेऽभवति मेधावी वैशाखेकोविदो भवेत्॥
ज्येष्ठे तु गुहनोतिश्च आषाढे क्रतुभाग्भवेत्।
मार्गशीर्षे भवेद्धृष्टः चैत्रेतुःस्व यथाप्नुयात्॥

इन स्थानों को छोड़ अन्य स्थानों में शुभप्रद, ३।६।११ इन स्थानों में पापप्रद हों, कर्क का चन्द्रमा लग्न में पूर्ण हों तो व्रतबंध में शुभप्रद होते हैं ॥ ३० ॥

वर्णेशशाखेशास्तत्प्रयोजनश्च (मु० चि०)-

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः
शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं शाखेशसूर्यशशिजीवबलेव्रतं सत्।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितोव्रतेन

भा० टी०—वृहस्पति, शुक्र, ब्राह्मण के स्वामी, मंगल, सूर्य क्षत्रिय के स्वामी, चन्द्रमा वैश्य के, बुध शूद्र के स्वामी, और शनि अंत्यजों के स्वामी हैं, और ऋक, साम, यजु, अथर्वण वेदों के क्रमशः वृहस्पति, शुक्र, मंगल, और बुध शाखेश (स्वामी) हैं, शाखेश का वार लग्न तथा बल प्रशस्त होता है, शाखेश सूर्य, चन्द्र, वृहस्पति के बली रहने से व्रतबंध शुभप्रद होता है, गुरु, शुक्र, शत्रु राशि में तथा नीच में पराजित हो तो ऐसे समय में व्रतबंध हो तो बालक वेदशास्त्र से रहित होता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

उपनयनादिके त्याज्याः (मु० चि०)-

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्य पराह्णके।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टः व्रतबन्धोगलग्रहे ॥ ३३ ॥

भा० टी०—कृष्णपक्ष, प्रदोष, अनध्याय, शनिवार, रात्रि, अपराह्न, जिस दिनके पहले दिन सायंके समय मेघ गर्जा हो और गलग्रह ये सब व्रतबन्धमें अशुभ हैं॥

प्रदोषः (मु० चि०)-

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः।

१-प्रदोषे निश्यनध्याये मन्दे कृष्णे गलग्रहे।
मधु विनोपनीतस्तु पुनः संस्कार मर्हति।
गलग्रहे प्रदोषे च स्वरूपानुरूप जायत इति दैव० मनो०।

२-उदये देशेषु पूर्वाह्णे मुख्यं स्यादुपनायनम्।
मध्याह्ने मध्यमं प्रोक्तमपराह्णे च गर्हितमितिमनुः।

३-कृष्णपक्षे चतुर्थीति सप्तम्यादि दिनत्रयम्।
त्रयोदशी चतुष्कं च अष्टावेतेगलग्रहाः।
चूडाकर्म तयोर्बन्ध कर्णयोरपि वेधनम्।
गलग्रहे न कर्तव्यं यदीच्छेत् पुत्र जीवितम् ॥ इति वशिष्ठः।

राज्यर्धसार्धप्रहरयाम मध्य स्थितेः क्रमात् ॥ ३४ ॥

भा० टी०—द्वादशी को आधीरात के पूर्व त्रयोदशी, षष्ठी के डेढ़ महर के पूर्व सप्तमी, और तृतीयाके एक महर के पूर्व चतुर्थी हो जाय तो प्रदोष होता है ॥

धर्मशास्त्रीयं विषयम् (मु० चि०)-

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्य्योऽन्यथा न सत्॥३५॥

यदि नान्दी श्राद्ध के बाद माता ऋतुमती हो और उसके बाद अन्य मुहूर्त न मिलै तो उसी मुहूर्त में शान्ति करके मुंडन, व्रतबन्ध, विवाह करे शान्ति के न करने से शुभ नहीं होता है ॥ ३५ ॥

केशान्त समावर्तन मुहूर्तं (मु० चि०)-

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्त दिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥ ३६ ॥

भा० टी०—सोलहवें वर्ष में मुंडन में कहे "चूडा वर्षात्" मुहूर्त में केशान्त कर्म करना शुभ होता है, इसी प्रकार व्रतबन्ध के मुहूर्त "क्षिप्रध्रुवाहि०" में समावर्तन करना शुभ होता है ॥ ३६ ॥

इति श्री दैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संग्रहीते फलितप्रकाशे तत्त्ववसुधानाम्नि टीकान्विते संस्काररत्ने समाप्तम् ।

अथ विवाह रत्नम् ॥ ४ ॥

अनाश्रमी न तिष्ठेत क्षणमेकमपि द्विजः ।
आश्रमादाश्रमं गच्छेदेषधर्म सनातनः ॥ १ ॥

भा० टी०—ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ, संन्यास, ये चार आश्रम हैं, ब्राह्मण विना आश्रमका न रहैं, एक आश्रमसे दूसरे आश्रम में जाय यही सनातन धर्म है[१]

गृहस्थाश्रम प्रशंसा सुखीसुलभ प्रशंसा च कश्यपः-
अथातः संप्रवक्ष्यामि गृहस्थाश्रममुत्तमम् ।
य आधारोऽन्याश्रमाणां भूतानां प्राणिनां तथा ॥ १ ॥

इन स्थानों को छोड़ अन्य स्थानों में शुभग्रह, ३।६।११ इन स्थानों में पापग्रह, कर्क का चन्द्रमा लग्न में पूर्ण हों तो व्रतबंध में शुभप्रद होते हैं ॥ ३० ॥

वर्णेशशाखेशास्तत्प्रयोजनञ्च (मु० चि०)-

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः
शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं शाखेशसूर्यशशिजीवबलेव्रतं सत् ।
जीवे भृगौरिपुगृहेविजिते च नीचे स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितोव्रतेन

भा० टी०-वृहस्पति, शुक्र, ब्राह्मण के स्वामी, मंगल, सूर्य क्षत्रिय के स्वामी, चन्द्रमा वैश्य के, बुध शूद्र के स्वामी, और शनि अंत्यजों के स्वामी हैं, और ऋक्, साम, यजु, अथर्वण वेदों के क्रमशः वृहस्पति, शुक्र, मंगल, और बुध शाखेश (स्वामी) हैं, शाखेश का वार लग्न तथा बल प्रशस्त होता है, शाखेश सूर्य, चन्द्र, वृहस्पति के बली रहने से व्रतबंध शुभप्रद होता है, गुरु, शुक्र, शत्रु राशि में तथा नीच में पराजित हो तो ऐसे समय में व्रतबंध हो तो बालक वेदशास्त्र से रहित होता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

उपनयनादिके त्याज्याः (मु० चि०)-

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्य पराह्णके ।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टः व्रतबन्धोगलग्रहे ॥ ३३ ॥

भा० टी०-कृष्णपक्ष, प्रदोष, अनध्याय, शनिवार, रात्रि, अपराह्न, जिस दिन ग्रहण हो दिन सामके समय मेघ गर्जा हो और गलग्रह ये सब व्रतबन्धमें अशुभ है॥

प्रदोषः (मु० चि०)-

धर्कान्तकेत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।

१-प्रदोषे निशयनध्याये मन्दे कृष्णे गलग्रहे ।
अधुं विनीतशिष्यस्तु पुनः संस्कार मर्हति ।
अकाले प्रदोषे च स्वशाखापुच्छ आपत इति दैव० मनो० ।
२-अर्के देवेषु पूर्वाह्ने मुख्यं स्यादुपनायनम् ।
मध्याह्ने मध्यमं प्रोक्तमपराह्ने च गर्हितमिति मनुः ।
३-कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां अष्टम्यादि दिनत्रयम् ।
चतुर्दशी चतुर्थी च सप्तम्येताग्रहाः ।
पूर्वाह्ने सप्तम्यां कर्मणि वेदम् ।
अनध्याये न कर्तव्यं शुभ कर्मिणम् ॥ इति वशिष्ठः ।

राज्यर्धसार्धप्रहरयाम मध्य स्थितैः क्रमात् ॥ ३४ ॥

भा० टी०-द्वादशी को आधीरात के पूर्व त्रयोदशी, षष्ठी के डेढ़ प्रहर के पूर्व सप्तमी, और तृतीयाके एक प्रहर के पूर्व चतुर्थी हो जाय तो प्रदोष होता है ॥

धर्मशास्त्रीयं नियमम् (मु० चि०)-

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्य्योऽन्यथा न सत्॥३५॥

यदि नान्दी श्राद्ध के बाद माता ऋतुमती हो और उसके बाद अन्य मुहूर्त न मिले तो उसी मुहूर्त में शान्ति करके मुंडन, व्रतबन्ध, विवाह करे शान्ति के न करने से शुभ नहीं होता है ॥ ३५ ॥

केशान्त समावर्तन मुहूर्ते (मु० चि०)-

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्त दिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥ ३६ ॥

भा० टी०-सोलहवें वर्ष में मुंडन में कहे "चूडा पर्वात्" मुहूर्त में केशान्त कर्म करना शुभ होता है, इसी प्रकार व्रतबन्ध के मुहूर्त "क्षिप्रध्रुवाहि०" में समावर्तन करना शुभ होता है ॥ ३६ ॥

इति श्री दैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संगृहीते फलितप्रकाशे तत्कृतसुधानाम्नि टीकान्विते संस्काररत्नं समाप्तम् ।

अथ विवाह रत्नम् ॥ ४ ॥

अनाश्रमी न तिष्ठेत क्षणमेकमपि द्विजः ।
आश्रमादाश्रमं गच्छेदेपधर्म सनातनः ॥ १ ॥

भा० टी०-ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ, संन्यास, ये चार आश्रम हैं, ब्राह्मण विना आश्रमका न रहे, एक आश्रमसे दूसरे आश्रम में जाय यही सनातन धर्म है१

गृहस्थाश्रम प्रशंस्य सुस्त्रीसुलक्षण प्रसंशा च कश्यपः-
अथातः संप्रवक्ष्यामि गृहस्थाश्रममुत्तमम् ।
य आधारोऽन्याश्रमाणां भूतानां प्राणिनां तथा ॥ १ ॥

इन स्थानों को छोड़ अन्य स्थानों में शुभप्रद, ३।६।११ इन स्थानों में छाद
६४, कर्क का चन्द्रमा लग्न में पूर्ण हों तो व्रतबंध में शुभप्रद होते हैं ॥ ३० ॥

वर्णेशशाखेशास्तत्फलं व्रतबन्धः (मु० चि०)—

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः॥
शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं शाखेशसूर्यशशिजीवबलेव्रतं सत्।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन॥

भा० टी०—बृहस्पति, शुक्र, ब्राह्मण के स्वामी, मंगल, सूर्य क्षत्रिय के स्वामी, चन्द्रमा वैश्य के, बुध शूद्र के स्वामी, और शनि अंत्यजों के स्वामी हैं, और ऋक, साम, यजु, अथर्वण वेदों के क्रमशः बृहस्पति, शुक्र, मंगल, और बुध शाखेश (स्वामी) हैं, शाखेश का वार लग्न तथा बल प्रशस्त होता है, शाखेश सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति के बली रहने से व्रतबंध शुभप्रद होता है, गुरु, शुक्र, शत्रु राशि में तथा नीच में पराजित हो तो ऐसे समय में व्रतबंध हो तो बालक वेदशास्त्र से रहित होता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

उपनयनादिके त्याज्याः (मु० चि०)—

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्य पराह्णके।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टः व्रतबन्धो गलग्रहे ॥ ३३ ॥

भा० टी०—कृष्णपक्ष, प्रदोष, अनध्याय, शनिवार, रात्रि, अपराह्न, जिस दिनके पहले दिन सामके समय मेघ गर्जा हो और गलग्रह ये सब व्रतबन्धमें अशुभ है।

प्रदोषः (मु० चि०)—

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः।

१-प्रदोषे निश्यनध्याये मन्दे कृष्णे गलग्रहे।
मधुं विप्रोपनीतस्तु पुनः संस्कार मर्हति।
गलग्रहे प्रदोषे च स्वल्पायुरुप जायत इति वैद्य० मनो०।
२-सर्व देशेषु पूर्वाह्णे मुख्यं स्यादुपनायनम्।
मध्याह्ने मध्यमं प्रोक्तमपराह्ने च गर्हितमितिमनुः।
३-कृष्णपक्षे चतुर्थीति सप्तम्यादि दिनत्रयम्।
त्रयोदशी चतुष्कं च अष्टावेते गलग्रहाः।
चूडाकर्म तथोद्वाहं कर्णयोरपि वेधनम्।
गलग्रहे न कर्तव्यं परीक्ष्येत् पुन जीवितम् ॥ इति वशिष्ठः।

राञ्यर्धसार्धप्रहरयाम मध्य स्थितैः क्रमात् ॥ ३४ ॥

भा० टी०—द्वादशी को आधीरात के पूर्व त्रयोदशी, षष्ठी के डेढ़ प्रहर के पूर्व सप्तमी, और तृतीयाके एक प्रहर के पूर्व चतुर्थी हो जाय तो प्रदोष होता है ॥

धर्मशास्त्रीयं विषयम् (मु० चि०)-

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्य्योऽन्यथा न सत्॥३५॥

यदि नान्दी श्राद्ध के बाद माता ऋतुमती हो और उसके बाद अन्य मुहूर्त न मिलै तो उसी मुहूर्त में शान्ति करके मुंडन, व्रतबन्ध, विवाह करे शान्ति के न करने से शुभ नहीं होता है ॥ ३५ ॥

केशान्त समावर्तन मुहूर्ते (मु० चि०)-

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्त दिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥ ३६ ॥

भा० टी०—सोलहवें वर्ष में मुंडन में कहे "चूडा वर्षात्" मुहूर्त में केशान्त कर्म करना शुभ होता है, इसी प्रकार व्रतबन्ध के मुहूर्त "क्षिप्रध्रुवाहि०" में समावर्तन करना शुभ होता है ॥ ३६ ॥

इति श्री दैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संग्रहीते फलितप्रकाशे सन्तबगुबानाम्नि टीकान्विते संस्काररत्नं समाप्तम् ।

अथ विवाह रत्नम् ॥ ४ ॥

अनाश्रमी न तिष्ठेन क्षणमेकमपि द्विजः ।
आश्रमादाश्रमं गच्छेदेषधर्म सनातनः ॥ १ ॥

भा० टी०—ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास, ये चार आश्रम हैं, आश्रम बिना आश्रमवा न रहें, एक आश्रम से दूसरे आश्रम में जाय यही सनातन धर्म है।

गृहस्थाश्रम प्रशस्य मुक्तीनुसार प्रशंसा व कथन-
यथागतः सम्प्रवरणादि गृहस्थाश्रमपुत्तमम् ।
च आश्रमोऽन्याश्रमाद्दो भूयाणां क्षत्रियै तथा ॥ १ ॥

रात्र्यर्धसार्धप्रहरयाम मध्य स्थितेः क्रमात् ॥ ३४ ॥

भा० टी०–द्वादशी को आधीरात के पूर्व त्रयोदशी, षष्ठी के डेढ़ प्रहर के पूर्व सप्तमी, और तृतीया के एक प्रहर के पूर्व चतुर्थी हो जाय तो प्रदोष होता है ॥

धर्मशास्त्रीयं विषयम् (मु० चि०)–

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्य्योऽन्यथा न सत् ॥ ३५ ॥

यदि नान्दी श्राद्ध के बाद माता ऋतुमती हो और उसके बाद अन्य मुहूर्त न मिले तो उसी मुहूर्त में शान्ति करके मुंडन, व्रतबन्ध, विवाह करे शान्ति के न करने से शुभ नहीं होता है ॥ ३५ ॥

केशान्त समावर्तन मुहूर्तौ (मु० चि०)-

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्त दिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥ ३६ ॥

भा० टी०–सोलहवें वर्ष में मुंडन में कहे "चूडा वर्षात्" मुहूर्त में केशान्त कर्म करना शुभ होता है, इसी प्रकार व्रतबन्ध के मुहूर्त "क्षिप्रध्रुवाहि०" में समावर्तन करना शुभ होता है ॥ ३६ ॥

इति श्री दैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संगृहीते फलितप्रकाशे तत्कवसुधानाम्नि टीकान्विते संस्काररत्नं समाप्तम् ।

अथ विवाह रत्नम् ॥ ४ ॥

अनाश्रमी न तिष्ठेत क्षणमेकमपि द्विजः ।
आश्रमादाश्रमं गच्छेदेषधर्म सनातनः ॥ १ ॥

भा० टी०–ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ, संन्यास, ये चार आश्रम हैं, ब्राह्मण विना आश्रमका न रहें, एक आश्रम से दूसरे आश्रम में जाय यही सनातन धर्म है १

गृहस्थाश्रम प्रशंस्य मुख्यमुख्यन प्रशंसा च कश्यपः-
अथान्तः संप्रवक्ष्यामि गृहस्थाश्रममुत्तमम् ।
य आधारोऽन्याश्रमाणां भूतानां प्राणिनां तथा ॥ १ ॥

इन स्थानों को छोड़ अन्य स्थानों में शुभग्रह, ३।६।११ इन स्थानों में पापग्रह, कर्क का चन्द्रमा लग्न में पूर्ण हों तो व्रतबंध में शुभप्रद होते हैं ॥ ३० ॥

वर्णेशशाखेशाद्व्रतबन्धयोजनम् (मु० चि०)-

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः
शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं शाखेशसूर्यशशिजीवबलेव्रतं सत्।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितोव्रतेन

भा० टी०-बृहस्पति, शुक्र, ब्राह्मण के स्वामी, मंगल, सूर्य क्षत्रिय के स्वामी, चन्द्रमा वैश्य के, बुध शूद्र के स्वामी, और शनि अंत्यजों के स्वामी हैं, और ऋक्, साम, यजु, अथर्वण वेदों के क्रमशः बृहस्पति, शुक्र, मंगल, और बुध शाखेश (स्वामी) हैं, शाखेश का वार लग्न तथा बल प्रशस्त होता है, शाखेश सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति के बली रहने से व्रतबंध शुभप्रद होता है, गुरु, शुक्र, शत्रुराशि में तथा नीच में पराजित हो तो ऐसे समय में व्रतबंध हो तो बालक वेदशास्त्र में रहित होता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

व्रतबन्धे वर्ज्यकालाः (मु० चि०)-

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्य पराह्णके।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टः व्रतबन्धो गलग्रहे ॥ ३३ ॥

भा० टी०-कृष्णपक्ष, प्रदोष, अनध्याय, शनिवार, रात्रि, अपराह्न, जिस दिन सवेरे दिन प्रातःकाल समय मेघ गर्जा हो और गलग्रह ये सब व्रतबन्धमें अशुभ हैं ॥

प्रदोषः (मु० चि०)-

षट्त्र्यष्टभूतविधिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः।

१-[illegible]
[illegible]
[illegible]
२-[illegible]
[illegible]
३-[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ इति वसिष्ठः ।

भा० टी०–अ वर्ग का गरुड़, क वर्ग का बिलाव, च वर्ग का सिंह, ट वर्ग स्वान, त वर्ग का सर्प, प वर्ग का मूषक, य वर्ग का मृग, श वर्ग का मेढा वर्ग है। और अपने वर्ग से पाँचवाँ वर्ग शत्रु है ॥ ८ ॥

वर्णाद्यष्टकूटानि (मु० चि०)-

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥ ९ ॥

भा० टी०–१ वर्ण, २ वश्य, ३ तारा, ४ योनि, ५ ग्रहमैत्री, ६ गणमैत्री, ७ भकूट, ८ नाड़ी ये आठ एक से एक गुण में अधिक है, सब ३६ गुण हैं ॥

वर्णविचारः (रामः)—

द्विजा झषालिकर्कटास्ततो नृपा विशोऽङ्घ्रिजाः।
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ॥ १० ॥

भा० टी०–मीन, वृश्चिक, कर्क राशि ब्राह्मण, मेष, सिंह, धन राशि क्षत्रिय, वृष, कन्या, मकर राशि वैश्य, और मिथुन, तुला, कुंभ राशि शूद्र वर्ण हैं। वर के वर्ण से कन्या का उच्च वर्ण रहना पण्डितों ने शुभ नहीं कहे हैं ॥ १० ॥

वश्यावश्यविचारः (रामः)-

हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजाश्च भक्ष्याः।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत्॥११॥

भा० टी०–सिंह राशि को छोड़कर सम्पूर्ण राशि मनुष्य राशि के वश्य हैं, और सब जलजभक्ष्य हैं, और वृश्चिक को त्याग कर सब सिंह के वश्य हैं, और सब व्यवहार से मनुष्यों को जानना चाहिये ॥ ११ ॥

ताराविचारः (मु० चि०)-

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत् कन्याभं वरभादपि।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ १२ ॥

भा० टी०–कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक, और वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र पर्यन्त गणना कर उन संख्या में ९ का भाग दे शेष में यदि ३।५।७ बचै तो अशुभ तारा जाने ॥ १२ ॥

योनिविचारः (श्लोकाः)--

अश्विनीवरुणश्चाश्वो रेवतीभरणीगजः।

वर लक्षणम् (गोविन्दराजः)-

सुशीलश्चारुबुद्धिश्च व्यवहारपटुः क्षमी ।
उदारो वाक्पटुर्वाग्मी गुणयुक्तो वरोमतः ॥ २ ॥
परस्परासम्बन्धः कुलजातो महाकविः ।
कान्तः सुलक्षणः श्रीमान् मातृपितृयुतोवरः ॥ ३ ॥

इनका अर्थ स्पष्टार्थ है ॥ २ ॥ ३ ॥

विवाह योग्य कन्याविचारः (मनुः)-

असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः ।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने ॥ ४ ॥

भा० टी०-माता जिस गोत्र की हो उस गोत्र में सात पीढ़ी के भीतर की हो, और पिता के गोत्री न हो वह स्त्री द्विजातियों के दारकर्म और मैथुन के लिये प्रशस्त है ॥ ४ ॥

जन्म नाम विचारः (मदीयवृत्तम्)-

वरस्य कन्यकायाश्च जन्मभाभ्यां महीसुरः ।
अवर्गादिकवर्गाश्च वर्णादीन् प्रविचारयेत् ॥ ५ ॥
नृणामज्ञात जन्मर्क्षं नामभे कल्पयेत्तदा ।
राशिकूटादि सर्वं हि तेनैव परिचिन्तयेत् ॥ ६ ॥
जन्मधिष्ण्येनजन्मर्क्षं नामभेन तु नामभम् ।
योज्यं यदा व्यत्ययेन तदामृत्युर्द्वयोर्भवेत् ॥ ७ ॥

इनका अर्थ सरल है ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

वर्ग विचारः (मु० चि०)-

अ-क-च-ट-त-प-य-श-वर्गाः खगेशमार्जारसिंहश्वनाम् ।
सर्पाखुमृगवीनां निजपञ्चमवैरिणामष्टौ ॥ ८ ॥

अगम्यपश्चेद्दद्यात् धर्मकर्मादिनिन्दितम् ।
एतत् सर्वं विचार्य सर्वांस्तु दोषान्मातादिनाशु च ॥ ५ ॥
सदृशांश्च कुलमध्ये तु सुलग्नसमये भवेत् ।
तस्मात् [illegible] [illegible] प्रयत्नात्सम्पूर्णैः ॥ ६ ॥

भा० टी०–अ वर्ग का गरुड़, क वर्ग का बिलाव, च वर्ग का सिंह, ट वर्ग स्वान, त वर्ग का सर्प, प वर्ग का मूषक, य वर्ग का मृग, श वर्ग का मेढा वर्ग है। और अपने वर्ग से पाँचवाँ वर्ग शत्रु है ॥ ८ ॥

वर्णाद्यष्टकूटानि (मु० चि०)-

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम् ।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥ ९ ॥

भा० टी०–१ वर्ण, २ वश्य, ३ तारा, ४ योनि, ५ ग्रहमैत्री, ६ गणमैत्री, ७ भकूट, ८ नाड़ी ये आठ एक से एक गुण में अधिक हैं, सब ३६ गुण हैं ॥

वर्णविचारः (रामः)—

द्विजा झषालिकर्कटास्ततो नृपा विशोङ्घ्रिजाः ।
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ॥ १० ॥

भा० टी०–मीन, वृश्चिक, कर्क राशि ब्राह्मण, मेष, सिंह, धन राशि क्षत्रिय, वृष, कन्या, मकर राशि वैश्य, और मिथुन, तुला, कुंभ राशि शूद्र वर्ण हैं। वर के वर्ण से कन्या का उच्च वर्ण रहना पण्डितों ने शुभ नहीं कहे हैं ॥ १० ॥

वश्यावश्यविचारः (रामः)-

हित्वा मृगेन्द्रं नराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजाश्च भक्ष्याः ।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत् ॥११॥

भा० टी०–सिंह राशि को छोड़कर सम्पूर्ण राशि मनुष्य राशि के वश्य हैं, और सब जलजभक्ष्य हैं, और वृश्चिक को त्याग कर सब सिंह के वश्य हैं, और सब व्यवहार से मनुष्यों को जानना चाहिये ॥ ११ ॥

ताराविचारः (मु० चि०)-

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत् कन्याभं वरभादपि ।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ १२ ॥

भा० टी०–कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक, और वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र पर्यन्त गणना कर उन संख्या में ९ का भाग दे शेष में यदि ३।५।७ बचे तो अशुभ तारा जाने ॥ १२ ॥

योनिविचारः (संग्रहे)--

अश्विनीवरुणश्चाश्वो रेवतीभरणीगजः ।

भा० टी०–सूर्य के मंगल बृहस्पति चन्द्रमा मित्र, शुक्र शनि शत्रु, बुध सम। चन्द्रमा के बुध सूर्य मित्र, शत्रु कोई नहीं, मंगल गुरु शुक्र शनि सम। मंगल के चन्द्रमा बृहस्पति सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र शनि सम। बुध के शुक्र सूर्य मित्र, चन्द्र शत्रु, बृहस्पति शनि मंगल सम। बृहस्पति के सूर्य चन्द्र मंगल मित्र, बुध शुक्र शत्रु, शनि सम। शुक्र के बुध शनि मित्र, चन्द्र सूर्य शत्रु, मंगल गुरु सम। शनि के बुध शुक्र मित्र, सूर्य चन्द्र मंगल शत्रु, बृहस्पति सम हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

गण विचारः (मु० मार्त०)–

पूर्वोत्तरार्द्रा क यमा मनुष्या
देवाः करान्त्याश्वि मृगादितीज्याः।
मित्रश्रुतिस्वाति युताश्च शेषा
रक्षांसि मैत्री स्वगणे प्रशस्ता ॥ १९ ॥
देवा सुराणां कलहोनितान्तं
योगे* मृतिर्मानव राक्षसानाम्।
देवा मनुष्येषु समा गुणानां
हासेन वृद्ध्या सकलेषु मैत्री ॥ २० ॥

भा० टी०–पू० फा०, पू० षा०, पू० भा०, उ० फा०, उ०षा०, उ०भा०, आ०,रो०,भ० ये नव नक्षत्र मनुष्यगण के हैं। ह०, रे०, अ०, पु०, मृ०, पु०, अनु०, श्र०, स्वाती ये नव नक्षत्र देवगण के हैं। शेष नव नक्षत्र कृ०, श्ले०, म०, चि०, वि०, ज्ये०, मू०, ध०, श०, ये राक्षसगण के हैं। वर कन्या दोनों का एक गण हो तो उत्तम मैत्री होती है। वर कन्या में एक का देवगण एक का राक्षस गण हो तो निरंतर कलह होता है, और एक का राक्षस गण एक का मनुष्यगण हो तो मृत्यु होती है, एक का देवगण एक

* अत्र विशेषः ज्योतिः प्रकाशे

पुंसो गणात् सुरगणे सुभगा च कन्या
धर्मप्रिया धनवती पतिवत्सला च।
विट्प्रीति मनुजे धनदा च कन्या
निर्वेदिता धनवती पतिवत्सला च ॥
कन्याः शिवप्रियश्च राक्षसे सर्वं नराधम च सम्।
राक्षसम् सर्वं हर्षं मैत्री विपरीतं न शोभनम् ॥ १ ॥

पुष्यश्च कृत्तिकाच्छागो नागश्च रोहिणी मृगः ॥ १३ ॥
आर्द्रामूलमपिश्वा च मूषकः फाल्गुनी तथा ।
मार्जारोऽदितिराश्लेषा गोजातिरुत्तराद्वयम् ॥ १४ ॥
महिषः स्वातिहस्तौ च मृगोज्येष्ठानुराधिका ।
व्याघ्रश्चित्राविशाखा च श्रुत्याषाढौ च मर्कटः ॥ १५ ॥
वसुभाद्रपदौसिंहो नकुलोऽभिजिद्विश्वयोः ।
योनयः कथिता भानां वैरमैत्रीविचार्यताम् ॥ १६ ॥

भा० टी०—अश्विनी शतभिष की *अश्व योनि है, रेवती भरणी की हाथी योनि, पुष्य कृत्तिका की मेढा योनि, रोहिणी मृगशिरा की सर्प योनि, आर्द्रा मूल की कुत्ता योनि, पूर्वाफाल्गुनि मघा की मूषक योनि, पुनर्वसु श्लेषा की बिलार योनि, उत्तरा फाल्गुनि उत्तराभाद्रपदा की गौ, स्वाती हस्त की भैंसा योनि ज्येष्ठानुराधा की मृग (हरिण) योनि, चित्रा विशाखा की व्याघ्र, श्रवण पूर्वाषाढ़ की वानर योनि, धनिष्ठा पूर्वभाद्रपद की सिंह योनि, अभिजिद् उत्तराषाढ़ की नकुल योनि है ये नक्षत्रों की योनि कहा है इसका वैर मैत्री विचारें ॥१३-१६॥

ग्रहमैत्री (मु० चि०)—

मित्राणि द्युमणेः कुजेज्यशशिनः शुक्रार्कजौ वैरिणौ
सौम्यश्चास्य समो विधोर्बुधरवी मित्रे न चास्त्यद्विपत् ।
शेषाश्चास्य समाः कुजस्य सुहृदश्चन्द्रेज्यसूर्या बुधः
शत्रुः शुक्रशनी समौ च शशिभूत्सूनोः सिताहस्करौ ॥ १७ ॥
मित्रेचास्य रिपुः शशी गुरुशनिक्ष्माजाः समा गीष्पते-
र्मित्राण्यर्ककुजेन्दवो बुधसितौ शत्रू समः सूर्यजः ।
मित्रे सौम्यशनी कवेः शशिरवी शत्रू कुजेज्यौ समौ,
मित्रे शुक्रबुधौ शनेः शशिरविक्ष्माजा द्विषोऽन्यः समः ॥१८॥

* [illegible]

भा० टी०—सूर्य के मंगल वृहस्पति चन्द्रमा मित्र, शुक्र शनि शत्रु, बुध सम। चन्द्रमा के बुध सूर्य मित्र, शत्रु कोई नहीं, मंगल गुरु शुक्र शनि सम। मंगल के चन्द्रमा वृहस्पति सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र शनि सम। बुध के शुक्र सूर्य मित्र, चन्द्र शत्रु, वृहस्पति शनि मंगल सम। वृहस्पति के सूर्य चन्द्र मंगल मित्र, बुध शुक्र शत्रु, शनि सम। शुक्र के बुध शनि मित्र, चन्द्र सूर्य शत्रु, मंगल गुरु सम। शनि के बुध शुक्र मित्र, सूर्य चन्द्र मंगल शत्रु, वृहस्पति सम हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

गण विचारः (मु० म०)-

पूर्वोत्तरार्द्रा क यमा मनुष्या
देवाः कशान्त्याश्वि मृगादितीज्याः ।
मित्रश्रुतिस्वाति युताश्च शेषा
रक्षांसि मैत्री स्वगणे प्रशस्ता ॥ १९ ॥
देवा सुराणां कलहोनितान्तं
योगे* मृतिर्मानव राक्षसानाम् ।
देवा मनुष्येषु समा गुणानां
हासेन वृद्धया सकलेषु मैत्री ॥ २० ॥

भा० टी०—पू० फा०, पू० षा०, पू० भा०, उ० फा०, उ०षा०, उ०भा०, आ०, रो०, भ० ये नव नक्षत्र मनुष्यगण के हैं। ह०, रे०, अ०, मृ०, पु०, पु०, अनु०, श्र०, स्वाती ये नव नक्षत्र देवगण के हैं। शेष नव नक्षत्र कृ०, श्ले०, म०, चि०, वि०, ज्ये०, मू०, ध०, श०, ये राक्षसगण के हैं। वर कन्या दोनों का एक गण हो तो उत्तम मैत्री होती है। वर कन्या में एक का देवगण एक का राक्षस गण हो तो निरंतर कलह होता है, और एक का राक्षस गण एक का मनुष्यगण हो तो मृत्यु होती है, एक का देवगण एक

* तत्र विशेषः ज्योतिः प्रकाशे-

पुंसो पदात् सुतगृहे सुभगा च कन्या
धर्मेऽस्थिता धनवती पतिवल्लभा च ।
द्विर्द्वादशे धनगृहे धनदा च कन्या
रिष्फेऽस्थिता धनवती पतिवल्लभा च ॥
अन्यः-विषमात्कन्यका राशेः षष्ठं चराष्टकं न सत् ।
समात् षष्ठं शुभं ज्ञेयं विपरीतं न शोभनम् ॥ १ ॥

पुष्यश्च कृत्तिकाच्छागो नागश्च रोहिणी मृगः ॥ १३ ॥
आर्द्रामूलमपिश्वा च मूषकः फाल्गुनी तथा ।
मार्जारोऽदितिराश्लेषा गोजातिरुत्तराद्वयम् ॥ १४ ॥
महिषः स्वातिहस्तौ च मृगोज्येष्ठानुराधिका ।
व्याघ्रश्चित्राविशाखा च शुल्याषाढो च मर्कटः ॥ १५ ॥
वसुभाद्रपदोसिंहो नकुलोऽभिजिद्विश्वयोः ।
योनयः कथिता भानां वैरमैत्रीविचार्यताम् ॥ १६ ॥

भा० टी०—अश्विनी शतभिष की *अश्व योनि है, रेवती भरणी की हस्ति योनि, पुष्य कृत्तिका की मेढा योनि, रोहिणी मृगशिरा की सर्प योनि, आर्द्रा मूल की कुत्ता योनि, पूर्वाफाल्गुनि मघा की मूषक योनि, पुनर्वसु श्लेषा की बिलार योनि, उत्तरा फाल्गुनि उत्तराभाद्रपदा की गौ, स्वाती हस्त की भैंसा योनि ज्येष्ठानुराधा की मृग (हरिण) योनि, चित्रा विशाखा की व्याघ्र, श्रवण पूर्वाषाढ़ की वानर योनि, धनिष्ठा पूर्वभाद्रपद की सिंह योनि, अभिजित् उत्तराषाढ़ की नकुल योनि है ये नक्षत्रों की योनि कहा है इसका वैर मैत्री विचारे ॥१३-१६॥

ग्रहमैत्री (मु० चि०)—

मित्राणि द्युमणेः कुजेज्यशशिनः शुक्रार्कजौ वैरिणौ
सौम्यश्चास्य समो विधोर्बुधरवी मित्रे न चास्यद्विपत् ।
शेषाश्चास्य समाः कुजस्य सुहृदश्चन्द्रेज्यसूर्या बुधः
शत्रुः शुक्रशनी समौ च शशिभृत्सूनोः सिताहस्करौ ॥ १७ ॥
मित्रेचास्य रिपुः शशी गुरुशनिक्ष्माजाः समा गीष्पते-
र्मित्राण्यर्ककुजेन्दवो बुधसितौ शत्रू समः सूर्यजः ।
मित्रे सौम्यशनी कवेः शशिरवी शत्रू कुजेज्यौ समौ,
मित्रे शुक्रबुधौ शनेः शशिरविक्ष्माजा द्विपोऽन्यः समः ॥१८॥

* अश्वो हस्ती मेष सर्पोश्वानोऽथमार्जारोऽथ स्याद्विडालोऽथ मूषः,
मृगोगावः वानरः व्याघ्रकालाव्याघ्रौ ऐला कुक्कुरो वानरश्च ।
घस्रपंथूर्गानरसिंहयाश्वी सिंहोऽथयोवारणोदयादितारा:,
नारांपुंसांजन्मभाद्क्रमचा ताराण्याज्या सप्तपञ्चत्रिसंख्या ॥ १ ॥

भा० टी०—सूर्य के मंगल बृहस्पति चन्द्रमा मित्र, शुक्र शनि शत्रु, बुध सम। चन्द्रमा के बुध सूर्य मित्र, शत्रु कोई नहीं, मंगल गुरु शुक्र शनि सम। मंगल के चन्द्रमा बृहस्पति सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र शनि सम। बुध के शुक्र सूर्य मित्र, चन्द्र शत्रु, बृहस्पति शनि मंगल सम। बृहस्पति के सूर्य चन्द्र मंगल मित्र, बुध शुक्र शत्रु, शनि सम। शुक्र के बुध शनि मित्र, चन्द्र सूर्य शत्रु, मंगल गुरु सम। शनि के बुध शुक्र मित्र, सूर्य चन्द्र मंगल शत्रु, बृहस्पति सम हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

गण विचारः (मु० मार्त्तं०)-

पूर्वोत्तरार्द्रा क यमा मनुष्या
देवाः करान्त्याश्वि मृगादितीज्याः।
मित्रश्रुतिस्वाति युताश्च शेषा
रक्षांसि मैत्री स्वगणे प्रशस्ता ॥ १९ ॥
देवा सुराणां कलहोनितान्तं
योगे* मृतिर्मानव राक्षसानाम्।
देवा मनुष्येषु समा गुणानां
हासेन वृद्धया सकलेषु मैत्री ॥ २० ॥

भा० टी०—पू० फा०, पू० षा०, पू० भा०, उ० फा०, उ०षा०, उ० [illegible] भा०, रो०, भ० ये नव नक्षत्र मनुष्यगण के हैं। ह०, रे०, अ०, मृ०, पु०, [illegible] अनु०, श्र०, स्वाती ये नव नक्षत्र देवगण के हैं। शेष नव [illegible] श्ले०, म०, चि०, वि०, ज्ये०, मू०, ध०, श०, ये राक्षसगण के [illegible] वर कन्या दोनों का एक गण हो तो उत्तम मैत्री होती है। [illegible] देवगण एक का राक्षस गण हो तो निरंतर कलह होता है। [illegible] राक्षस गण एक का मनुष्यगण हो तो मृत्यु होती है, [illegible]

---

* तत्र विशेषः ज्योतिः प्रकाशे-

पुंसो गृहात् सुतगृहे सुतदा च कन्या
धर्मेस्थिता धनवती पतिवल्लभा च।
द्विर्द्वादशे धनगृहे धनदा च [illegible]
रिष्फेस्थिता धनवती पतिव[illegible]।
अन्यः-विषमात्क[illegible] [illegible]
समात् षष्ठ [illegible] [illegible]

का मनुष्य गण हो तो समान प्रीति होती है, यदि इसका ह्रास हो तो ह्रास वृद्धि मैत्री होती है अर्थात् अपने २ गणमें मैत्री होती है। गृहेश और गृहका तथा स्वामी और सेवक का भी इसी प्रकार विचार करे ॥ १९ ॥ २० ॥

राशिकूट विचारः (मु० चि०)-

मृत्युः षडष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे।
द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥ २१ ॥

भा० टी०—वर कन्या की राशि षष्ठ अष्टम परस्पर हो तो मृत्यु, नवम पञ्चम हो तो पुत्र हानि, द्वितीय द्वादश हो तो दरिद्रता होती है शेष (तृतीय, एकादश चतुर्थ-दशम सप्तम) शुभ है* ॥ २१ ॥

दुष्टभकूट परिहारः (मु० चि०)-

प्रोक्ते * दुष्टभकूटके परिणयस्त्वेकाधिपत्ये शुभो-
ऽथो राशीश्वर सौहृदेऽपि गदितो नाड्यर्क्षशुद्धिर्यदि।
अन्यर्क्षेऽशपयोर्बलित्व सखिते नाड्यर्क्षशुद्धौ तथा,
ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावे निरुक्तो बुधैः ॥ २२ ॥

भा० टी०—१ दुष्टभकूट में वर कन्या के राशि के एक स्वामी हो, २ वर वधू के राशीश्वरों में मित्रता हो और नाड़ी नक्षत्र की शुद्धि हो, ३ राशि के नवांश के स्वामी बली हो और आपस में मित्र हो, ४ तारा शुद्ध हो, ५ पुरुष की राशि से कन्या की राशि वश्य हो और प्रत्येक परिहार में नाड़ी नक्षत्र शुद्ध हो तो विवाह शुभ है ॥ २२ ॥

शार्ङ्गधरीये तु–मीनालीस्थौ शुभे कीटे कुम्भे मिथुन तौलिनौ।
मकरे कर्कटानुरे न कुर्यात्तत्र पञ्चमे।
अन्यस्मिन्नपि च कश्यपी–द्विर्द्वादशं शुभं प्रोक्तं मीनादौ युग्मराशिषु।
मेषादौ शुभ राशौ तु निर्धनत्वं न संशयः।
* [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

नाडीविचारः (मु० चि०)-

ज्येष्ठार्यम्णेश नीराधिपभयुगयुगं दास्रभं चैकनाडी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या ।
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभं चापरस्यु-
र्दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां हि मृत्युः ॥२३॥

भा० टी०—ज्ये०, उ० फा०, आ०, श० इनसे दो २ नक्षत्र (ज्ये० मू०, उ० फा० ह०, आर्द्रा पुन०, श० पू०भा०) और अश्विनी आदि नाड़ी, पु०, मृ०, चि०, अनु०, भ०, ध०, पू०षा०, पू०फा०, उ० भा०, मध्य नाड़ी, स्वा० कृ०, श्ले०, उ०षा० इनसे दो दो नक्षत्र (स्वा० वि०, कृ० रो०, श्ले० म०, उ०षा०, श्र०) और रेवती अन्त्य नाड़ी, वर कन्या एक नाड़ी, अर्थात् आदि नाड़ी में अशुभ है और मध्य नाड़ी में मृत्यु होती है* ॥ २३ ॥

नाडीगणकूटयोरपवादः (मु० चि०)-

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव ।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥

भा० टी०—वर वधू की एक राशि और नक्षत्र भिन्न भिन्न हो, नक्षत्र दोनों की एक हो राशि भिन्न भिन्न हो तो नाड़ी का दोष और गुण का दोष नहीं होता है। इसी प्रकार नक्षत्र एक हो परन्तु यदि चरण का भेद हो तो नाड़ी का दोष नहीं होता है *॥ २४ ॥

गुणज्ञानम् (मु० मञ्जीरे)-

वर्णसाम्य उत वा वरेऽधिके द्वमाथ भदयवशयोर्दलं स्मृतम् ।
मित्रयोर्द्वयमिलाद्विपद्वशे भदयवैरिणवलं न किञ्चन ॥२५॥

स्वरोदये-* आद्यांशेन चतुर्थांशं चतुर्थांशेन चादिमम् ।
द्वितीयेन तृतीयं तु तृतीयेन द्वितीयकम् ।
एवं भांशव्यधो येषां जायते ...
तेषां मृत्युर्नसंदेहः दोषांशा ... ।
ब्रह्मयामले-*भामिनी जन्मनक्षत्राद् द्वितीयं ... ।
न शुभं भर्तृनाशाय कथितं ... ।

सार्धरूपमिहमिथतारयो स्यादथातिसुहृदो श्रुतिर्बलम् ।
मित्रयोस्त्रिकमिलासपत्नयोर्द्व्युदास इह खं महाद्विषोः ॥२६॥
मित्रयोश्च समताथयोः शरो वारिधिस्तु सममित्रयोर्बलम् ।
पावकस्तुसमयोस्समद्विषोरर्धमिन्दुररिमित्रयोरथ ॥ २७ ॥
नृस्त्रियोः सुरमनुष्ययो रसः पञ्चकं तु विपरीतयोर्बलम् ।
स्वेगणेपडमरास्त्रपो यदा स्त्रीनराविहकुरन्यथा नभः ॥ २८ ॥
योनिमैत्रमवलान्तिकं विना दुष्टकूटमपिचेद्युगं बलम् ।
एकमेकविरतेन्यथानभः खं समानपदभेवरान्तिके ॥ २६ ॥
भादिकूटबलयोः पडेकभे राशिभेदिति शरोऽन्यथा नगः ।
ऐन्द्रशैव च रमान्नवार्कपट्ट भेङ्गना मिथुनपुरुपाप्रिया ॥ ३० ॥

भा० टी०—वर वधू दोनों का वर्ण सम (एक) हो या वर श्रेष्ठ वर्ण का हो तो एक, वर हीन वर्ण का वधू श्रेष्ठ वर्ण का हो तो शून्य गुण बनता है। वश्य में भक्ष्य वश्य हो तो आधा, दोनों राशि में मित्रता हो तो दो, शत्रु वश्य हो तो एक, और भक्ष्य शत्रु हो तो शून्य गुण होता है। तारा विचार में—वर वधू दोनों में एक की शुभ एक की अशुभ तारा हो तो ,१॥ डेढ़ गुण, दोनों तारा शुभ हो तो ३ गुण होता है। योनि में अति मैत्री अर्थात् उत्तम प्रीति हो तो ४ गुण, सामान्य मित्रता हो तो ३ गुण सम हो तो २ गुण, वैरि हो तो १ गुण, अति वैर हो तो शून्य गुण होता है। ग्रहमैत्री में—दोनों के स्वामियों में परस्पर मित्रता हो या दोनों के एक ही स्वामी हों तो ५ गुण, दोनों के स्वामी सम मित्र हो तो ४ गुण, दोनों के स्वामी सम हो तो ३ गुण, एक का दूसरा सम दूसरे का पहला शत्रु हो तो आधा गुण, शत्रु मित्र हो तो एक गुण होता है। गण मैत्री में—वर वधू देवता मनुष्य हो तो ६ गुण, वधू देवता वर मनुष्य हो तो ५ गुण, दोनों देवता या दोनों मनुष्य अथवा दोनों राक्षस हों तो ६ गुण, स्त्री देवता पुरुष राक्षसगण का हो तो १ गुण इसके अतिरिक्त होने पर शून्य गुण होता है। दुष्टकूट में—यदि योनियों में मैत्री हो और षडाष्टक दूर हो तो ४ गुण, यदि योनि मैत्री और दूर में एक ही बनता हो तो एक गुण यदि योनि मैत्री और दूर न हो तो शून्य गुण, वर वधू दोनों का एकही नक्षत्र एकही चरण

हो तो शून्य गुण, सद्भकूट में—नृ दूर तथा योनि वैर हो तो ६ गुण, भिन्न राशि एक नक्षत्र हो तो ५ गुण, अन्य उत्तम भकूट में ७ गुण होते हैं। नाड़ी विचार में वर वधू दोनों की नाड़ी भिन्न २ हो तो ८ गुण, एक हो तो शून्य गुण होता है। रेवती से ६ नक्षत्र पूर्वभाग का, आर्द्रा से १२ नक्षत्र मध्य भाग का, ज्येष्ठा से नव नक्षत्र पर भाग के हैं। पूर्वभाग का प्रति श्रेष्ठ मध्य भाग दोनों ठीक हैं। पर भाग की स्त्री श्रेष्ठ है ॥ २५–३० ॥

१ वर्णे गुणज्ञानाय चक्रम्। वरस्य (पंक्तियाँ: कन्यायाः।)

व.४	ब्रा.	क्ष.	वै.	शू.
ब्रा.	१	०	०	०
क्ष.	१	१	०	०
वैश्य	१	१	१	०
शूद्र	१	१	१	१

२ वश्य गुणज्ञानायचक्रम्। वरस्य (पंक्तियाँ: कन्यायाः।)

वश्या	च.	मा.	ज.	व.	की.
चतु	२	१	१	॥	१
मानव	१	२	१	०	१
जलचर	१	१	२	१	१
वनच	०	०	१	२	०
कीट	१	०	१	०	२

३ तारायाः गुणबोधकचक्रम्। वरस्य (पंक्तियाँ: कन्यायाः।)

ता.	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
२	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
३	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
४	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
५	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
६	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
७	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
८	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
९	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३

४ ग्रहमैत्रिकस्य गुणज्ञानायचक्रम् ॥ वरस्य (पंक्तियाँ: कन्यायाः।)

ग्रहाः	सू.	च.	म.	बुध.	गुरुः	शु.	श.
सूर्यः	५	५	५	४	५	०	०
चन्द्रः	५	५	४	१	४	॥	॥
भौमः	५	४	५	॥	५	३	॥
बुधः	४	१	॥	५	॥	५	४
गुरुः	५	४	५	॥	५	॥	३
शुक्रः	०	॥	३	५	॥	५	५
शनिः	०	॥	॥	४	३	५	५

६ गणमैत्री गुणज्ञानायचक्र, वरस्य (पंक्तियाँ: कन्यायाः।)

गणाः	देवता	मनुष्य	राक्षस
देवता	६	५	१
मनुष्य	६	६	०
राक्षस	०	०	६

निंद्यगुणैर्विंशतिभिर्मध्ये वाणाधिकैर्मतम् ॥ ३२ ॥
तत्परैः पंचभिः श्रेष्ठ ततः श्रेष्ठतरं गुणैः ॥

भा० टी०–१६ गुण पर्यन्त अशुभ है, २० तक मध्यम, ३० पर्यन्त उत्तम, उसके बाद अति उत्तम होता है सद्कूट में ऐसा जाने, दुष्टकूट में ऐसा न जाने। मतान्तर है कि २० गुण तक निंद्य, २५ पर्यन्त मध्यम, उसके बाद ३० पर्यन्त श्रेष्ठ, उसके बाद अत्यन्त श्रेष्ठ जाने ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

भौम विचारः (संग्रहसर्वस्वे)-

लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाष्टमे कुजे ।
कन्या भर्तुविनाशाय भर्ता पत्नीविनाशकृत् ॥ ३३ ॥

भा० टी०–जन्म कुण्डली और चन्द्र कुंडली दोनों से लग्न, बारहवें, चौथे, सातवें तथा आठवें मंगल हो और कन्याकी कुण्डली में हो तो स्वामी का नाश करे, पति की कुण्डली में हो तो वह पत्नी का विनाश करनेवाला होता है पर दोनों के कुण्डलों में इस प्रकार का योग हो तो किसी का विनाश नहीं होता है ॥३३॥

परिहारः (तत्रैव)-

जामित्रे च यदा सौरिर्लग्ने वा हिबुकेऽथवा ।
अष्टमे द्वादशे वापि भौमदोषे विनाशकृत् ॥ ३४ ॥
शनिर्भौमोऽथवा कश्चित्पापो वा तादृशो भवेत् ।
तेष्वेव भवनेष्वेव भौमदोषं विनाशकृत् ॥ ३५ ॥

भा० टी०–शनि सप्तम, लग्न, चतुर्थ, अष्टम, द्वादश में शनि हो तो मंगल का दोष नहीं होता है। शनि मंगल वा अन्य पापग्रह उन्हीं स्थानों में वैसाही कन्या वर दोनों की कुण्डली में हो तो मंगल के दोष का नाश होता है, अर्थात् मंगल का दोष नहीं लगता है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

ग्रहशुद्धिः (मु० चि०)-

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात् ।
रविशुद्धिवशाच्छुभो वराणामुभयश्चन्द्रविशुद्धितो विवाहः॥३६॥

भा० टी०–छः वर्ष के बाद सम वर्षों में गुरु की शुद्धि रहने पर कन्या का और सूर्य की शुद्धि रहने पर वर का तथा होने पर वर कन्या दोनों का विवाह होना शुभ है ॥ ३६

७ राशिकूटस्य गुणबोधकचक्रम्

वरस्य (columns) — कन्यायाः (rows)

राशयः	१ मे.	२ वृ.	३ मि.	४ क.	५ सिं.	६ कं.	७ तु.	८ वृ.	९ ध.	१० म.	११ कुं.	१२ मी.
मे	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृष	०	७	०	७	७	०	७	७	७	०	७	७
मिथुन	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
कर्क	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सिंह	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
कन्या	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७
तुला	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृश्चिक	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
धन	०	०	७	०	०	७	७	०	७	[illegible]	७	७
मकर	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कुम्भ	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मीन	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

८ नाडिकूटस्य गुणज्ञानम्।

१ वरस्य। (columns) — कन्यायाः। (rows)

नाडी	आदि	मध्य	अन्त्य
आदि	०	८	८
मध्य	८	०	८
अन्त्य	८	८	०

४ अथाश्वयोनिकूटस्य गुणज्ञानायचक्रम्

वरस्य (columns) — कन्यायाः (rows)

योनिः	अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	मार्जार	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
अश्व	४	२	३	२	२	२	२	३	१	१	३	२	२	१
गज	[illegible]	४	३	३	२	२	२	२	३	२	२	३	२	०
मेष	३	३	४	२	२	३	२	३	३	१	३	०	३	१
सर्प	२	२	३	४	२	२	०	१	२	२	२	२	०	२
श्वान	२	२	२	२	४	१	१	२	२	१	०	२	२	१
मार्जार	२	२	३	२	१	४	०	२	२	१	२	२	२	२
मूषक	२	[illegible]	२	२	१	०	४	२	२	२	२	२	२	१
गौ	३	२	३	१	२	२	२	[illegible]	३	०	[illegible]	२	३	१
महिष	१	३	३	२	२	२	२	३	४	१	[illegible]	[illegible]	२	३
व्याघ्र	१	[illegible]	१	२	१	१	२	[illegible]	१	४	१	१	२	२
मृग	३	२	३	२	०	२	२	२	२	१	४	२	२	२
वानर	२	३	०	२	२	[illegible]	२	२	२	[illegible]	२	४	२	३
नकुल	२	२	३	०	२	२	२	३	[illegible]	२	२	२	४	२
सिंह	१	०	१	२	१	[illegible]	१	१	३	२	२	१	२	४

गुणैः षोडशभिर्निंद्यं मध्यमाविंशतिस्तथा।
श्रेष्ठं त्रिंशद्गुणं यावत्परतस्तूत्तमोत्तमं ॥ ३१ ॥
सद्भकूटे इतिज्ञेयं दुष्टकूटेऽथ कथ्यते।

निंद्यंगुणैर्विंशतिभिर्मध्ये बाणाधिकैर्मतम् ॥ ३२ ॥
तत्परैः पंचभिः श्रेष्ठ ततः श्रेष्ठतरं गुणैः ॥

भा० टी०-१९ गुण पर्यन्त अशुभ है, २० तक मध्यम, ३० पर्यन्त उत्तम, उसके बाद अति उत्तम होता है सद्कूट में ऐसा जाने, दुष्कूट में ऐसा न जाने। मतान्तर है कि २० गुण तक निंद्य, २५ पर्यन्त मध्यम, उसके बाद ३० पर्यन्त श्रेष्ठ, उसके बाद अत्यन्त श्रेष्ठ जाने ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

भौम विचारः (मंगलमर्यादा)-

लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाष्टमे कुजे।
कन्या भर्तुविनाशाय भर्ता पत्नीविनाशकृत् ॥ ३३ ॥

भा० टी०-जन्म कुण्डली और चन्द्र कुंडली दोनों से लग्न, बारहवें, चौथे, सातवें तथा आठवें मंगल हो और कन्या की कुण्डली में हो तो स्वामी का नाश करे, पति की कुण्डली में हो तो वह पत्नी का विनाश करनेवाला होता है यह दोनों के कुण्डली में इस प्रकार का योग हो तो किसी का विनाश नहीं होता है ॥३३॥

परिहारः (सर्वत्र)-

जामित्रे च यदा सौरिर्लग्ने वा हिबुकेऽथवा।
अष्टमे द्वादशे वापि भौमदोषे विनाशकृत् ॥ ३४ ॥
शनिर्भौमोऽथवा कश्चित्पापो वा तादृशो भवेत्।
तेष्वेव भवनेष्वेव भौमदोषं विनाशकृत् ॥ ३५ ॥

भा० टी०-शनि सातवें, लग्न, चतुर्थ, अष्टम, द्वादश में शनि हो तो मंगल का दोष नहीं होता है। शनि मंगल या अन्य पापग्रह इन्हीं स्थानों में बैठा हो कन्या वर दोनों की कुण्डली में हो तो मंगल के दोष का नाश होता है, अर्थात् मंगल का दोष नहीं लगता है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

ग्रहशुद्धिः (गु० वि०)-

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात्।
रविशुद्धिवशाच्छुभो [illegible] ॥३६॥

भा० टी०-छः वर्ष के [illegible] कन्या का और सूर्य की शुद्धि होने पर वर का तथा चन्द्रमा की शुद्धि होने पर वर कन्या दोनों का विवाह होना शुभ है ॥ ३६ ॥

विवाहे विहितमासाः (मु० चि०)–

मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुभे।
अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिकपौषमधुष्वपि ॥ ३७॥

भा० टी०–मिथुन, कुंभ, मकर, वृश्चिक, वृष, मेष राशि के सूर्य में विवाह करना श्रेष्ठ है मिथुन के सूर्य में १० अंश तक, मतान्तर से आषाढ़ सुदी १० तक वृश्चिक के सूर्य में कार्तिक में मकर के सूर्य में पौष में मेष के सूर्य में चैत्र में भी विवाह करना उत्तम है ॥ ३७ ॥

विवाहे जन्म मासादि निषेधः (मु० चि०)–

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोर्जन्ममासभतिथौ करग्रहः ।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते चेद्‌द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः॥३८॥

भा० टी०–जन्म मास, जन्म नक्षत्र, जन्म तिथि में आद्य गर्भ के पुत्र कन्या का विवाह करना उचित नहीं है, द्वितीयादि गर्भ वाले पुत्र कन्या का विवाह जन्म मासादि में हो तो वे पुत्र देने वाले होते हैं ॥ ३८ ॥

ज्येष्ठमासे ज्येष्ठे विवाहनिषेधः (मु० चि०)–

ज्येष्ठद्वंद्वं मध्यमं संप्रदिष्टं त्रिज्येष्ठं चेन्नैवं युक्तं कदापि ।
केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोज्झ्य चाहुर्नैवान्योन्यं ज्येष्ठयोःस्याद्विवाहः॥

भा० टी०–ज्येष्ठ वर ज्येष्ठ कन्या और ज्येष्ठ में विवाह ये तीन ज्येष्ठ कहीं [illegible] नहीं है ज्येष्ठ कन्या ज्येष्ठ वर का ज्येष्ठ के अतिरिक्त विवाहोक्त अन्य मास में विवाह होना और वर ज्येष्ठ ज्येष्ठ मास अथवा कन्या ज्येष्ठ ज्येष्ठ मास ये भी [illegible] [illegible] हैं पर मध्यम है, कोई कहते हैं कि कृत्तिका के सूर्य में त्रिज्येष्ठ दो ज्येष्ठ का दोष नहीं है ॥ ३९ ॥

वरवरण मुहूर्त. (मु० चि०)–

[illegible] भ्राता कन्यकासोदरः शुभदिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः ।
[illegible] [illegible]दानादिना ध्रुवमृदुवह्निपूर्वात्रयैराचरेत् ॥ ४० ॥

भा० टी०–[illegible] भ्राता कन्या का सोदर भाई शुभ दिन में [illegible] [illegible] और तीनों पूर्वा इन नक्षत्रों में गीतवाद्यादिक से संयुक्त होकर वर [illegible] [illegible] वरण ([illegible]) करे । [illegible] [illegible] है [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥ १ ॥

होने के कारण आगे प्रारम्भ का नाम है यह कार्य भाई को करना योग्य है ॥४०॥

विवाह पूर्व कृत्यारम्भ समयः (संग्रहे)-

विवाहकृत्यं सकलं विवाहभैर्विलोकयेन्नैव बलं हिमद्युतेः ।
नवत्रिषष्ठेऽह्नि विवाहपूर्वतो न वर्णको मण्डपवेदिमङ्गलम् ॥ ४१ ॥

भा० टी०—विवाहोक्त नक्षत्र (रो० मृ० म० उ० ३ ह० स्वा० अ० मू० रे०) में विवाह सम्बन्धी सम्पूर्ण कार्य न करें ॥ ४१ ॥

विवाह नक्षत्राणि (मु० चि०)-

निर्वेधैःशशिकर मूलमैत्र पित्र्य-
ब्राह्मान्त्युत्तरपवनैः शुभो विवाहः ।
रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्व-
प्रान्त्यांघ्रिः श्रुतितिथिभागतोऽभिजित्स्यात् ॥ ४२ ॥

भा० टी०—वेध से रहित मृ०, ह०, मू०, अनु०, म०, रो०, रे०, तीनों उत्तरा स्वाती इन ११ नक्षत्रों में रिक्ता अमावस्या को त्यागकर अन्य शुभ तिथि शुभ वारों में विवाह करना शुभ है । उत्तराषाढ़ का चौथा चरण और श्रवण का पहला चरण इनके मध्य अभिजित् नक्षत्र का मान है ॥ ४२ ॥

विवाहे दश दोषाः (मु० मा०)

वेधः पातो युतिः क्रान्तिर्लत्तैकार्गल पञ्चकम् ।
दग्धोपग्रहयामित्र दोषाख्याश्च इमे दश ॥ ४३ ॥

भा० टी०—वेध, पात, युति, क्रान्ति, साम्य, लत्ता, एकार्गल, दुष्ट दग्ध, दग्ध तिथि, उपग्रह, यामित्र, विवाह में ये १० दोष त्याग करने योग्य हैं ॥४३॥

१ वेधदोषः (मु० मा०)-

रेखा पञ्चोर्ध्वतिर्यक् स्याद्द्वे द्वे कोणे च कोणयोः ।
एवं पञ्चशलाकाख्यं विवाहे वेध साधनम् ॥ ४४ ॥

भा० टी०—५ रेखा खड़े और ५ रेखा पड़े तथा दो दो रेखा कोण में खिंचने से विवाह में वेध साधन का पंचशलाका चक्र बनता है । कृत्तिका से द्वितीय रेखा पर लिखकर क्रम क्रम से अभिजित् के सहित सब नक्षत्रों को लिखे फिर सन्मुख के जो ग्रह हों वह वही रेखा पर जाने ॥ ४४ ॥

विवाहे पञ्चशलाका वेधः (मु० चि०)-

वेधोऽन्योन्यमसौ विरिञ्च्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयो-
र्विश्वेन्द्वोर्हरिपित्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः ॥
स्वातीवारुणयोर्भवेन्निऋतिभादित्योस्तथोपान्त्ययोः
खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयो द्वयोः ॥ ४५ ॥

भा० टी०—रोहिणी अभिजित् का, भरणी अनुराधा का, उत्तराषाढ़ा मृगशिरा का, श्रवण मघा का, स्वाती शतभिष का, मूल पुनर्वसु का, उत्तराफाल्गुनी रेवती का परस्पर वेध होता है, इनमें प्रथम और चतुर्थ चरण से, द्वितीय और तृतीय चरण से परस्पर * वेध होता है (यहाँ विवाहोक्त नक्षत्रों का ही वेध देखना है) ॥ ४५ ॥

अन्येषु शुभ कार्येषु सप्त शलाका वेधः (मु० चि०)-

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे वसु-
द्वीशे वैश्वसुधांशुभे हयभगे सार्पानुराधे मिथः ।
हस्तोपान्त्यमभे विधातृविधिभे मूलादितित्वाष्ट्रभे-
ऽवाताग्नी यमभे कृशानुहरिभे विद्धेऽद्रिरेखे मिथः ॥४६॥

भा० टी०—सप्तशलाका चक्र में ज्येष्ठा पुष्य का, शतभिष स्वाती का, पूर्वाषाढ़ा आर्द्रा का, रेवती उत्तराफाल्गुनी का, धनिष्ठा विशाखा का, उत्तराषाढ़ा मृगशिरा का, अश्विनी पूर्वाफाल्गुनी का, श्लेषा अनुराधा का, हस्त उत्तराभाद्रपद का, रोहिणी अभिजित का, मूल पुनर्वसु का, चित्रा पूर्वाभाद्रपद का, भरणी मघा का, कृत्तिका श्रवण का वेध होता है ॥ ४६ ॥

[illegible]-

[illegible] शुभदं [illegible] ।
[illegible] न शुभं [illegible] पादाम्बुजाद्यैरिति [illegible] ॥ ४७ ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

४ क्रान्तिसाम्यदोषः (मु० ग०)-

ऊर्ध्वरेखात्रयं चैव तिर्यग्रेखात्रयं तथा।
क्रान्तिसाम्यं बुधैर्ज्ञेयं मध्येमीनं तु योजयेत्॥
मेषसिंहौ तुलाकुम्भौ गोनक्रौ कर्कवृश्चिकौ।
कन्यामीनौ धनुर्युग्मौ तत्रान्योन्यं स्थिता बुधैः,
रविचन्द्रौ तदाज्ञेयः क्रान्ति साम्यस्य सम्भवः॥ ५२॥

भा० टी०-तीन रेखा खड़े, औ तीन रेखा पेंडे लिखे, मध्य में मीन को स्थापित करे बाद सब राशियों को स्थापितकरे मेष-सिंह में, तुला-मेष में, वृष-मकर में, कर्क-वृश्चिक में, कन्या-मीन में, धन-मिथुन में सूर्य चन्द्रमा हो तो क्रान्ति साम्य होता है॥ ५२॥

५ लत्तादोषः (मु० चि०)-

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि।
संलत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमाः सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात्॥

भा० टी०-बुध अपने अधिष्ठित नक्षत्र से पीछे सातवें नक्षत्र पर, राहु जिस नक्षत्र पर है उससे पीछे ९वें नक्षत्र पर, पूर्ण चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर है उससे पीछे २२वें नक्षत्र पर, शुक्र जिस नक्षत्र पर है उससे पीछे ५वें नक्षत्र पर, सूर्य जिस नक्षत्र पर है उसके आगे १२वें नक्षत्र पर, शनि ८ वें, गुरु ६वें, मंगल तीसरे नक्षत्र पर लत्ता दोष को करता है, वक्री ग्रह की लत्ता इससे विपरीत जाने॥ ५३॥

६ एकार्गलदोषः (मु० चि०)-

व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वेशूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे।
एकार्गलाख्योह्यभिजित्समेतो दोषःशशीचेद् विषमर्क्षगोऽर्कात्॥

भा० टी०-जिस दिन सूर्य के नक्षत्र से गिनने पर विषम नक्षत्र चन्द्रमा हो यदि उस दिन व्याघात, गंड, व्यतीपात, विष्कंभ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ, अतिगंड, इन योगों में से कोई योग हो तो एकार्गल दोष होता है॥ ५४॥

७ बुधपञ्चकदोषः—

रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातां,
शकमितिरथ तष्टाङ्कैर्यदा पञ्च शेषाः।

रुगनलनृपचौरा मृत्युसंज्ञश्च वाणो,
नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये सशल्यः ॥ ५५ ॥

भा० टी०–सूर्य अपने राशिके हो उसके बीते अंशको संख्या जो हो उसको पाँच जगह धरे उसमें अलग २ क्रमशः६।३।१।८।४ इन अंकोंको जोड़े फिर यदि ९ का भाग देने से पहले जगह ५ शेष बचे तो रोग, दूसरे जगह ५ शेष बचे तो अग्नि, तीसरे जगह ५ शेष बचे तो राज, चौथे जगह ५ शेष बचेतो चौर, पाँचवें जगह ५ शेष बचे तो मृत्युबाण होता है। पाँचो स्थानों के शेष को एकत्र जोड़ कर ९ का भाग देने से यदि ५ शेष बचे तो सशल्य बाण होता है। * किसी मतांश में बाण नहीं लगता है ॥ ५५ ॥

८ दग्धतिथिदोषः (मु० चि०)–

चापान्त्यगे गोघटगेपतङ्गे कर्काजगेस्त्रीमिथुने स्थिते च ।
सिंहालिगे नक्रघटेसमाः स्युस्तिथ्योद्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः॥५६॥

भा० टी०–धन-मकर के सूर्य में द्वितीया, वृष-कुम्भ के सूर्य में चतुर्थी, कर्क-मेष के सूर्य में षष्ठी, कन्या-मिथुन के सूर्य में अष्टमी, सिंह-वृश्चिक के सूर्य में दशमी, मकर-तुला के सूर्य में द्वादशी दग्ध तिथि होती है ॥ ५६ ॥

९ उपग्रह (मु० चि०)–

शराष्टदिग्शक्रनगातिधृत्यस्तिथिधृतिश्च प्रकृतेश्च पञ्च ।
उपग्रहो सूर्यभतोऽब्जताराः शुभा न देशे कुरु वाह्लिकानाम्॥५७॥

भा० टी०–सूर्य के नक्षत्र से ५।८।१०।१४।७।१९।१५।१८।२१।२२।२३।२४।२५ इन नक्षत्रों पर यदि चन्द्रमा हो तो उपग्रह दोष होता है यह कुरु और बाह्लिक देशमें शुभ नहीं होता है ॥ ५७ ॥

१० यामित्र दोषः (मु० चि०)–

लग्नाच्चन्द्रान्मदन भवनगे खेटे न स्यादिहपरिणयनम् ।
किं वा बाणाशुगमितलवगे यामित्रं स्यादशुभ करमिदम्॥५८

* एके नेत्रे वेदसंख्ये रसे रागे शशांङ्कके ।
मृत्युर्वह्निनृपश्चोरो रोगोवाणाःक्रमेण च ॥
तत्तदंशेरत्नयुक्ते तत्तद्बाणाः प्रकीर्तिताः ।
तेषांमध्येशरस्त्वयस्तु धनञ्जय प्रकीर्तितः ॥
न भवन्तिह्यमीबाणाः शेषांकेषुमहीसुर ।
वियदमलधरारागेनन्दसूर्येन्द्रभूपधृति कृतिगुणवह्निपञ्चविंशोमसंख्ये ॥

लग्नशुद्धिः (मु० चि०)-

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः।
लग्नेट् कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौर्लग्नेट् शुभाराश्च मदे च सर्वे
त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोर्कपुत्रा:-
त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोऽष्ट-
त्रिद्यूनषड्व्ययगृहान् परिहृत्य शस्तः ॥ ६४ ॥

भा० टी०-विवाह लग्न से १२ वें शनि, १० में मंगल, ३ रे शुक्र, लग्नमें चन्द्रमा और पापग्रह ये शुभ नहीं है, और छठे लग्नेश शुक्र चन्द्रमा, आठवें स्थान में चन्द्रमा लग्नेश शुभग्रह (शुक्र-बुध-बृहस्पति) तथा मंगल शुभ नहीं होते हैं, और सातवें समस्त ग्रह अशुभ हैं। विवाह लग्न से ३।८।६ भावों में सूर्य-केतु-राहु-शनि शुभ होते हैं, इन्हीं में विशेषफलदायक पाते हैं, ३।११।६ वें मंगल, २।३।११ वें चन्द्रमा, और ७।१२।८ वें स्थानोंको छोड़कर अन्य स्थानों में बुध-गुरु, ८।३।७।६।१२ इन स्थानों को छोड़ अन्यस्थानों में शुक्र स्थित हो तो शुभ होता है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः।
भवेदाये केन्द्रेऽगप उत लवेशो यदि तदा
समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥ ६५ ॥

भा० टी०-विवाह लग्नसे केन्द्र (१।४।७।१०) में बुध हो तो एक सौ दोषों को हरता है,शुक्र हो तो दो सौ दोषों को हरता है और बृहस्पति हो तो लक्ष दोषों का संहार करता है,ग्यारहवें केन्द्र में लग्नेश वा लग्ननवांशेश हो तो दोषों के समूह का नाश उस प्रकार से करता है कि जिस प्रकार अग्नि रुई के ढेरी का नाश करता है ॥ ६५ ॥

यदा लग्नांशेशो लवमथ तनुं पश्यति युतो
भवेद्वाथं वोढुः शुभफलमनल्पं रचयति।
लवद्यूनस्वामी लवमदनभं लग्नमदनं

प्रपश्येद्वा वध्वाः शुभमितरथा ज्ञेयमशुभम् ॥ ६६ ॥

भा० टी०—यदि लग्नेश अंशेश लग्न तथा लग्नांश को देखे वा युत हो तो वर को अत्यंत शुभ फल होता है, बलवान् नवमांश से सप्तम नवमांश का स्वामी नवमांश को यद्वा सप्तम भावको देखे या युक्त हो तो कन्या को शुभ फल होता है, और इस से भिन्न हो तो अशुभ होता है ॥ ६६ ॥

लवेशोलवं लग्नपो लग्नगेहं प्रपश्येन्मिथो वा शुभं स्याद्वरस्य।
लवद्यूनपोंऽशं द्युनं लग्नपोऽस्तं मिथोऽवेक्षते स्याच्छुभं कन्यकायाः॥

भा० टी०—लग्नेश लग्नको अंशेश अंश को देखे, या परस्पर लग्नेश अंशेश लग्नको देखे तो वरको शुभ होता है। सप्तमेश सप्तम भाव को सप्तम भावेश अंशको वा अंशेश भावको भावेश अंशको देखे तो कन्या को शुभ हो॥६७॥

लवपतिशुभमित्रं वीक्षतेऽशं तनुं वा
परिणयनकरस्य स्याच्छुभं शास्त्रदृष्टम्।
मदनलवपमित्रं सौम्यमंशं द्युनं वा
तनुमदनगृहं चेद्वीक्षते शर्म वध्वाः ॥ ६८ ॥

भा० टी०—लग्न नवमांशेश का कोई शुभग्रह मित्र अपने अंशको देखे तो विवाह में पुत्र पौत्रादि श्रेष्ठ फल करे, सप्तम भावांशेश का मित्र शुभ ग्रह सप्तम भावको तथा लग्न नवमांश को देखे, या लग्नेश सप्तम भावको देखे तो वधू को शास्त्रोक्त पुत्र पौत्रादि शुभ फल होवे ॥ ६८ ॥

वधू प्रवेशमुहूर्तः (मु० चि०)-

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद् वधूप्रवेशोऽष्टदिनान्तराले
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमास दिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम्॥६६॥

भा० टी०—विवाह से १६ दिनके भीतर सम (२।४।६।८।१०।१२।१४ १६) तथा ७।५।६ दिनमें वधू प्रवेश होना शुभ है। इसके बाद विषम पर्यन्त दिन लिखा है, अर्थात् १६ दिनके बाद १७।१६।२१ इत्यादि एक मास के भीतर विषमदिनो में* वधू प्रवेश होना शुभ है। फिर एक महीने के बाद ३।५।७ इत्यादि विषम मासोंमें, फिर १।३।५ वर्ष में पाँच वर्ष के बाद,विषम समवर्ष का निर्णय नहीं है यथेष्ट वर्ष में वधू प्रवेश होना शुभ है ॥ ६६ ॥

* इसका विशेष विचार मेरे चि० बालमुकुन्द पाण्डेय कृत द्विरागमन निर्णय तथा बाल बोध सारावली में है।

तथा च मदीयविचारः-

वधूप्रवेशः शुभदः मेषेलौघटगे रवौ ।
मृदुश्रोत्रध्रुवक्षिप्र मूलानिलमघावसौ ॥ ७० ॥
अरिक्ततिथ्यां चन्द्रेज्य भृगुनन्ददितेऽथवा ।
बुधवारे शुभेयोगे प्रवेशो भर्तृमन्दिरे ॥ ७१ ॥

भा० टी०-मृदु (मृ० रे० चि० अनु०) श्रवण, ध्रुवसंज्ञक (उ० ३ रो०) क्षिप्र (ह० अश्वि० पुष्य) मूल, स्वाती, मघा, धनिष्ठा नक्षत्र में रिक्ता तिथि के अतिरिक्त तिथियों में सोम, गुरु, शुक्र अथवा बुधवार में वधू को पति के घर में प्रथम प्रवेश करना शुभ है । जो लोग "वैकामार्गासितेंज्यु" इस वचन के बल पर वैशाख में वृष के संक्रान्ति होने पर भी पूर्णिमा के भीतर वधू प्रवेश के लिये कहे यह ठीक नहीं क्योंकि ऐसे तो वैशाख तथा फाल्गुन में मीन के संक्रान्ति मार्गशीर्षमें तुला धन की संक्रान्तिमें भी वधू प्रवेश हो जायगा यहाँ विवाहवत् सौर मास का ही ग्रहण है, रहा जो "विवाहोक्तेषु मासेषु वधूप्रविशेद्विशेत्" इस सिद्धान्त के अनुसार वधू प्रवेश करे उनके लिये वृष के संक्रान्ति में वैशाख ही केवल नहीं किन्तु वे ज्येष्ठ आषाढ़ में भी वधू प्रवेश कर सकते हैं ॥७०॥७१॥

ज्येष्ठे पतिज्येष्ठमथाधिकेपतिं, हन्त्यादिमे भर्तृगृहे वधू शुचौ ।
श्वश्रूं सहस्ये श्वशुरं क्षये तनुं, तातं मधौ तातगृहे विवाहतः ॥

भा० टी०-विवाह के बाद प्रथम ज्येष्ठ के महीने में वधू अपने पति के घर में रहे तो पति के ज्येष्ठ भाई को मारे अर्थात् मृत्यु हो, अधिमास में पति को, आषाढ़ में सासु को, पौष में श्वसुर को क्षयमास में अपने शरीर का नाश करती है । तथा प्रथम चैत्र में पिता के घर रहे तो पिता को ही मारे ॥ ७२ ॥

द्विरागमनमुहूर्तः (मु० चि०)-

चेद्दथौजहायने घटालिमेषगे रवौ,
रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे ।
नृयुग्ममीनकन्यका तुलावृषे विलग्नके,
द्विरागमं लघुध्रुवे चरस्रवे मृदूडुनि ॥ ७३ ॥

भा० टी०-विवाह से विषम वर्षों में, कुम्भ, वृश्चिक, मेष राशि के सूर्य में, सूर्य गुरु के शुद्ध रहने पर, शुभग्रह के वारों (चं० बु० बृ० शु०) में लघु

(ह०, अश्वि०, पुष्य, अभि०) ध्रुव (उ० ३, रो०) चर (स्वा०, पु०, श्र०, ध०, श०) मूल, मृदु (मृ०, रे०, चि०, अनु०) नक्षत्रों में द्विरागमन शुभहोता है॥

द्विरागमने शुक्रशुद्धिः (मु० चि०)-

दैत्येज्योह्यभिमुखदक्षिणेयदिस्याद्
गच्छेयुर्न हि शिशुगर्भिणीनवोढः।
बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा,
चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा ॥ ७४ ॥

भा० टी०—बालक, गर्भिणी स्त्री और नवोढा स्त्री सन्मुख या दहिने शुक्र हो तो यात्रा न करे। बालक यदि यात्रा करे तो विपत्ति को प्राप्त हो, पति के घर द्वितीय यात्रामें स्त्री यात्रा करे तो बाँझिन हो, सगर्भा स्त्री गमन करे तो गर्भस्राव हो

प्रतिशुक्रापवादः (मु० चि०)-

नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडनेविबुधतीर्थयात्रयोः।
नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्न हि७५

भा० टी०—नगर में जाने के समय, उपद्रव में, विवाह में देव दर्शन तीर्थ यात्रा में, राजा से पीड़ित होने में वधू प्रवेश में स्त्री को अपने पति के घर जाने में सन्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है ॥ ७५ ॥

तथा च

पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्यसम्भवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसम्भवः।
भृग्वङ्गिरोवत्स वसिष्ठ कश्यपात्र्याणां भरद्वाज मुनेः कुले तथा७६

भा० टी०—यदि वधू को पिता के घर स्तन उभर आवे और रजोदर्शन हो जाय तो सन्मुख दक्षिण शुक्रका दोष नहीं होता है। और भृगु-अंगिरा-वत्स-वसिष्ट-कश्यप-अत्रि-भरद्वाज गोत्र वालों को भी प्रति शुक्र का दोष नहीं होता है ॥ ७६ ॥

शुक्रान्धः (ग्रन्थान्तरे)-

रेवत्यादिमृगान्ते च यावत्तिष्ठति चन्द्रमा।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सन्मुखे दक्षिणे शुभः ॥ ७७ ॥

इसका साफ अर्थ है ॥ ७७ ॥

द्वयङ्ग विचारः (द्विरागमन निर्णये)—

यातेद्विरागमेपत्या पुनः पतिगृहेगमः ।
पितृगेहे स्थितायाश्च सद्वयङ्ग इह कीर्तितः ॥ ७८ ॥

भा० टी०—द्विरागमन हो जाने पर पतिके गृह में निवास कर जब पिता के गृहमें फिर आकर रहे, पुनः पति के गृहमें आवे उसको द्वयंग (दोंग) कहते हैं, तथा दो अंग वाले राहुका विचार जिसमें हो उसे दोंग कहते हैं।

यद्राशिगोऽर्कः खलु तद्दिशायां राहुः सदा तिष्ठति मासि मासि।
वधूप्रवेशाच्च यदा तृतीये ग्राह्या सदा मासिक एव राहुः ॥७६॥
अग्रतोराहुर्वैधव्यं दक्षिणे सुतहा भवेत् ।
वामे पृष्ठे शुभो नित्यं तृतीय गमने स्त्रियः ॥ ८० ॥

भा० टी०—जिस राशि के सूर्य रहते हैं उसी राशि कि दिशा "मेषे च सिंहे०" में २ महीना राहु रहता है जब वधू प्रवेश से तीसरि यात्रा हो तो उसमें मासिक राहु माघ है। राहु आगे (सन्मुख) रहे तो विधवा करता है, दक्षिणमें संतान का हानि कारक है, सदा वाम और पीछे स्त्री की तीसरी यात्रामें शुभ है॥

आदित्यमृगहस्तेज्य पौष्णमित्राश्विनीषु च।
गोविन्दवसुमूलेषु द्वयङ्गः सम्पत्प्रदायकः ॥
धनुकर्कटमीनेऽर्के सिंहेकन्यातुलस्थिते
भौमार्कवर्जितेवारे शुभदा द्वयङ्गकर्मणि ॥ ८१ ॥

भा० टी०—पुन, मृ०, ह०, पु०, रे०, अनु, अ०, श्र०, ध०, मू० इन नक्षत्रों में दोंग की यात्रा शुभ है, धन कर्क मीन सिंह कन्या तुला के सूर्य और मंगल सूर्यवार दोंग में वर्जित है ॥ ८१ ॥

नूतन वध्वा प्रथम पाक कर्म मुहूर्तः (मदीयपद्यम्)-

पुष्योत्तराशाक्रकृशानुपौष्णे श्रुतित्रये ग्राह्य द्विदैव चान्द्रे।
शुभे तिथौ व्यार रवौ प्रकुर्य्यात्स्वामिन्निनी नूतनपाककर्म॥८२॥

भा० टी०—पु०, तीनों उत्तरा,ज्ये०, कृ०,रे०,श्र०,ध०,श०,रो०,वि०, मृ० इन तेरह नक्षत्रों में शुभ तिथियों में मंगल सूर्य से भिन्न वारों में स्त्री प्रथम स्वामी के गृह भोजन (खिचरी) बनावे ॥ ८२ ॥

योगिनी विचारः (मु० म०)-

पूर्वेसोमेवह्निनैऋत्यदक्षे पश्चाद्वायौरुद्रकोणेष्वमानम् ।
योगिन्यन्यावाप्येयामर्द्धयोगाद् दक्षे पृष्ठे शोभना संप्रदिष्टा ॥४॥

भा० टी०-पूर्व में १, उत्तर में २, अग्नि में ३, नैऋत्य में ४, दक्षिण में ५, पश्चिम में ६, वायव्य में ७, ईशान में ८, फिर पूर्व में ९, उत्तर में १०, अग्नि में ११, नैऋत्य में १२, दक्षिण में १३, पश्चिम में १४, वायव्य में १५, ईशानमें ३० ए तिथियाँ रहती हैं इसको योगिनी कहते हैं, दक्षिण और पृष्ठ शुभहोती हैं।

कालपाशौ (मु० चि०)-

कौबेरीतो वैपरीत्येन कालो वारेऽर्काद्ये सन्मुखे तस्य पाशः ।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ यात्रायुद्धे सन्मुखे वर्जनीयौ ॥ ५ ॥

भा० टी०-रविवार को उत्तर दिशा में काल रहता है इस वारसे लेकर और उत्तरादि उलटी सम्पूर्ण दिशामें काल रहता है और उसके सन्मुख पाश रहता है रात्रिमें इससे उलटा होता है ये दोनों यात्रा युद्धमें वर्जित हैं ॥ ५ ॥

जीवपक्षादि संज्ञा फलानि-

राहुभुक्तानिऋक्षाणि जीवपक्षः त्रयोदशः ।
मृतपक्षः शुभोग्यानि कर्तरीतदधीष्ठितम् ॥ ६ ॥
ततः पञ्चदशेग्रस्तं चिन्त्यंयुद्धेगमादिषु ।
जीवपक्षः शुभोज्ञेयो मृतपक्षस्त्वशोभनः ॥ ७ ॥
मृतपक्षाच्छुभंग्रस्तं ग्रस्तभात् कर्तरीशुभा ।
मृतपक्षेसहस्रांशौ जीवपक्षे विधौ स्थिते ॥ ८ ॥
यात्रायां विजयस्तत्र विपरीते पराजयः ।
उभौ चेज्जीव पक्षस्थौ यात्रातत्रापि शोभना ॥ ९ ॥
चेद्रुभौमृत्युपक्षस्थौरवीन्दू तत्र कष्टदा ।
यायिनो जयदश्चन्द्रोजीवपक्षेव्यवस्थितः ॥ १० ॥
भानुमान्जीवपक्षस्थः स्थायिनोविजयावहः ।

भा० टी०-राहु का भुक्त तेरह नक्षत्र जीव पक्ष, भोग्य नक्षत्र मृतपक्ष, राहु की अधिष्ठित नक्षत्र कर्तरी संज्ञक है, और उससे १५ वाँ ग्रस्त है इन सबका युद्ध

यात्रा में विचार करे, जीव पक्ष शुभ, मृत पक्ष अशुभ है। मृत पक्ष से अन्य शुभ है, मस्त से कर्तरी शुभ है। मृत पक्षमें सूर्य, जीव पक्ष में चन्द्रमा के रहने पर यात्रा करे तो विजय हो, इससे विपरीत होने से पराजय होता है। दोनों जीव पक्षमें हों तो शुभ, दोनों मृत पक्ष में सूर्य चन्द्र हो तो अशुभ होता है, चन्द्रमा जीव पक्ष में हो तो यायी का विजय, सूर्य जीव पक्ष में हो तो स्थायी का विजय होता है ॥ ९–१० ॥

पथिकराहुमाह (मु० म०)-

अश्विनीप्रभृतिभं क्रमोत्क्रमाद् धर्मसंज्ञधनकाममोक्षगम् ।
भास्करेऽत्रमृगलाञ्छने क्रमाच्छस्यते पथिकराहुचक्रगे ॥ ११ ॥
अर्थमोक्षइहधर्ममोक्षभे धर्ममोक्षधनमोक्षधर्मभे ॥ १२ ॥

भा० टी०—अश्विनी से अभिजित् सहित सात २ नक्षत्रों की क्रम से और उत्क्रमसे*धर्म अर्थ काम मोक्ष संज्ञा है यह पथिक राहुके चक्रमें सूर्य और चन्द्र में क्रमसे शुभ है अर्थात् धर्ममें सूर्य, धन या मोक्षमें चन्द्रमा हो, धनमें सूर्य, धर्म काम मोक्ष में चन्द्रमा हो, काम में सूर्य, धर्म अर्थ मोक्षमें चन्द्रमा, मोक्षमें सूर्य, धर्म में चन्द्रमा हो तो शुभदायक होता है ॥ ११ ॥ १२ ॥

१ अर्थ	अश्वि०	पुष्य	श्ले०	वि०	अनु०	ध०	श०
२ धर्म	भर०	पुन०	म०	स्वा०	ज्ये०	श्र०	पू०भा०
३ काम	कृ०	आ०	पू०फा०	चि०	मू०	अभि०	उ०भा०
४ मोक्ष	रो०	मृ०	उ०फा०	ह०	पू०षा०	उ०षा०	रे०

युद्ध यात्रायां कुलाकुल विचारः (मु० म०)—

ओजस्तिथ्योऽकुलास्स्यु र्विधुगुरुविजाहस्कराहस्वतारा,
याम्यास्वातीध्रुवान्त्यादितिवसुदिनकृन्मित्रसर्पाभिधाना ।
तिथ्योऽर्केन्द्राष्टवेदा कुजभृगुदहनाश्वीज्यपूर्वेन्दचित्रा,
कर्णार्द्राशेन्दुपित्र्यः कुलमिदमितरद्विद्धिकौलाकुलास्यम् ॥१३॥

मु० चि०—* धर्मगे भास्करे चित्तमोक्षे शर्मा त्रिचगे धर्ममाक्षस्थितः शस्यते ।
कामगे धर्ममोक्षार्थगः शोभनो मोक्षगे केवलं धर्मगः शोभ्यते ॥

कुलेस्थायिलाभोऽकुलेयायिलाभोद्वयेसन्धिरुक्तस्तृतीयप्रकारे ।

भा० टी०–विषम तिथि १।३।५।७।९।११।१३।१५, चन्द्र, गुरु, शनि, सूर्य वार, पू०, स्वा०, ध्रुव (उ० ३ रो०) रे०, पुन०, धनि०, हस्त, अनु०, श्ले० ये नक्षत्र अकुल संज्ञक हैं। १२।१४।८।४ तिथि, मंगल शुक्रवार, कृ०, अश्वि०, पुष्य, तीनों पूर्वा, ज्ये०, चि०, श्र०, वि०, मृगि०, मघा ये नक्षत्र कुल संज्ञक है, शेष २।६।१० तिथि, बुधवार, आ०, मू०, अभि०, श० ये नक्षत्र कुलाकुल संज्ञक हैं। कुल संज्ञक नक्षत्रादि में स्थायी का लाभ और अकुल संज्ञक नक्षत्रादि में यायी का लाभ होता है तथा कुलाकुल संज्ञक नक्षत्रादि में संधि होती है ॥१३॥

लग्नशुद्धिः (मु० चि०)–

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभाः स्युर्याने पापस्त्र्यायषट्खेषु चन्द्रः ।
नेष्टोलग्नान्त्यारिरन्ध्रे शनिः खेऽस्ते शुक्रो लग्नेट्नगान्त्यारिरन्ध्रे ॥

भा० टी०–केन्द्र १।४।७।१० त्रिकोण ५।९ में शुभग्रह, ३।११।६।१० में पापग्रह शुभ हैं, तथा १।१२।६।८वें चन्द्र,१०वें शनि,७वें शुक्र और ७।१२।६।८ स्थान में लग्नेश हो तो शुभ है ॥ १४ ॥

सर्वाङ्ग विचारः (मु० ग०)–

तिथिनक्षत्रवारैक्यं सप्ताष्टाग्निविभाजितम् ।
आदिशून्येऽतिपीडा स्यान्मध्यशून्ये भयं तथा ॥ १५ ॥
शून्येऽन्त्ये वपुषोरोगोमृत्युः शून्ये त्रये ध्रुवम् ।
जयश्चार्थागमः सौख्यं शेषे च स्थानकत्रये ॥ १६ ॥
चिन्त्यमेतद्धियात्रादौ शुक्लाद्यातिथयोऽत्र तु ।

भा० टी०–तिथि और नक्षत्र वारको एकत्र जोड़कर तीन जगह धरे पहले जगह ७से, दूसरे जगह ८से, तीसरे जगह ३से भाग देनेपर यदि पहले जगह शून्य शेष रहे तो अत्यंत पीड़ा हो, दूसरे जगह शून्य शेष हो जाय तो भय हो, तीसरे जगह शून्य शेष रहे तो शरीर में रोग हो और तीनों जगह शून्य शेष रहे तो मृत्यु हो। तीनों जगह शेष बचै तो जय धन सुख की प्राप्ति हो इसका विचार यात्रा में करै यहाँ तिथि का गणना शुक्लपक्ष से करे ॥ १५ ॥ १६ ॥

उदाहरण–तिथि ७, वार २, नक्षत्र ८ है, इसका जोड़ १७ हुआ इसको तीन जगह धर कर पहले जगह ७ का भाग देने से ३ शेष बचा, दूसरे जगह ८

यात्रा में विचार करे, जीव पक्ष शुभ, मृत पक्ष अशुभ है। मृत पक्ष से ग्रस्त शुभ है, ग्रस्त से कर्तरी शुभ है। मृत पक्षमें सूर्य, जीव पक्ष में चन्द्रमा के रहने पर यात्रा करे तो विजय हो, इससे विपरीत होने से पराजय होता है। दोनों जीव पक्षमें हों तो शुभ, दोनों मृत पक्ष में सूर्य चन्द्र हो तो अशुभ होता है, चन्द्रमा जीव पक्ष में हो तो यायी का विजय, सूर्य जीव पक्ष में हो तो स्थायी का विजय होता है ॥ ९–१० ॥

पथिकराहुमाह (मु० म०)-

अश्विनीप्रभृतिभं क्रमोत्क्रमाद् धर्मसंज्ञधनकाममोक्षगम् ।
भास्करेऽत्रमृगलाञ्छने क्रमाच्छस्यते पथिकराहुचक्रगे ॥ ११ ॥
अर्थमोक्षइहधर्ममोक्षभे धर्ममोक्षधनमोक्षधर्मभे ॥ १२ ॥

भा० टी०–अश्विनी से अभिजित् सहित सात २ नक्षत्रों की क्रम से और उत्क्रमसे*धर्म अर्थ काम मोक्ष संज्ञा है यह पथिक राहुके चक्रमें सूर्य और चन्द्र में क्रमसे शुभ है अर्थात् धर्ममें सूर्य, धन या मोक्षमें चन्द्रमा हो, धनमें सूर्य, धर्म काम मोक्ष में चन्द्रमा हो, काम में सूर्य, धर्म अर्थ मोक्षमें चन्द्रमा, मोक्षमें सूर्य, धर्म में चन्द्रमा हो तो शुभदायक होता है ॥ ११ ॥ १२ ॥

१ अर्थ	अश्वि०	पुष्य	श्ले०	चि०	अनु०	ध०	श०
२ धर्म	भर०	पुन०	म०	स्वा०	ज्ये०	श्र०	पू०भा०
३ काम	कृ०	आ०	पू०फा०	वि०	मू०	अभि०	उ०भा०
४ मोक्ष	रो०	मृ०	उ०फा०	ह०	पू०षा०	उ०षा०	रे०

युद्ध यात्रायां कुलाकुल विचारः (मु० म०)-

ओजस्तिथ्योऽकुलास्स्यु र्विधुगुरुविजाहस्कराहस्वतारा,
याम्यास्वातीध्रुवान्त्यादितिवसुदिनकृन्मित्रसर्पाभिधाना ।
तिथ्योऽर्केन्द्राष्टवेदा कुजभृगुदहनाश्वीज्यपूर्वेन्द्रचित्रा,
कर्णार्द्रीशेन्दुपित्रः कुलमिदमितरद्विद्धि कौलाकुलाख्यम् ॥ १३ ॥

मु० चि०-* धर्मगे भास्करे वित्तमोक्षे शशी वित्तगे धर्ममोक्षस्थितः शस्यते ।
कामगे धर्ममोक्षार्थगः शोभनो मोक्षगे केवलं धर्मगः प्रोच्यते ॥

भा० टी०—कुंभ*मीन लग्नको छोड़कर अन्य लग्न में वर्गोत्तम हो वा चन्द्रमा वर्गोत्तम में हो तो यात्रा वांछित फल देनेवाली होती है, जलचर राशि का लग्न हो वा जलचर राशिका अंश लग्न में हो तो नौका यात्रा सिद्धि होती है ॥२०॥

तथा च (मु० चि०)-

लग्नगतः स्याद्देवपुरोधाः ।
लाभधनस्थैः शेषनभोगैः ॥ २१ ॥
द्यूने चन्द्रे समुदयगेऽर्के जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे ।
ईदृग्योगे चलति नरेशो चेता शत्रून् गरुड इवाहीन् ॥२२॥
वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः ।
लग्नगते भृगुपुत्रः स्युः शलभा इव सर्वे ॥ २३ ॥

भा० टी०—यात्रा लग्न में बृहस्पति हो अन्य ग्रह ११।२ भाव में हो तो राजा का विजय होवे । ७वें चन्द्रमा, लग्न में सूर्य २रे बृहस्पति शुक्र और बुध हो ऐसे योग में यात्रा करने से राजा जिस प्रकार गरुड़ सर्पों को जीतता है उसी प्रकार शत्रु को जीते । बुध २रे सूर्य ३रे स्थान में शुक्र लग्न में हो तो ऐसे योग में यात्रा करनेवाला राजा के शत्रु जैसे अग्नि में शलभ (पांखी) जलकर मरते हैं उसी प्रकार जल कर मरे ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

पञ्चविध यात्रा योग चतुष्टम् (मु० चि०)-

मृगे गत्वा शिवे स्थित्वादितौ गच्छञ्जयेद्रिपून् ।
मैत्रे प्रस्थाय शाक्रे हि स्थित्वा मूले व्रजं तथा ॥ २४ ॥
प्रस्थाय हस्तेनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा जयार्थी प्रवशेद्द्विदैवे ।
वस्वन्तपुष्ये निजसीम्नि चैकरात्रोषितः क्ष्मां लभतेऽवनीशः

भा० टी०—मृगशिरा नक्षत्र में घर से गमन कर दिशा में जाकर वहां आर्द्रा में ठहर कर पुनर्वसु में यात्रा करने से शत्रु को जीते । अनुराधा में यात्रा करके ज्येष्ठा में ठहरकर मूल नक्षत्र में यात्रा करे तो भी शत्रु को जीते । हस्त में प्रस्थान करके चित्रा स्वाती में स्थित हो विशाखा में जाने से भी वही फल होगा । धनिष्ठा पुष्य रेवती इनमें यात्रा करके एक दिन ठहर जाय तो राजा को भूमि मिले ॥

* कुंभ कुंभांशको त्याज्यो० । [illegible] । मु० चि० प्र० ११ श्लो० ४१ । ४४ । में है ।

का भाग देने से १ शेष बचा, तीसरे जगह ३ का भाग देने से २ शेष बचा अतः जय, धन और सुख की प्राप्ति होगी ॥ १५ ॥ १६ ॥

ललाटिक योगः (मु० म०)-

लग्नभेऽरिसुतभेऽम्बरेजले, स्वानलेऽन्त्यभवभे शुनेकमात् ।
भाग्यभापुपिसराहवः खगाः पूर्वतः खलु ललाटिनः स्मृताः॥१७॥

भा० टी०-लग्न में सूर्य, ६।५ में चन्द्र, १० में मंगल, ४ में बुध, २।३ में गुरु, ११।१२ में शुक्र, ७ में शनि, भाग्यभाव में राहु ललाटी हैं परन्तु यह ललाटी उसी दिशा में है जिस दिशा के ये स्वामी हैं जैसे पूर्व दिशा के स्वामी सू०, शु०, मं०, रा०, श०, चं०, बु०, बृहस्पति हैं ॥ १७ ॥

सर्वदिग्द्वार नक्षत्राणि वक्रीग्रहस्य केन्द्रगत्वादि निषेधः (मु० चि०)-

मैत्रार्कपुष्याश्विनिभैर्निरुक्ता यात्रा शुभा सर्वदिशासु तज्ज्ञैः ।
वक्री ग्रहः केन्द्रगतोयस्य वर्गो लग्ने दिनं चास्य गमे निषिद्धम्॥१८॥

भा० टी०-अनु०, ह०, पुष्य, अश्वि० दिग्द्वार संज्ञक है, ज्योतिष जानने वाले पण्डित इन नक्षत्रों में सम्पूर्ण दिशाओं की यात्रा शुभ कही है (पृष्ठवाम चन्द्र का दोष नहीं है) यात्रा लग्न से वक्री ग्रह केन्द्र में हो, लग्न में हो तथा उनका नवमांश हो और वार में भी यात्रा में शुभ नहीं होता है ॥ १८ ॥

दिग्द्वार लग्नानि (मु० चि०)-

दिग्द्वारभे लग्नगते प्रशस्ता यात्रार्थदात्री जयकारिणी च ।
हानिं विनाशं रिपुतो भयं च कुर्यात्तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने॥१९॥

भा० टी०-दिग्द्वार लग्न में यात्रा अर्थदात्री जय करने वाली प्रशस्त (शुभ) है, इससे भिन्न लग्न में हानि विनाश शत्रुसे भय होता है * ॥ १९ ॥

शुभयोगः (मु० चि०)-

लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमस्थे यात्रा प्रोक्ता वांछितार्थैकदात्री ।
अम्भोराशौ वा तदंशे प्रशस्तं नौकायानं सर्वसिद्धिप्रयाति ॥२०॥

---

* सूर्यशुक्रकुजराहुशनीन्दुध-इज्याग्निग्रुरवोदिगीश्वराः ।
पूर्वतोजमुखराशयः क्रमाद् द्वारमाणिकिलकोणभैस्सह । इति मु० मञ्जरे ।

विजयदशमी मुहूर्तः (मु० चि०)-

इषमासि सिता दशमी विजया शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता
श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा नृपतेस्तु गमे जयसन्धिकरी२६

भा० टी०—आश्विन शुक्ला विजयादशमी सम्पूर्ण कार्यों को सिद्धि करने वाली है, और श्रवण नक्षत्र से युक्त हो तो विशेष शुभदायक है इसमें राजा यदि यात्रा करे तो वह अवश्य विजय वा सन्धि करावे ॥ २६ ॥

एकस्मिन् दिवसे गमन प्रवेशे विशेषः (मु० चि०)-

महीपतेरेकदिने पुरात्पुरे यदा भवेतां गमनप्रवेशकौ ।
भ वारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीर्विचारयेन्नैव कदापि पण्डितः२७
यद्येकस्मिन् दिवसे महीपतेर्निर्गमप्रवेशौ स्तः ।
तर्हि विचार्यः सुधिया प्रवेशकालो न यात्रिकस्तत्र ॥२८॥

भा० टी०—यदि राजा का यात्रा और जहाँ जाना है वहाँ का प्रवेश एक ही दिन में हो जावे तो कुछ पंचांग शुद्धि देख कर नक्षत्र शूल वार शूल प्रति शुक्र और योगिनी इनका विचार पंडितों को न करना चाहिये। यदि राजा का एक दिन में ही यात्रा और प्रवेश (घर से उठकर अभीष्टस्थान में प्रवेश) हो तो पंडित लोग यात्रा का मुहूर्त न देखे प्रवेश का ही मुहूर्त देखे * ॥ २७ ॥ २८ ॥

गमन विलम्बे ब्राह्मणादिवर्णे क्रमेण प्रस्थान वस्तूनि (मु० चि०)-

कार्याद्यैरिह गमनस्य चेद्विलम्बो भूदेवादिभिरुपवीतमायुधं च ।
क्षौद्रं चामलफलमाशु चालनीयं सर्वेषां भवति यदेव हृत्प्रियं वा२९

भा० टी०—किसी कार्यवश यात्रा करने में विलंब हो तो ब्राह्मण यज्ञोपवीत को, क्षत्रिय शस्त्र को, वैश्य शहद को, और शूद्र आमला के फल को वा जिसको जो वस्तु इष्ट हो उसको प्रस्थान में धरे ॥ २९ ॥

प्रस्थान दिनानि (मदीय वृत्तम्)-

प्राच्यां दिनानिसप्तैव दिवसान्पञ्चदक्षिणे
दिनानि त्रीन् हि वारुण्यां कौबेरे दिवसद्वयम् ॥ ३० ॥

भा० टी०—पूर्व में ७ दिन, दक्षिण में ५ दिन, पश्चिम में ३ दिन, और

मु० मं०—* चेत्प्रवेश गमने महीभृतामेक वासरतले तदा बुधैः ।
स प्रवेश समयो विमृश्यतां नैव तत्र गमने क्षणे हितः ॥ १ ॥

उत्तर में २ दिन तक प्रस्थान रहता है। जिस दिशा में जितने दिन तक प्रस्थान रहता है उसके भीतर ही यात्रा करे तो शुभ होता है ॥ ३० ॥

यात्राकर्तुर्नियमः (मु० चि०)-

दुग्धं त्याज्यं पूर्वमेव त्रिरात्रं क्षौरं त्याज्यं पञ्चरात्रं च पूर्वम् ।
क्षौद्रं तैलं वासरेऽस्मिन्वमिश्च त्याज्यं यत्नाद् भूमिपालेन नूनम् ॥ ३१ ॥

भा० टी०-यात्रा करनेवाला ३ रात्रि पहले दूध, ५ रात्रि पहले क्षौर, यात्रा के दिन मधु (शहद) भक्षण तैल* मर्दन, वमन (छर्दि) शरीर शोधनार्थ न करे()

यात्राविधि (मु० चि०)—

अग्निं हुत्वा देवतां पूजयित्वा नत्वा विप्रानर्चयित्वा दिगीशम् ।
दत्वा दानं ब्राह्मणेभ्यो दिगीशं ध्यात्वा चित्ते भूमिपालोऽधिगच्छेत् ॥ ३२ ॥

भा० टी०-अग्निमें हवन करके देवता का पूजा करके ब्राह्मणों को नमस्कार करके दिक्पालों का पूजाकर वा ध्यान करके राजाको यात्रा करना चाहिये[] ॥३२॥

यात्रानिवृत्तौ गृहप्रवेशमुहूर्तः (मु० ग०)—

प्रवेशो भूपतेर्यात्रा निवृत्तौ निजमन्दिरे ।

---

* भुक्त्वा गच्छति यदि चेत् तैलगुडक्षारपक्वमांसानि ।
निवर्तन्ते न कदाचित् स्त्री द्विजमपमान्य गच्छतो मरणम् ॥ १ ॥

() रात्रौ यो मैथुनं कृत्वा प्रातरेवाधिगच्छति ।
न किञ्चित् फलमाप्नोति नक्षत्रेण निवर्तते ॥ २ ॥

[] वीणा मृदङ्ग पणवानक शङ्खनादा [illegible] ।
[illegible] ॥ १ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ २ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ३ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ४ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ५ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ६ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ७ ॥

श्रेष्ठे वारे गुरौ शुक्रे बुधे चन्द्रे शनैश्चरे ॥ ३३ ॥
चित्रोत्तरानुराधाख्य रोहिणी रेवती मृगे ।
त्यक्त्वारिक्तामभां सूर्यं भौमं लग्नं चरं लवम् ॥ ३४ ॥
पुष्ये हस्ते धनिष्ठायां शतेप्युक्तः शुभैः परे ।

भा० टी०-राजा यात्रा निवृत्त होकर अपने गृहमें चि०,तीनों उत्तरा, अनु०, रो०, मृ० इन नक्षत्र में, गुरु, शुक्र,बुध,चन्द्र, शनिवार में प्रवेश करे रिक्ता अमावस तिथि में सूर्य भौमवार में प्रवेश न करें, कोई २ पुष्य, ह० ध०, श० में भी यात्रा से निवृत्त हो स्वगृह में प्रवेश करने को कहे हैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

इति श्रीदैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संग्रहीते फलितप्रकाशे तत्कृत सुधानाम्नि टीकान्विते यात्रारत्नं समाप्तम् ॥ ५ ॥

—ॱ—

अथ गृह रत्नम् ६

काकिणी विचारः (मदीय वृत्तम्)-

आत्मवर्गं द्विगुणितं मन्यवर्गान्वितं तु यत् ।
वसुभिस्तुहरेद्भागं शेषाधिक्यं वसुप्रदम् ॥ १ ॥

भा० टी०-अपने वर्ग को दूना करके दूसरे के वर्ग मे युक्त करे फिर उसमें ८ का भाग देनेसे जिसमें अधिक शेष बचैगा वह धन देगा * ॥ १ ॥

---

* गृह निर्माण कि इच्छा से आये हुए मनुष्य के मनोरथ के परिपूर्णार्थ विद्वानों को चाहिये कि पहले विचारें कि जहाँ गृह बनाना है वह भूमि सहैगी (सद्फलदायी होगी) कि नहीं इस विचार के निमित्त ज्योतिष भण्डार में अनेक प्रकार का विचार है, उन विचारों में से अपने मनका प्रसन्नता और काकिणी विचार तथा दशा के विचार को ही सर्व शिरोमणि माना है नवीन ग्राम में निवास करना हो तो काकिणी विचारे और प्राचीन ग्राममें गृह बनाना हो तो सद्दशामें बनावे, मन नेत्र को सन्तोष तो नवीन प्राचीन दोनों ही में होना सर्वथा योग्य है ।

दशाका विचार गृहके अतिरिक्त गोशाला, गजशाला, अश्वशाला,व्यायामशाला, धर्मशाला, देवसद्म, जलाशय, वाटिका, धरणी आदि में करना चाहिये ।

इस विचार के बाद उस मनुष्य के नाम से जिस नक्षत्र से एक नाड़ी और मकूट की विशेष शुद्धि विचारते हुए अधिक गुण बने उस नक्षत्र के ही पिण्ड के अनुकूल यजमान के दीर्घ विस्तार आय आदि को श्रेष्ठ विचार करके बतावे कि यही

दशाविचार: (महीप चा० मा० ८०)—

गजपञ्चरसा युग सप्तमही, गुणनेत्रसुरेश दिशादि क्रमात् ।
युदिग् गृहवल्लभनामयुता, नवभाग हृता भवनस्य दशा ॥२॥

भा० टी०—पूर्वादि आठ दिशों का तथा अवर्ग आदि आठो वर्गों का क्रमशः ८।५।६।४।७।१।३।२ वर्गांक है। जिस दिशामें प्राचीन गृहसे नूतनगृह बनाना हो उसके वर्गांक को ग्राम वर्ग तथा गृह बनाने वाले के नाम वर्ग को एकत्र जोड़कर नवका भाग देने से एकादि शेषके अनुसार सू० चं० इत्यादि ग्रहों की दशा होती है ॥ २ ॥

गृह निर्माण प्रशस्ताभूमि: (वसिष्ठ:)—

मनसश्चक्षुषोर्यत्र सन्तोषोजायतेभूवि
तस्यां कार्यं गृहं सर्वैरितिगर्गादि सम्मतम् ॥ ३ ॥

भा० टी०—जिस भूमि को देखने से मन नेत्र को संतोष हो जा उसी जगह सब गृह को बनावें ऐसा गर्गादिक मुनि का मत है ॥ ३ ॥

पिण्ड प्रकार: (महीप चा० मा० ८०)—

इष्टर्क्षमेकरहितं निघ्नं यमशरेन्दुभिः ।
रूपाङ्क रहितायं यन्निघ्नं चन्द्राष्टभिस्तदा ॥ ४ ॥
युतं सप्तदशं तत्र भाजितं भूपबाहुभिः ।
शेषात् पिण्डो भवेन्मुख्यो ह्यग्रे भूपाब्धिभिर्युतः ॥५॥

भा० टी०—इष्ट नक्षत्र में १ घटाने से जो शेष बचे उसे १५२ से गुणा करै और इष्ट आय में एक न्यून करने से जो शेष बचे उसको ८१ से गुणा करै फिर इन दोनों गुणितांकों को एकत्र जोड़कर उसमें १७ युत करने से जो हो उसमें २१६

पिण्ड आपके मनोरथ को परिपूर्ण करेगा, पिण्डों में एक से लेकर महाशंख पर्यंन्त के अङ्क २७ नक्षत्रों में से किसी न किसी नक्षत्र का पिण्ड रहता है, उनमें २१६ मुख्य पिण्ड हैं मुख्य पिण्ड में दो सौ सोलह और उसका दुगुना तिगुना आदि युक्त करता जाय जब अपने मनोरथ के पूर्ण करने वाला पिण्ड हो जाय तो उसी से विस्तार दीर्घ आदि बनावे।

२१६ पर्यन्त मुख्य पिण्ड का सिद्धि पिण्ड भी संज्ञा है, इसके बाद सिद्धि पिण्ड संज्ञा है। और उसी में मुख्य पिण्ड भी रहता है जो सिद्धि पिण्ड को २१६ से शोधित करने पर विदित होता है।

का भाग देने से शेष मुख्य पिण्ड होता है, अभीष्ट पिण्ड के लिये बार बार मुख्य पिंडमें २१६ जोड़ने से सिद्धि पिण्ड (क्षेत्र फल-रकबा) होता है ॥४॥५॥

दीर्घविस्तारानयन प्रकारः (मदीय पद्यम्)—

विस्तारभाजितं पिण्डं दीर्घं दीर्घविभाजितम् ।
विस्तारं तु भवेद् नूनं देयं दीर्घाङ्गुलादिकम् ॥ ६ ॥

भा० टी०—पिण्ड को विस्तार से भाग लेने से दीर्घ और दीर्घ से भाग लेने से विस्तार निश्चय होता है । यदि कुछ शेष बचे तो विस्तार से भाग लेकर अंगुलादि बनावे ॥ ६ ॥

आयादि का नयन प्रकारः (मु० चि०)-

पिण्डे नवाङ्काङ्गगजाग्निनाग नागाब्धिनागैर्गुणिते क्रमेण ।
विभाजिते नागनगाङ्कसूर्य नागर्क्ष तिथ्यर्क्ष खमानिभिश्च ॥७॥
आयो वारोऽशको द्रव्य मृण मृक्षं तिथिर्युतिः ।
आयुश्चाथ गृहेशर्क्षगृहभैक्यं मृतिप्रदम् ॥ ८ ॥

भा० टी०—पिण्ड को नव स्थान में धरके क्रमसे ६ । ६ । ६ । ८ । ३ । ८ । ८ । ४ । ८ से गुणाकर ८ । ७ । ६ । १२ । ८ । २७ । १५ । २७ । १२० से भाग लेने से शेष, आय, वार, अंश, धन, ऋण, नक्षत्र, तिथि, योग, आयु होती है । यदि गृह का और गृहेश का नक्षत्र एक हो तो मृत्यु को करने वाला होता है पिण्ड के नक्षत्र को ८ से शोधित करने पर व्यय होता है, पूर्वादि चारों दिशा का १ । २ । ४ । ८ शालो ध्रुवांक है जिस मुखके जिसके गृहका द्वार हो उसके शाला ध्रुवांक में १ युत करने से ध्रुवादि गृह होते हैं, ध्रुवादि गृह का १ से ६ तक तथा १०वें और १३ वें का दो अक्षर,७वें का चार अक्षर और शेष ८।६।११।१२।१४।१५।१६ वें का तीन अक्षर के नाम हैं । पिण्ड में व्यय ध्रुवादिनामाक्षर की संख्या युतकर ३ का भाग देने से १ शेषमें इन्द्रांश, २ में यमांश, ३ में राज अंश होता है, इन्द्रांश राज अंश शुभ, और यमांश अशुभ है ॥ ७ ॥ ८ ॥

* सूर्य, चन्द्र, गुरु, शुक्र के अस्तमें गृहारम्भ करना निषेध है परन्तु अस्त दो प्रकार का है, एक सामान्य दूसरा विशेष, सामान्य प्रतिदिन उदय से अस्त (सात) राशि पर प्राप्त होने पर होता है, और विशेष अस्त सूर्य मंडल में प्राप्त होने पर होता है त्याग जो है यह विशेष अस्त है । सूर्य विशेषास्त नहीं होता सूर्य के विशेषास्त होने पर प्रलय होता है ।

गृहारम्भे मास विचारः (मदीय पुस्तम्)-

भौमार्किचन्द्रगेहेऽर्के गृहारम्भं शुभं तथा
द्विस्वभावेऽशुभं मध्यं शेषराशिगते रवौ ॥ ९ ॥

भा० टी०-मंगल की राशि १। ८ के और १०। ११ के और कर्क के सूर्य में शुभ है, द्विस्वभावराशि ३। ६। ९। १२ में अशुभ है और शेष राशि २। ५। ७। में मध्य है (मकरके सूर्यमें भी किसी के मतसे मध्यम है) ॥९॥

गृहारम्भ नक्षत्राणि (मुहूर्त भूषणे)-

रोहिणीचोत्तराचित्रा मृगोहस्तोऽनुराधिका।
रेवतीस्वातिपुष्यो च धनिष्ठाशतभं शुभम् ॥ १० ॥

भा० टी०-रो०, तीनों उत्तरा, चि०, मृ०, ह०, अनु०, रे०, स्वा०, पु०, ध०, और शतभिष इन १३ नक्षत्रों में गृहारंभ करना शुभ है। गुरु शुक्र उदय रहे, सायं प्रातः में उदयास्त समय मध्य दिन मध्य रात्रि को त्याग कर, रवि भौमवार के अतिरिक्तवारों में, रिक्ता प्रतिपद् अमाके अतिरिक्त तिथि में, स्थिर द्विस्वभाव लग्न में गृहारंभ करना शुभ है * ॥ १० ॥

गृह प्रवेशे वास्तु शान्तिः (मदीय पद्यम्)-

यदा सूर्य सौम्यायने संप्रयाते तदा माघ वैशाख शुक्रे तपस्ये।
ध्रुवेमूलभे क्षिप्रभे मैत्रभे च चले वास्तुशान्तिं स्वसूत्रेणकुर्यात् ॥११॥

भा० टी०-उत्तरायण सूर्य में माघ वैशाख ज्येष्ठ फाल्गुन मास में ध्रुव मूल क्षिप्र मैत्र चल नक्षत्रोंमें अपने सूत्रके अनुसार वास्तु शान्ति करे ॥ ११ ॥

गृह प्रवेशः (मदीय मालि० वृ०)—

ततो मैत्रभे वै ध्रुवे वा प्रयाते विभौमार्कवारे विरिक्ते हि तिथ्याम्।

---

* पूर्व पश्चिम मुखका गृह हो तो लम्बाईमें दक्षिणोत्तर मुखका गृह होतो चौड़ाई में नव भाग करे उनमें से पूर्व मुख के द्वार में ईशान कोण से ३रे वा ४ थे भाग में दक्षिण मुखके गृहमें अग्नि से ४थे वा ५वें भागमें पश्चिम और उत्तर मुखके गृहके ४थे या मध्य भाग छोड़के ४ थे भागमें द्वार बनावे। आंगन की लंबाई चौड़ाई को जोड़कर ९ का भाग देने से १, २, ५, ८ शेष शुभ है। जलस्थान वायव्य, उत्तर, ईशान, तथा किसी के मत से पूर्व में होना शुभ है। कूप गृह में ईशान पूर्व पश्चिम उत्तर रहना ठीक है गृहके बाहर अग्नि नैऋत्य वायु कोण के अतिरिक्त दिशाओं में उत्तम है। इन सब विषयों को विशेष रूप से जिनको देखने की अभिलाषा हो वह मेरी वास्तु सारणी-वास्तुशास्त्रविचारसागर-वास्तुरत्नावली-वास्तुप्रदीप-मोहनदास कम्पनीका. तथा-क्षेमराजश्रीकृष्णदास का बनाया हुआ गृहनिर्माण और वास्तु मुहूर्त को देखे।

त्रिकोणे धने लाभगे केन्द्रसंस्थे शुभाः पापखेटास्त्रिषष्ठायसंस्थाः१२
चतुर्थाष्टशुद्धे विशुद्धे भकूटे विशेज्जन्म राशेः स्वजन्मस्य लग्नात् ।
त्रिषष्ठाय दिग्संज्ञके चैव लग्ने प्रवेशं गृहे नैव कुर्यान्मनुष्यः१३

भा० टी०—मैत्र ध्रुव नक्षत्र में भौम रविवार के छोड़ अन्यवारों में रिक्ता तिथि के छोड़ अन्य तिथिमें त्रिकोण धन लाभ केन्द्र में शुभग्रह ३ । ६ । ११ में पापग्रह चतुर्थ अष्टम शुद्ध हो भकूट शुद्ध हो तो गृह प्रवेश करे अपने जन्म राशि तथा लग्न से ३ । ६ । ११ । १० वे लग्न में प्रवेश न करे ॥ १२ ॥ १३ ॥

कलश चक्रम् (मदीय माणिक्यरत्ना०)-

षष्ठाद्वेर्भाद् भान्यष्टौ द्वाविंशाद्भानिषट् तथा ।
कुम्भ चक्रेऽति श्रेष्ठानि शुभे गेहे विशेन्नरः ॥ १४ ॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से ६ वें नक्षत्र से ८ नक्षत्र तक और द्वादश वें नक्षत्र से ६ नक्षत्र तक कलश चक्र में शुभ है अतः इसी में गृह प्रवेश करना श्रेष्ठ है ॥ १४ ॥

वामरवि विचारः (मदीय माणि० रत्ना०)-

दिवाधीश्वरो वामगो मृत्यु पुत्रार्थ लाभादुदिने पञ्चमे संस्थितश्चेत् ।
तदा पूर्ववक्त्रादिगेहे प्रवेशःशुभो भूमिदेवाः जनानन्दकारी॥१५॥

भा० टी०—पूर्व मुखके गृहमें प्रवेश लग्नसे ८ वें से पांच स्थानों में सूर्य रहे, दक्षिण मुखके गृहमें प्रवेश लग्नसे ५ वें से पांच स्थानों में किसी में सूर्य रहे, पश्चिम मुखके गृहमें प्रवेश लग्न से ५ स्थानों में सूर्य रहें, और उत्तर मुखके गृहमें प्रवेश लग्न से ग्यारहवे से पांच स्थानों में सूर्य हो तो वाम रवि होते हैं । गृह प्रवेश में वाम रवि विशेष शुभ दायक होता है ॥ १५ ॥

सूर्य नक्षत्रात् कूप चक्रम् (मदीयपद्यम्)-

सूर्यभात् त्रिणि त्रीणि च नक्षत्राणि दकार्गले ।
मध्ये पूर्वादिकाष्ठासु स्थातव्यानि प्रयत्नतः ॥ १६ ॥
जलं भूमिखंडं च स्वादूदकं च, न तोयं सुतोयं हि तोयं च क्षारम्
सुमिष्टंजलं क्षारतोयं विचार्य खनेत् कूपदिव्यं ज्ञवन्द्रेज्यवारे॥१७॥

भा० टी०—कूप चक्र में सूर्य के नक्षत्र से तीन२ नक्षत्र मध्यमें तथा पूर्वादि ८ दिशामें धरे उसका फल क्रमसे इस प्रकार है कि जल, भूमि खंडित, स्वादुजल,

मीठाजल, सुन्दर जल, खाराजल, ऐसा फल है। और कूप (कुवाँ) बुध चन्द्र गुरुवार के दिन खने तो शुभ होता है ॥ १६ ॥

कूपारम्भ नक्षत्राणि (मदीय वृत्तम्)-

पुष्ये हस्तेऽम्बुपेतोयेऽनुगधे वासवे ध्रुवे
पौष्णे मघायां च मृगे कूपारम्भः शुभः स्मृतः ॥ १८ ॥

भा० टी०–पु० ह० श० पू० पा० अनु० ध० ध्रुव रे० म० मृ० ये नक्षत्र कूपारंभ में शुभ हैं ॥ १८ ॥

जल दिग्विचारः (मदीयवृत्तम्)-

नक्षत्रं तिथिवारं च ह्येकीकृत्यभजेद् युगैः।
एकशेषे च पाताले तोयेचैवद्विशेषके ॥ १६ ॥
त्रिशून्यशेषकेभूमौतोयं प्रोक्तं महर्षिभिः।

भा० टी०–कूपारंभ के दिनका नक्षत्र तिथिवार एकत्र जोड़कर ४ का भाग दे एक शेष में पाताल में, दो शेष में जल में, तीन शेष में जल भूमि पर रहना महर्षियों ने कहे हैं ॥ १६ ॥

तडागारम्भ मुहूर्तः (मदीय वृत्तम्)

मृगेपुष्येध्रुवेतोये पौष्णेजलपतौ तथा।
शुक्रेन्दुवारे सद्योगे तडागारंभणं शुभम् ॥ २० ॥

भा० टी०–मृ० पु० ध्रु० पू० पा०रे०श० इन नक्षत्रो में शुक्र चन्द्रवार में शुभयोग में तडाग खनने का आरंभ करना शुभ है ॥ २० ॥

वापी निर्माण मुहूर्तः (मदीयपद्यम्)-

हस्तस्वातीदस्त्रपुष्यमैत्रपौष्णेषु वारुणे
पुनर्वसौ शुभं प्रोक्तं वापिकारम्भणं द्विज ॥ २१ ॥

भा० टी०–ह० स्वा०, अ०, पु०, अनु०, रे०, श० इन नक्षत्रों में वापी खनने का आरंभ करना शुभ है ॥ २ ॥

इष्टिकारंभण चक्रम् (मदीयवृत्तम्)-

भौमभाद्वाणरामाग्नि शरसप्तवस्तथा।
शुभाशुभं क्रमाद्ज्ञेयमिष्टिकारो बुधाः ॥ २२ ॥

भा० टी०–मंगल के नक्षत्र से ५।३।३।५।७।८ नक्षत्र क्रम से शुभ अशुभ

इष्टिका के आरंभ में है, अर्थात् ५ शुभ, ३ अ०३ शु०,५ अ०७ शु०१ अशुभ।

नेवारस्थापन चक्रम् (मदीयपद्यम्)-

राहुभाचन्द्रभं गण्यं नेवारेपूर्वतः क्रमात्
त्रीणि त्रीणि च चत्वारि मध्ये देयानि भानि च ॥२३॥
पूर्वे मध्ये जलं स्वच्छमुत्तरे कोशवर्धनम् ।
दुःखं याम्ये च नैऋत्ये चान्यत्रमरणं ध्रुवम् ॥ २४ ॥

भा० टी०—नेवार चक्रमें राहुके नक्षत्र से तीन तीन नक्षत्र पूर्वादि आठ दिशामें और ४ नक्षत्र मध्य में स्थापित करे। मध्य में पूर्व में यदि दिन नक्षत्र परे तो स्वच्छ जल होता है, उत्तर में धन बढ़ता है,दक्षिण तथा नैऋत्य में दुःख होता है और अन्यदिशि अर्थात् अग्नि वायव्य कोण पश्चिम दिशामें निश्चय मरण होता है ॥ २३ ॥ २४ ॥

चरणी विचारः (पा० मा० रत्ना०)—

दीर्घविस्तारयोर्योगे वसुभिर्भागमाहरेत् ॥
एकादिशेषेणबुधैः ज्ञेयं हि चरणीफलम् ॥ २५ ॥
पशोर्वाधापशोर्नाशः पशोर्लाभः पशोर्मृतिः ।
पशोः कष्टं पशोर्वृद्धिः पशोर्दुःखं पशोः सुखम् ॥ २६ ॥

भा० टी०—दीर्घ विस्तार को इकत्र करि के ८ का भाग देने से जो शेष बचे वही चरणी में शुभ अशुभ फल होता है जैसे कि १ पशु बाधा, २ पशुनाश, ३पशुलाभ, ४पशुमृत्यु, ५ पशु कष्ट, ६ पशुवृद्धि, ७ पशुदुःख ८ पशु सुख होता है क्रम से इनका फल जानिये ॥ २५ ॥ २६ ॥

इति श्रीदैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संग्रहीते फलितप्रकाशे तत्कृत सुधानाम्नि-
टीकान्विते गृहरत्नं समाप्तम् ॥ ६ ॥

—:※※※:—

अथ जन्माङ्ग रत्नम् ७।

जन्माङ्ग-साधनं (साधनसुबोधे)-

सूतौ समाया त्वय मास वेशके दिन प्रवेशेऽखिल मङ्गलेष्वपि ।
प्रयाण कालादिषु भास्करोदयात्कालं गतं नाडिमुखात्प्रसाधयेत् ॥

भा० टी०—जन्म के समय वर्ष मास प्रवेश के समय और दिन प्रवेश तथा सम्पूर्ण मंगलो में यात्रों में सूर्योदय के समय से इष्ट समय तक की गतनाड़ी से ग्रहस्पष्ट लग्नस्पष्ट आदि साधे ॥ १ ॥

चालन माह (ग्रन्थान्तरे)—

प्रस्तारस्तु यदाग्रेस्यादिष्टं संशोधयेदृणम् ।
इष्टकालं यदाग्रेस्यात् प्रस्तारं शोधयेद् धनम् ॥ २ ॥

भा० टी०—प्रस्तार आगे हो इष्टकाल पीछे हो तो प्रस्तार में इष्टकाल को घटाने से ऋण चालन होता है । और इष्टकाल आगे हो प्रस्तार पीछे हो तो इष्टमें प्रस्तार को घटाने से धन चालन होता है ॥ २ ॥

ग्रहस्पष्ट साधन प्रकारः (नी० कं०)—

गतैष्य दिवसाद्येन गतिर्निघ्नीखपट्हृता ।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद्ग्रहः

भा० टी०—गत दिन आदि (ऋण चालन) से या धन ऐष्यदिवसादि (धन चालन) से पंचांग स्थित घटी आदि को गो मूत्रिका की रीति से गुणा करके ६० का भाग देने पर लब्ध अंश कला विकला होगा, इस अंशादि को ऋण चालन हो तो पंचांग स्थित औदक या मिश्र कालिक ग्रह में हीन करने से तथा धन चालन हो तो पंचांगस्थितग्रह में युत करने से तात्कालिक चन्द्रमा के अतिरिक्त सब ग्रह स्पष्ट हो जाते हैं, इसका ध्यान रहे कि यदि वक्रीग्रह रहेंव धन चालन हो तो घटावे ऋण चालन हो तो जोड़े, सूर्य चन्द्रमा वक्री नहीं होते, राहु केतु सदा वक्री रहते हैं, मंगल आदि पांच ग्रह मार्गी वक्री दोनों होया करते हैं ॥२ ॥

उदाहरण—श्रीविक्रम सम्वत् १९४२ शाका १८०७ वैशाख शुक्ल १२ चन्द्रवार घ० ११ प० ३८ उसके बाद हस्त नक्षत्र घ० २२ प० ४४ उसके बाद चित्रा नक्षत्र हर्षणयोग घ० १४ प० ५४ उसके बाद वज्रयोग इस दिन सूर्योदय से ४२ घटी पर श्रीमान् का जन्म हुआ, इस समय का इष्ट-स्थिर लग्न साधना है । ग्रह साधन के लिये देखि ११ हानि का एक है, उससे दूसरी तृतीया हानि का है, इन दोनों में एकादशी द्वादशी [illegible] की है इसका चालन बनाता है इष्ट काल से बारादि २ । ४९ । ० से [illegible]

* साधन सुबोधे-[illegible]

इष्टिका के आरंभ में है, अर्थात् ५ शुभ, ३ अ० ३ शु०, ५ अ० ७ शु० ५ अशुभ।

नेवारस्थापन चक्रम् (मदीयपद्यम्)-

राहुभाचन्द्रभं गण्यं नेवारेपूर्वतः क्रमात्
त्रीणि त्रीणि च चत्वारि मध्ये देयानि भानि च ॥२३॥
पूर्वे मध्ये जलं स्वच्छमुत्तरे कोशवर्धनम् ।
दुःखं याम्ये च नैऋत्ये चान्यत्रमरणं ध्रुवम् ॥ २४ ॥

भा० टी०—नेवार चक्रमें राहुके नक्षत्र से तीन तीन नक्षत्र पूर्वादि आठ दिशामें और ४ नक्षत्र मध्य में स्थापित करे। मध्य में पूर्व में यदि दिन नक्षत्र परे तो स्वच्छ जल होता है, उत्तर में धन बढ़ता है, दक्षिण तथा नैऋत्य में दुःख होता है और अन्यदिशि अर्थात् अग्नि वायव्य कोण पश्चिम दिशामें निश्चय मरण होता है ॥ २३ ॥ २४ ॥

चरणी विचारः (धा० मा० रत्ना०)—

दीर्घविस्तारयोर्योगे वसुभिर्भागमाहरेत् ॥
एकादिशेषेणबुधैः ज्ञेयं हि चरणीफलम् ॥ २५ ॥
पशोर्बाधापशोर्नाशः पशोर्लाभः पशोर्मृतिः ।
पशोः कष्टं पशोर्वृद्धिः पशोर्दुःखं पशोः सुखम् ॥ २६ ॥

भा० टी०—दीर्घ विस्तार को इकत्र करि के ८ का भाग देने से जो शेष बचे वही चरणी में शुभ अशुभ फल होता है जैसे कि १ पशु बाधा, २ पशुनाश, ३पशुलाभ, ४पशुमृत्यु, ५ पशु कष्ट, ६ पशुवृद्धि, ७ पशुदुःख ८ पशु सुख होता है क्रम से इनका फल जानिये ॥ २५ ॥ २६ ॥

इति श्रीदैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संगृहीते फलितप्रकाशे तत्कृत सुधानाम्नि-टीकान्विते गृहरत्नं समाप्तम् ॥ ६ ॥

—:※※※:—

अथ जन्माङ्ग रत्नम् ७।

जन्माङ्ग-साधनं (साधनसुबोधे)-

सूतौ समाया त्वथ मास वेशाके दिन प्रवेशेऽखिल मङ्गलेष्वपि ।
प्रयाण कालादिषु भास्करोदयात्कालं गतं नाडिमुखात्प्रसाधयेत्॥

भा० टी०—जन्म के समय वर्ष मास प्रवेश के समय और दिन प्रवेश तथा सम्पूर्ण मंगलों में यात्रों में सूर्योदय के समय से इष्ट समय तक की गतनाड़ी से प्रस्पष्ट लग्नसष्ट आदि साधे ॥ १ ॥

चालन माह (मन्थान्तरे)—

प्रस्तारस्तु यदाग्रेस्यादिष्टं संशोधयेदृणम् ।
इष्टकालं यदाग्रेस्यात् प्रस्तारं शोधयेद् धनम् ॥ २ ॥

भा० टी०—प्रस्तार आगे हो इष्टकाल पीछे हो तो प्रस्तार में इष्टकाल को घटाने से ऋण चालन होता है । और इष्टकाल आगे हो प्रस्तार पीछे हो तो इसमें प्रस्तार को घटाने से धन चालन होता है* ॥ २ ॥

ग्रहस्पष्ट साधन प्रकारः (नी० कं०)—

गतैष्य दिवसाद्येन गतिर्निघ्नीखषट्‌हृता ।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद्ग्रहः

भा० टी०—गत दिन आदि (ऋण चालन) से या धन ऐष्यदिवसादि (धन चालन) से पंचांग स्थित घटी आदि को गो मूत्रिका की रीति से गुणा करके ६० का भाग देने पर लब्ध अंश। कला विकला होगा, इस अंशादि को ऋण चालन हो तो पंचांग स्थित औदयिक या मिश्र कालिक ग्रह में हीन करने से तथा धन चालन हो तो पंचांगस्थितग्रह में युत करने से तात्कालिक चन्द्रमा के अतिरिक्त सब ग्रह स्पष्ट हो जाते हैं, इसका ध्यान रहे कि यदि वक्रीग्रह रहे व धन चालन हो तो घटावे ऋण चालन हो तो जोड़े, सूर्य चन्द्रमा वक्री नहीं होते, राहु केतु सदा वक्री रहते हैं, मंगल आदि पांच ग्रह मार्गी वक्री दोनों होवा करते हैं ॥ ३ ॥

उदाहरण—श्रीविक्रम संवत् १९४२ शाका १८०७ वैशाख शुक्ल १२ चन्द्रवार घ० ११ प० ३८ उसके बाद हस्त नक्षत्र घ० २२ प० ४४ उसके बाद चित्रा नक्षत्र हर्षणयोग घ० १४ प० ५४ उसके बाद वज्रयोग इस दिन सूर्योदय से ४२ घटी पर श्रीमान का जन्म हुआ, इस समय का स्पष्ट दिनग्रह लग्न साधना है । ग्रह साधन के लिये टीका ११ शनि का एक है, उससे दूसरा तृतीया शनि का है, इन दोनों में एकादशी दशमी [illegible] की है इसका चालन बनाना है इस काल के ग्रहादि ९ । १९ । ० में एकादशी

* साधन सुबोधे—[illegible]
[illegible]
[illegible]

शनिवार का वार ७ मिश्रमान ४६।५४ हीन किया तो चालन धन वारादि २। ५। ६ हुआ, इससे पंचांग में स्थित एकादशी के मिश्रमान के समय की सूर्य की गति ५८। १७ को गोमूत्रिका के अनुसार गुणा किया तो १२१। ३१। १४ इसमें ६० का भाग दिया तो अंशादि २। १। ३१। १४ हुआ इसको पंक्तिस्थ सूर्य ०। १३। ३६। १८ में युत किया तो स्पष्टतात्कालिक सूर्य०। १५। ४०। ४६ हुआ ॥ ३ ॥

न्यासः-इष्ट २। ५२। ०। में पंक्तिहीन किया तो

७। ४६। ५५ पंक्ति

२। ५। ६ धन चालन हुवा

धन चालन २। ५। ६×५८। १७ गति से गुणा

११६। २९०। ३४८

३४। ८५। १०२

११६	२९०	३४८	६०
५	३२४	४३३	४२
१२१	७	१	
१२०	३३१	४३४	
१	३००	४२०	
	३१	१४	

११६ सब से बड़ा है, ३४ और २९० एक समान, ८५ और ३४८ एक समान, १०२ सबसे छोटा दो समान को एकत्र जोड़ा नीचे ६० का भाग ले अंक चढ़ाया तो १२१।३१।१४ हुआ फिर ६० का भाग लेने पर २।१।३१।१४ हुआ। इसको पंक्तिस्थ सूर्य में जोड़ने से स्पष्ट सूर्य ०।१५।४०।४६ हुआ।

भजातभभोगज्ञानम् (साधन सुबोधे)-

सतर्क शुद्धा गत भस्य नाडिका, पृथग्रवेर्यात घटीसमन्विता।
भजात संज्ञा विबुधैः प्रकीर्तिताः, निजर्क्ष नाड्यः सहितोभभोगः ४
यदीष्टभं पूर्वदिनेऽखिलेभवेत्, खाङ्गान्वितो तत्र भजातभोगकौ।
ऊनायदीष्टाद्गतभस्यनाडिका, तदन्तरं तत्र भजात नाडिका ॥५॥
यदैकवारं विरतिर्द्वयोर्भयो, स्तदाद्वितीयस्य च भस्य भोगकः।
स्फुटस्तु पूर्वर्क्ष घटी युतस्ततोऽधिका यदि स्याद्घटिका निजेष्टजा६
सैवोदिता तत्र गतर्क्ष नाडिका, निजेष्ट नाड्यां रहितो भजातकः।
भभोग संज्ञं खलु तत्र पूर्ववत्, संसाधयेच्छीतमयूखसिद्धये ॥७ ॥

भा० टी०—जिस नक्षत्र में जन्म हो उसके पीछे के नक्षत्र के दंड पलको ६० में घटाकर दो जगह धरे एक जगह सूर्योदयादिष्ट कालके जोड़े तो उसको भयात संज्ञा पण्डितों ने कहे हैं। दूसरे जगह इष्टकाल जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र की घटी पल जोड़ने से भभोग होता है, यदि इष्ट का नक्षत्र पहले दिन पूर्ण है, तो भयात भभोग में ६० जोड़े, यदि इष्टकाल से गत नक्षत्र की घटी कम हो अर्थात् इष्टकाल के दिनका ही गत नक्षत्र है। तो इष्टकालमें गत नक्षत्र की घटी आदि घटानेसे भयात होता है, यदि एक दिन दो नक्षत्र की विरति (क्षयर्क्ष) हो, तो दूसरे नक्षत्र के भोग को ग्रहण करे इष्टकाल में प्रथम नक्षत्र के दंडादिकों को घटानेसे भयात होता है। (प्रथम नक्षत्रके भीतरका ही इष्ट हो तो भी निजर्क्ष जाने) यदि तीन दिन एक नक्षत्र का संबन्ध देख परे तो पहले दिन का जो गत नक्षत्र उसको घटी आदि को ६० में हीन करने पर जो हो उसमें ६० दंड जोड़ कर तीसरे दिन के जितना उस नक्षत्र का दंडादि हो उसके जोड़ने पर भभोग होता है, यदि पूर्व नक्षत्र के घटी आदि को वर्तमान नक्षत्र में जोड़ने पर भी जो इष्ट अधिक हो तो उसको ही गतर्क्षनाडी कहा है, अपने इष्ट नाड़ी में घटाने से भयात होता है,और भभोग की संज्ञा तो चन्द्रमा के स्पष्ट करने के लिये पूर्ववत् साधे ॥ ४–७ ॥

उदाहरण—गतर्क्ष इष्टकाल के ही दिन इष्टके पहले समाप्त होता है अतः इष्ट ४२। ० में गत हस्त नक्षत्र की घटी आदि २२। ४४ को घटाया तो भयात १६। १६ हुआ। गतर्क्ष घटी आदि को ६० में घटाने से ३७। १६ हुआ इसमें इष्ट का नक्षत्र चित्रा है इसका दण्ड पलादि २४। ८ है इसको जोड़ने से भभोग ६१। २४। हुआ।

चन्द्र साधनम् (साधन सुबोधे)—

भयातनाडीं गुणयेत्खखाष्टकैर्भक्तंभभोगेन फलं कलादिकम्।
खखाष्ट निघ्नेगतभेयुतं तु, तरखतर्कभक्तं लवपूर्वको भवेत्॥ ८॥
त्रैशदघृतंतद्भवनादि संज्ञकं बुधैर्निरुक्तं हिमदीधितेः स्फुटम्।
भभोगभक्तं खखखाष्टसागरं हिमद्युतेः स्पष्टगतिः प्रजायते॥ ९॥

भा० टी०—पलात्मक भयात को ८०० से गुणा के उसमें पलात्मक भभोग से भाग देने पर जो लब्ध कलादिक हो उसको अश्विनी से गत नक्षत्र की संख्या को ८००से गुणा करनेसे जो संख्या हो उसमें जोड़कर ६०का भाग देने

से अंशादि फल होता है अंश में ३० का भाग देने से स्पष्ट चन्द्रमा* की राश्यादि स्पष्ट होती हैं, ४८००० में भभोग का भाग देने से चन्द्रमाकी गति स्पष्ट होती है ॥ कामाशान् विंशति कलाः संगुणय गत मेन वै । स्वर्क्ष घट्यादि मिश्रापि गुणयेद् योजयेत् ततः । स्थूल रीत्या निशाधीशःस्पष्टो भवति वै ध्रुवम् । १३ अंश, २० कला को गत नक्षत्र की संख्या से गुणा करे फिर १३ अंश २० कला को वर्तमान नक्षत्र की घटी से भी गुणा कर दोनों एकत्र युक्त करने से चन्द्रमा स्थूल रीति से स्पष्ट होता है ॥

उदाहरण—भजात २६ । १६ भभोग ६१ । २४ है भजात के घटी २६ को ६० से गुणा कर १६ पल जोड़ने पर पलात्मक भजात १७५६ हुआ, इसी प्रकार भभोग की घटी ६१ को ६० से गुणा कर २४ पलको जोड़ने पर पलात्मक भभोग ३६८४ हुआ, पलात्मक भजात १७५६ को ८०० से गुणा किया तो १४०४८०० हुआ । इसमें पलात्मक भभोग ३६८४ का भाग देने पर लब्ध ३८१ । १६ । २६ मिला अश्विनी से गत नक्षत्र हस्तकी संख्या १३ है इसको ८०० से गुणा तो १०४०० हुआ इसमें लब्ध ३८१ । १६ । २६ को जोड़ा तो १०७८१ । १६ । २६ हुआ इसमें ६० का भाग दिया तो लब्ध अंशादि १७६ । ४१ । १६ । २६ । मिला अंश १७६ में ३० का भाग लेने से लब्ध राशि ५ हुई शेष २६ अंश बचा, अतः स्पष्ट चन्द्रमा ५ । २६ । ४१ । १६ । २६ हुआ । "खपद् घ्नंभजातं" इसके अनुसार भी ये ही फल निकलता है। ४८००० को ६० से गुणा किया तो २८८०००० हुआ इसमें सजाती (पलात्मक) भभोग का भाग दिया तो चन्द्रमा की कलादि स्पष्टगति ७८१ । ४५ हुई ॥

अयनांश साधनम् (संग्रह सर्वस्वे)—

भूनेत्रवेदोन शकस्त्रिनिघ्नो व्योमाभ्रनेत्रैर्विहृतोऽयनांशाः
त्रिघ्नोऽर्कराशिःस्वदलेनयुक्तः तावन्मितास्यादिकलाभिराढ्याः।

भा० टी०—वर्तमान शाका में ४२१ को घटा देने से जो शेष बचे उसको ३ से गुणा करके २०० का भाग देने से जो लब्ध हो वह अंश, शेषको ६० से गुणकर २०० के भाग देने से जो लब्ध मिले वह कला, शेष के पुनः ६० से

---

* खपद्घ्नं भजातं भभोगोद्धृतं तत् [illegible] ।
भयातं [illegible] भभोगेन भक्ताः ॥ भा०टी०

गुणा कर २०० का भाग देने से लब्ध फल विकला मिलेगा इस प्रकार उस शाका के वर्षारंभ में अंशादि अयनांशा होता है। जिस महीने का तत्कालिक अयनांशा बनाना हो तो उस मास की सूर्य संक्रान्ति को ३ से गुणा कर उसका आधा उसमें जोड़े तो यह विकला होता है इसको अयनांशा के विकला में जोड़ दे (यह अयनांशा प्रत्येक वर्ष ५४ विकला बढ़ता है) अर्थात् साढ़ेचार विकला का मास बढ़ता है जो नित्य का हिसाब लगाने पर ९ प्रति विकला की वृद्धि प्रत्येक दिन होती है, मकरन्द के अनुसार प्रत्येक वर्ष १ कला की वृद्धि है सायनसुबोध के अनुसार ५९ विकला ५० प्रति विकला की वृद्धि है परन्तु प्रायः अधिकांश विद्वान् ५४ विकला की ही वृद्धि को स्वीकार करते हैं ॥ १० ॥

उदाहरण—वर्तमान शाका १८०७ में ४२१ को घटाया तो १३८६ बचा इसको ३ से गुणा करे तो ४१५८ हुआ, इसमें २०० का भाग देने से लब्ध २०।४७।२४ अयनांशा वर्षारंभ में हुआ, यहाँ सूर्य की राशि शून्य है अतः "त्रिघ्नोर्करात्रि" इस क्रिया की आवश्यकता नहीं है परन्तु ५४ विकला की वृद्धि प्रत्येक वर्ष होती है अतएव ९ प्रति विकला की नित्य वृद्धि होना निश्चय है जिससे मेष के १६ अंश बीतने के कारण १ कला २४ प्रति विकला बढ़ा इसको अयनांशा २०।४७।२४ में मिलाने से वर्तमानकाल का अयनांशाः २०।४७।२५ २४ हुआ * ॥

चरखण्डानयनम् (भास्वत्यां)-

द्विगुणाविषुवच्छाया विभजेत् क्रमशस्त्रिधा ।
सूर्याद्रिः पट्टगुणैर्लब्धं चरखण्डापला भवेत् ॥ ११ ॥

भा० टी०—मेष की सायन संक्रान्ति के दोपहर को १२ अंगुल की शंकु की जो अपने २ देशमें छाया हो विषुवच्छाया (पलभा) कहते हैं, () पलभा को २ से गुणा कर पलात्मक बनाकर तीन जगह धरे तीनों जगह क्रम से १२।१५।३६ का भाग लेने से फल चरखण्डा होता है ॥ ११ ॥

---

* अन्युदाहरण-अयनांशाः २०।४७।२४ है सूर्य की गत राशि ६ अंश १० है, राशि ६को ३से गुणा तो १८हुआ इसमें इसका आधा ९ मिलाया तो२७ विकला हुआ १० अंश है इसको ९ से गुणा तो ९० हुआ, ६० से शोधित करने पर लब्ध १ विकला शेष ३० प्रति विकला रहे, लब्ध १ को २७ में जोड़ने से २८ विकला हुआ इसको वर्षारम्भके अयनांशा२०।४७।२४में जोड़ा तो२०।४७ ५२।३०तत्कालिक अयनांशा हुआ।

() मेषादिगे सायन भाग सूर्ये दिनार्धे याभा पलभा भवेत् सा । मह लाघवे

से अंशादि फल होता है अंश में ३० का भाग देने से स्पष्ट चन्द्रमा* की राश्यादि स्पष्ट होती है, ४८००० में भभोग का भाग देने से चन्द्रमा की गति स्पष्ट होती है ॥ कालाशान् त्रिशति कलाः संगुण्य गत भेन वै । स्वर्क्षं घट्यादि भिक्षादि गुणयेद् योजयेत् ततः । स्थूल रीत्या निशाधीशः स्पष्टो भवति वै ध्रुवम् । १३ अंश, २० कला को गत नक्षत्र की संख्या से गुणा करे फिर १३ अंश २० कला को वर्तमान नक्षत्र की घटी से भी गुणा कर दोनों एकत्र युक्त करने से चन्द्रमा स्थूल रीति से स्पष्ट होता है ॥

उदाहरण—भयात २९ । १६ भभोग ६१ । २४ है भयात के घटी २९ को ६० से गुणा कर १६ पल जोड़ने पर पलात्मक भयात १७५६ हुआ, इसी प्रकार भभोग की घटी ६१ को ६० से गुणा कर २४ पलको जोड़ने पर पलात्मक भभोग ३६८४ हुआ, पलात्मक भयात १७५६ को ८०० से गुणा किया तो १४०४८०० हुआ । इसमें पलात्मक भभोग ३६८४ का भाग देने पर लब्ध ३८१ । १९ । २९ मिला अश्विनी से गत नक्षत्र इसकी संख्या १३ है इसको ८०० से गुणा तो १०४०० हुआ इसमें लब्ध ३८१ । १९ । २९ को जोड़ा तो १०७८१ । १९ । २९ हुआ इसमें ६० का भाग दिया तो लब्ध अंशादि १७९ । ४१ । १९ । २९ । पिण्ड अंश १७९ में ३० का भाग लेने से लब्ध राशि ५ हुई शेष २९ अंश बचा, अतः स्पष्ट चन्द्रमा ५ । २९ । ४१ । १९ । २९ हुआ । "ग्रहाद् ग्रहवशात्" इसके अनुसार भी ये ही फल निकलता है । ४८००० को ६० से गुणा किया तो २८८०००० हुआ इसमें सकल (पलात्मक) भभोग का भाग दिया तो चन्द्रमा की कलादि स्पष्टगति ७८१ । ४५ हुई ॥

भभोग साधनम् ([illegible]) —

भुक्तिश्चेन्दोन शक्राग्निनिघ्नी व्योमाभ्रनेत्रैर्विहृतो गतांशाः
त्रिघ्नाः कृताग्निःखदलेन युक्ताः नाड्यन्मिताः स्यादिकलाभिराद्याः ।

भा० टी०—वर्तमान चन्द्र [illegible] में ४२१ का भाग देने से जो शेष बचे उसको ३ से गुणा करके २०० का भाग देने से जो लब्ध हो वह अंश, शेष को ६० से गुणकर २०० के भाग देने से जो लब्ध मिले वह कला, शेष को पुनः ६० से

* [illegible]

गुणा कर २०० का भाग देने से लब्ध फल विकला मिलेगा इस प्रकार उस शाका के वर्षारंभ में अंशादि अयनांश होता है। जिस महीने का तत्कालिक अयनांश बनाना हो तो उस मास की सूर्य संक्रान्ति को ३ से गुणा कर उसका आधा उसमें जोड़े तो यह विकला होता है इसको अयनांश के विकला में जोड़ दें (यह अयनांश प्रत्येक वर्ष ५४ विकला बढ़ता है) अर्थात् साढ़ेचार विकला का मास बढ़ता है जो नित्य का हिसाब लगाने पर ९ प्रति विकला की वृद्धि प्रत्येक दिन होती है, ग्रहलाघव के अनुसार प्रत्येक वर्ष १ कला की वृद्धि है सायनसुबोध के अनुसार ५९ विकला ५० प्रति विकला की वृद्धि है परन्तु प्रायः अधिकांश विद्वान् ५४ विकला की ही वृद्धि को स्वीकार करते हैं ॥ १० ॥

उदाहरण—वर्तमान शाका १८०७ में ४२१ को घटाया तो १३८६ बचा इसको ३ से गुणा करे तो ४१५८ हुआ, इसमें २०० का भाग देने से लब्ध २०।४७।२४ अयनांश वर्षारंभ में हुआ, यहाँ सूर्य की राशि शून्य है अतः "त्रिघ्नोर्कराशिः" इस क्रिया की आवश्यकता नहीं है परन्तु ५४ विकला की वृद्धि प्रत्येक वर्ष होती है अतएव ९ प्रति विकला की नित्य वृद्धि होना निश्चय है जिससे मेष के १६ अंश बीतने के कारण १ कला २४ प्रति विकला बढ़ा इसको अयनांश २७।४७।२४ में मिलाने से वर्तमानकाल का अयनांशः २०।४७।२५ २४ हुआ * ॥

चरखण्डज्ञानम् (आर्यार्धं)—

द्विगुणाविषुवच्छाया विभजेत् क्रमशस्त्रिधा ।
सूर्याहः षड्गुणैर्लब्धं चरखण्डापला भवेत् ॥ ११ ॥

भा० टी०—मेष की सायन संक्रान्ति के दोपहर को १२ अंगुल की शंकु की जो अपने २ देशमें छाया हो विषुवच्छाया (पलभा) कहते हैं, () पलभा को २ से गुणा कर पलात्मक बनाकर तीन जगह धरे तीनों जगह क्रम से १२।१५।३६ का भाग लेने से फल चरखण्ड होता है ॥ ११ ॥

---

* अन्युदाहरण-अयनांशाः २०।४७।२४ हैं सूर्य की गत राशि १ अंश १० है, राशि १को ३से गुणा तो १८हुआ इसमें इसका आधा ९ मिलाया तो२७ विकला हुआ १० अंश हैं इसको ९ से गुणा तो ९० हुआ, ६० से शोधित करने पर लब्ध १ विकला शेष ३० प्रति विकला रहे, लब्ध १ को २७ में जोड़ने से २८ विकला हुआ इसको वर्षारम्भके अयनांश२०।४७।२४में जोड़ा तो२०।४७।५२।३०तत्कालिक अयनांश हुआ।

() मेषादिगे सायन भानु सूर्ये दिनार्धे याभा पलभा भवेत् सा। यह तात्पर्य

उदाहरण—श्री काशीजी का पलभा ५।४५ है इसको ३ से गुणा करे तो ११।३० हुआ इसको सजाती किया तो ६९० हुआ, इसको तीन जगह रक्खा पहले जगह १२ का भाग दिया तो फल ५७ हुआ, दूसरे जगह १५ का भाग दिया तो फल ४६ मिला, तीसरे जगह ३६ का भाग दिया तो १९ लब्ध मिला, एवं श्री काशीजी का चरखण्डा ५७।४६।१९ हुआ ॥

लङ्कोदयमानं तत्मात्स्वदेशमानम् (भास्वत्यां)-

वस्वर्त्तनन्दनाग्नि त्रिरदं च क्रमोत् क्रमात् ।
चरखण्डोनितं युक्तं विनाड्यो नाडिकादयः ॥ १२ ॥

भा० टी०—लंका में मेष () का २७८, वृष का २९९, मिथुन का ३२३ पल मान है, इसके विपरीत करने से कर्क का ३२३, सिंह का २९९, कन्या का २७८ पल मान है, इन छवोंके मानको उलटा करनेसे तुलादि छः राशिका मान जानें। इन मेष वृष मिथुन के लंकोदय पलात्मक मान को क्रम से तथा उत्क्रम से धरके उन चरखण्डा को मेषादि तीन में हीन तथा कर्कादि तीन में युक्त करने से मेषादि छः राशियों के स्वदेशोदय मान होते हैं वही उलटे तुलादि छः राशियों के भी मान होते हैं ॥ १२ ॥

राशि	लंकोदय		चरखंडा		स्वदेशोदय	राशि	लंकोदय		चरखंडा		स्वदेशोदय
मेष	२७८	—	५७	=	२२१	तुला	२७८	+	५७	=	३३५
वृष	२९९	—	४६	=	२५३	वृश्चिक	२९९	+	४६	=	३४५
मिथुन	३२३	—	१९	=	३०४	धन	३२३	+	१९	=	३४२
कर्क	३२३	+	१९	=	३४२	मकर	३२३	—	१९	=	३०४
सिंह	२९९	+	४६	=	३४५	कुंभ	२९९	—	४६	=	२५३
कन्या	२७८	+	५७	=	३३५	मीन	२७८	—	५७	=	२२१

नतप्रकारः (ता० नी०)-

पूर्वं नतं स्याद्दिनरात्रिखण्डं दिवानिशोरिष्टघटीविहीनम् ।
दिवानिशोरिष्ट घटीषु शुद्धंद्युरात्रिखण्डंत्वपरं नतंस्यात् ॥ १३ ॥

भा० टी०—दिन का इष्टकाल दिनार्द्ध में रात्रि का इष्टकाल रात्र्यार्द्ध में घट

() लङ्कोदया भाग गुणक्षदस्रागोङ्कादिशो रामदराविनाड्यः ।
क्रमोत्क्रमस्थैश्चरखण्डकैः स्वैः क्रमोत्क्रमस्थैश्च विहीनयुक्ताः ।
मेषादिषण्णामुदयः स्वदेशे तुलादिषोऽमी च षडुत्क्रमस्थाः । सिद्धान्तशि०

जाय तो पूर्वनत होता है। इसी प्रकार यदि दिन या रात्रि के इष्टकाल ही में दिनार्द्ध या रात्र्यार्द्ध घट जाय तो परनत होता है * ॥ १३ ॥

उदाहरण—इष्ट ५२।० दिनमान ३२।१७ रात्रिमान २७।४३ दिनमान को इष्ट में हीन करने पर १६।४३ रात्रीष्ट हुआ। रात्रिमान का आधा १३।५१।३० है यह रात्रीष्ट से न्यून है अतः उसमें रात्रिमानार्ध घटाने पर परनत ५।५१।३० हुआ।

लग्नादिभावसाधनम् (साध० सु०)-

तात्कालिकस्यायनभागयुग्रवेभोग्यांशकालोदयभोगसंगुणात् ।
खरामनिघ्नं द्युमणेः पलादिकं भोग्याह्वयं कालमिमं विशोधयेत् १४
निजेष्टकाले हि विनाडिकात्मके तथैव भोग्यानुदयान् स्वदेशजान्।
शेषं खरामघ्नमशुद्धभाजितं लवादिकं शुद्धभसंयुतं तनुः ॥ १५॥
एवं गतांशैर्गतकालमुक्तवत् खाङ्गोनितेष्टाद्रहितं गतोदयात् ।
अशुद्धलब्धं लवपूर्वकं त्यजेदशुद्धभेयोयनभागवर्जितः ॥ १६ ॥
लग्नेभवेदेवमतोनिरक्षजैर्भुक्तं त्यजेत् पूर्वनताच्च भोग्यकम् ।
पश्चान्नतादन्यविधिस्तु पूर्ववत् खभं सषड्भं सुखभं प्रकीर्तितम् १७
लग्नं सषड्भं मदनाभिधं भवेल्लग्नोन तुर्यस्य षडंशसंयुतम् ।
लग्नं भवेत्सन्धिरहो मुहुर्मुहुः षष्ठ्यांश योगाद्धनभावपूर्वकम् ॥१८॥
भावास्त्रयः सन्धियुतास्सुखान्तका षष्ठ्यांश भोग्यान्वित वेश्मभावतः।
अग्रेत्रयः सन्धियुता भवन्ति ते जायान्तकाषड्भयुतापरोऽपिषट्।१६।

भा० टी०—जिस समय का लग्न साधन करना हो उस समय के स्पष्ट सूर्य में अयनांश को युक्त करने से सायन सूर्य होगा उसके अंशादि को ३० में घटाने से भोग्यांश आदि होते हैं इनको सूर्य की सायन राशि के स्वदेश मान से गुणा कर ३० का भाग देने से लब्ध भोग्यकाल होते हैं और भुक्तांश में उक्त क्रिया करने से भुक्त काल सायन सूर्य का होता है। सूर्योदय से इष्ट समय तक जितने घटी पल बीते हों उनको पलात्मक कर भोग्यकाल को घटावे फिर उसमें सायन सूर्य जिस राशि के हों उसके आगे की जिन २ राशियों का स्वदेश

* उदयेष्टात्समध्यान्हे मध्यरात्रो मतं न हि। अङ्कराशि युते लग्ने कर्मभाव स्तदैव हि

उदाहरण—श्री काशीजी का पलभा ५।४५ है इसको ३ से गुणा करे तो ११।३० हुआ इसको सजाती किया तो ६९० हुआ, इसको तीन जगह रक्खा पहले जगह १२ का भाग दिया तो फल ५७ हुआ, दूसरे जगह १५ का भाग दिया तो फल ४६ मिला, तीसरे जगह ३६ का भाग दिया तो १९ लब्ध मिला, एवं श्री काशीजी का चरखण्डा ५७।४६।१९ हुआ ॥

लङ्कोदयमानं तस्मात्स्वदेशमानम् (भास्वत्यां)-

वस्वर्त्तनन्दनाग्नि त्रिदं च क्रमोत् क्रमात् ।
चरखण्डोनितं युक्तं विनाड्यो नाडिकादयः ॥ १२ ॥

भा० टी०—लंका में मेष () का २७८, वृष का २९९, मिथुन का ३२३ पल मान है, इसके विपरीत करने से कर्क का ३२३, सिंह का २९९, कन्या का २७८ पल मान है, इन छवोंके मानको उलटा करनेसे तुलादि छः राशिका मान जानें। इन मेष वृष मिथुन के लंकोदय पलात्मक मान को क्रम से तथा उत्क्रम से धरें उन चरखण्डा को मेषादि तीन में हीन तथा कर्कादि तीन में युक्त करने से मेषादि छः राशियों के स्वदेशोदय मान होते हैं वही उलटे तुलादि छः राशियों के भी मान होते हैं ॥ १२ ॥

राशि	लंकोदय		चरखंडा		स्वदेशोदय	राशि	लंकोदय		चरखंडा		स्वदेशोदय
मेष	२७८	—	५७	=	२२१	तुला	२७८	+	५७	=	३३५
वृष	२९९	—	४६	=	२५३	वृश्चिक	२९९	+	४६	=	३४५
मिथुन	३२३	—	१९	=	३०४	धन	३२३	+	१९	=	३४२
कर्क	३२३	+	१९	=	३४२	मकर	३२३	—	१९	=	३०४
सिंह	२९९	+	४६	=	३४५	कुंभ	२९९	—	४६	=	२५३
कन्या	२७८	+	५७	=	३३५	मीन	२७८	—	५७	=	२२१

नतप्रकारः (भा० टी०)-

पूर्वं नतं स्याद्दिनगत्रिभगडं दिवानिशोरिष्टघटीविहीनम् ।
दिवानिशोरिष्टघटीषु शुद्धंयुगत्रिभगडंतपरं नतंस्यात् ॥ १३ ॥

भा० टी०—दिन का इष्टकाल दिनार्द्ध में रात्रि का इष्टकाल रात्र्यर्द्ध में घट

() [illegible]
[illegible]
[illegible]

जाय तो पूर्वनत होता है। इसी प्रकार यदि दिन या रात्रि के इष्टकाल ही में दिनार्द्ध या रात्र्यर्द्ध घट जाय तो परनत होता है * ॥ १३ ॥

उदाहरण–इष्ट ५२।० दिनमान ३२।१७ रात्रिमान २७।४३ दिनमान को इष्ट में हीन करने पर १९।४३ रात्रीष्ट हुआ। रात्रिमान का आधा १३।५१।३० है यह रात्रीष्ट से न्यून है अतः उसमें रात्रिमानार्ध घटाने पर परनत ५।५१।३० हुआ।

लग्नादिभावसाधनम् (साध० सु०)-

तात्कालिकस्यायनभागयुग्रवेभोग्यांशकालोदयभोगसंगुणात् ।
खरामनिघ्नं द्युमणेः पलादिकं भोग्याह्वयं कालमिमं विशोधयेत् १४
निजेष्टकाले हि विनाडिकात्मके तथैव भोग्यानुदयान् स्वदेशजान्।
शेषं खरामघ्नमशुद्धभाजितं लवादिकं शुद्धभसंयुतं तनुः ॥ १५॥
एवं गतांशैर्गतकालमुक्तवत् खाङ्गोनितेष्टाद्रहितं गतोदयात् ।
अशुद्धलब्धं लवपूर्वकं त्यजेदशुद्धभेथोयनभागवर्जितः ॥ १६ ॥
लग्नेभवेदेवमतोनिरक्तजैर्भुक्तं त्यजेत् पूर्वनताच्च भोग्यकम् ।
पश्चान्नतादन्यविधिस्तु पूर्ववत् खभं सषड्भं सुखभं प्रकीर्तितम् १७
लग्नं सषड्भं मदनाभिधं भवेल्लग्नोन तुर्यस्य षडंशसंयुतम् ।
लग्नं भवेत्सन्धिरहो मुहुर्मुहुः षष्ठांश योगाद्धनभावपूर्वकम् ॥१८॥
भावास्त्रयः सन्धियुतास्सुखान्तका षष्ठांश भोग्यान्वित वेश्मभावतः।
अग्रेत्रयः सन्धियुता भवन्ति ते जायान्तकाषड्भयुतापरोऽपिषट्।१९।

भा० टी०–जिस समय का लग्न साधन करना हो उस समय के स्पष्ट सूर्य में अयनांश को युक्त करने से सायन सूर्य होगा उसके अंशादि को ३० में घटाने से भोग्यांश आदि होते हैं इनको सूर्य की सायन राशि के स्वदेश मान से गुणा कर ३० का भाग देने से लब्ध भोग्यकाल होते हैं और भुक्तांश में उक्त क्रिया करने से भुक्त काल सायन सूर्य का होता है। सूर्योदय से इष्ट समय तक जितने घटी पल बीते हों उनको पलात्मक कर भोग्यकाल को घटावे फिर उसमें सायन सूर्य जिस राशि के हों उसके आगे की जिन २ राशियों का स्वदेश

* यद्येवास्तमयान्दे मध्यरात्रौ नतं न हि। अङ्कराशि युते लग्ने कर्मभाव सदैव हि॥

मान घटे उसको घटावे, शेष को ३० से गुणा करके उसमें भुक्तोदय (घटी हुई राशि के आगे की राशि की भुक्तोदय संज्ञा है) के मान का भाग देने पर जो अंशादि फल मिले उसके पहले (राशि के स्थान पर) मेषादि से गिनने पर जितनी घटी हुई राशि की संख्या हो उसे लिखे फिर उसमें अयनांश को घटाने से स्पष्ट लग्न होता है। इसी प्रकार गतांश से भुक्त काल बनाकर इष्ट को ६० में घटाने से जो बचे उसको पलात्मक करके उसमें सायन सूर्य की राशिके पीछे की राशि का जो मान घटे उसको घटावे बाद पूर्ववत् क्रियाकर अंशादि फल निकालकर भुक्तोदय के संख्या में हीन करके अयनांश को घटानेसे स्पष्ट लग्न होता है। पूर्वनत हो तो लंकोदय मान का भुक्त घटा कर तदनुसार क्रिया करके दशम लग्न स्पष्ट करे और परनत हो तो लंकोदय के मान का भोग्यकाल घटाकर दशम लग्न साधे। दशम लग्न में ६ राशि जोड़ने से सुख भाव होता है, लग्न स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से जाया भाव होता है, लग्न को सुख भाव में घटाने से जो शेष बचे उसमें ६ का भाग लेने से षष्ठांश होता है, षष्ठांश को ३० में घटाने से षष्ठांशोनैक्य होता है, लग्न में षष्ठांश जोड़ने से सन्धि बार बार होती है लग्न सन्धि में षष्ठांश युत करनेसे धन भाव होता है फिर आगे धन भाव में युत करने से उसकी सन्धि होगी फिर आगे भी इसी प्रकार युक्त करता जाय तो तीन भावकी सन्धि सुख पर्यंत होगी आगे षष्ठांश भोग्य (षष्ठांशोनैक्य) के युक्त करनेसे सुख भावसे जाया भाव तक तीन भाव स्पष्ट हो जाते हैं और ऊपर के भावों में छः छः राशि युत करने से सन्धि के सहित जाया भाव से व्ययभाव तक स्पष्ट हो जाते हैं ॥ १४-१६ ॥

उदाहरण—तत्कालिक सूर्य ०।१५।४०।४६ है इसमें तत्कालिक अयनांश २०।४७।२५।२४ को युत किया तो सायन रवि १।६।२८।१४।२४ हुआ। इसके भुक्त अंश आदि को ३० में हीन करने से भोग्यांशादि २३।३१।४५।३६ हुआ। इसमें वृषराशि के सायन सूर्य हैं अतः काशीजीमें वृषराशि का मान २५३ से गुणा तो ५९।५२।५५।१६।४८ हुआ इसमें ३० का भाग लेनेपर लब्ध भोग्यकाल १९८।२५।५०।३२ हुआ भुक्तांशादि ६।२८।१४।२४ को २५३ से गुणा तो १६३७।४।४३।१२ इसमें ३० का भाग दिया तो भुक्तकाल ५४।३४।९।२७ हुआ भुक्तकाल और भोग्यकालका योग २५३ है इससे गणित शुद्ध है। इष्टकाल ५२।० है इसको ६० से गुणा ३१२० हुआ इसमें भोग्यकाल १९८।२५।५०।३३ को घटाया तो २९२१।३४।९।२७ रहा, इसमें सायन सूर्यके आगे की राशि कुम्भ

धरु के मान का योग २२०५ को घटाये तो शेष १६।३४।६।२७ बचा इसको ३० से गुणा करे तो ४६७।४।४३।३० (कुम्भ राशि तक घटा है अतः कुम्भ शुद्ध इसके आगे की राशि अशुद्ध संज्ञक है) इसमें अशुद्धोदयमान २२१ से भाग देने पर लब्ध २ फल मिला शेष को ६० से गुणा कर अशुद्धोदय का भाग देने पर कलादि फल १४।५७।१२ मिला, भोग्यकाल को घटाकर लग्न बनाते हैं अतः शुद्ध लग्न की संख्या ११ युत किया तो राश्यादि ११।२।१४।५७।१२ हुआ इसमें अयनांशाः २०।४७।२५।२४ हीन किया तो स्पष्ट लग्न १०।११।२७।३१।४६ हुआ। इष्टकाल ५२ को ६० में हीन करने पर ८ बचा इसको ६० से गुणा तो ४८० हुआ इसमें भुक्तकाल ५४।३४।६।२७ को घटाया तो ४२५। २५।५०।३३ बचा इसमें सायन सूर्य के पीछे की राशि मेष का मान २२१ घटाने पर २०४।२५।५०।३३ रहा, इसको ३० से गुणा तो ६१३२।५५।१६। ३० हुआ इसमें अशुद्धोदय मीन के मान २२१ के मान से भाग देने पर लब्ध अंशादि २७।४५।२।४७ मिला इसको अशुद्ध लग्न मीन की संख्या १२ राशि में घटाया तो राश्यादि ११।२।१४।५७।१३ हुआ, इसमें अयनांशा २०।४७। २५।२४ हीन किया तो स्पष्ट लग्न १०।११।२७।३१।४६ हुआ, यह और भोग्यकाल से स्पष्ट किया हुआ लग्न समान ही होता है अतः ये शुद्ध हैं।

सायन रवि के भुक्तांश और भोग्यांश को दशम लग्न साधन करने के लिये लंकोदय के मानानुसार वृष राशि के मान से गुणा कर ३० का भाग देने पर लब्ध भुक्तकाल ६४।२६।२७।३१ भोग्यकाल २३४।३०।३२।२६ हुआ।

रात्रि का परनत ५।५१।३० है, इसके ५ को ६० से गुणा कर ५१ को जोड़ा तो ३५१।३० हुआ इसमें भोग्यकाल २३४।३०।३२।२६ को हीन किया तो ११६।२६।२७।३१ बचा इसमें इसके आगे की राशि मिथुन का मान नहीं घटता अतः वृष शुद्ध मिथुन अशुद्ध संज्ञक हुआ शेष ११६।२६।२७।३१ को ३० से गुणा तो ३४६४।४३।४५।३० हुआ इसमें अशुद्धोदय मिथुन के लङ्कोदय के मान ३२३ का भाग दिया तो लब्ध अंशादि फल १०।४६।१०।३३ मिला इसमें शुद्ध लग्न वृष को युत करने से अयनांशाः २०।४७।२५।२४ को घटाया तो १।२०।१।४५।६ हुआ दशम लग्न नहीं आया है तुर्य लग्न आया है अतः ६ राशिको राशिके जगहमें जोड़नेसे स्पष्ट दशम लग्न ७।२०।१।४५।६ हुआ राशि के स्थानमें ६ राशि युत करने से सुखभाव १।२०।१।४५।६ हुआ इसमें स्पष्ट लग्न १०।११।२७।३१।४६ को घटाया तो ३।८।२४।१३।२० रहा इसमें

६ का भाग देने से षष्ठांश ०|१६|२५|४२|१३|२० हुआ, इसको ३० में हीन करने से षष्ठांशोनैक्य ०|१३|३४|१७|४६|४० हुआ षष्ठांश को लग्न में जोड़ने से तनु की संधि १०|२७|५३|१४|२|२० हुई इसमें षष्ठांश जोड़ने से धनभाव ११|१४|१८|५६|१५|४० हुआ, इसमें षष्ठांश युत करने से धनभाव की सन्धि ०|०|४४|३८|२६|० हुई, इसमें षष्ठांश युत करनेसे सहजभाव ०|१७|१०|२०|४२|२० हुआ इसमें षष्ठांश युक्त करने से सहजभाव की संधि १|३|३६|२|५५|४० हुई इसमें षष्ठांश युत करने से सुखभाव १|२०|१|४५|९ हुआ, अब इसमें षष्ठांशोनैक्य ०|१३|३४|१७|४६|४० युत करने से सुख भाव की संधि २|३|३६|२|५५|४० हुई, इसमें षष्ठांशो० युत करने से पुत्र भाव २|१७|१०|२०|४२|२० हुआ, इसमें षष्ठांशो० युत करने से पुत्रभाव की संधि ३|०|४४|३८|२६|० हुई, इसमें षष्ठांशो० युत करने से शत्रुभाव ३|१४|१८|५६|१५|४० हुआ, इसमें षष्ठांशो० युत करने से शत्रुभाव की सन्धि ३|२७|५३|१४|२|२० हुई, आगे इन छः भावों में राशि के जगह छः छः राशि युत करने से जायादि संधि सहित छः भाव स्पष्ट होते हैं अंशादि सब ऊपर के ही भाव का रहता है।

तन्वादि द्वादशभावाः स्पष्टाः

त.	सं.	ध.	सं.	स.	सं.	सु	सं.	पु.	सं	श	सं
१०	१०	११	०	०	१	१	२	२	३	३	३
११	२७	१४	०	१७	३	२०	३	१७	०	१४	२७
२५	५३	१८	५६	१०	३६	१	३६	१०	५८	१८	५३
३१	१४	५६	३८	२०	३	४५	३	२०	३८	५६	१४
३२	२	१५	२१	४२	५५	६	५५	४२	२६	१५	२
०	२०	४०	०	२०	४०	०	४०	२०	०	४०	२०

जा	सं	मृ	सं	ध	सं	क	सं.	मा	सं	व्य	सं
४	४	५	६	६	६	७	८	८	८	९	९
११	२७	१४	०	१७	३	२०	३	१७	०	१४	२७
२५	५३	१८	५६	१०	३६	१	३६	१०	५८	१८	५३
३१	१४	५६	३८	२०	३	४५	३	२०	३८	५६	१४
३२	२	१५	२१	४२	५५	६	५५	४२	२६	१५	२
०	२०	४०	०	२०	४०	०	४०	२०	०	४०	२०

जन्मलग्नाङ्गम्

सू, बु. शु | म. श. १२ | १० | ११ | ९ | २ | ८ | गु ५ | ३ | ४ | ७ | चं.रा.६

भावचलित कुण्डलीयम्

ध. | र. | रा. | श. | म. | बु. | के. | बु. | सू. | श.

निजेष्टकालाद् विघटीकृता खेर्भुक्तं च भोग्यं यदि नैव शुद्ध्यति।
मृगमनिघ्नौ निजभोदयाद्युनाढ्यं लवाद्यं रदिनं युतं खौ ॥२०॥

भा॰ टी॰—निज इष्टकाल को पलात्मक में यदि लग्न सूर्य का भुक्तभोग्य

या भोग्यकाल न घटे तो ३० से गुणा करके सायन सूर्य की राशि के मान से भाग लेकर अंशादि फल को भुक्तक्रिया की आवश्यकता में सूर्य के राश्यादि में जोड़े, भोग्यक्रिया की आवश्यकता में घटावे तो स्पष्ट लग्न होता है ॥ २० ॥

सन्धिद्वयान्तस्थितखेटनाथेऽ तद्भावयाते हि फलं विदुर्बुधाः ।
सन्धिद्वयाभ्यां खचरेऽल्प पुष्टके पूर्वा परोत्थं सकलं फलं दिशेत् ॥

भा० टी०–समीप के दो भावों के योगार्ध को संधि कहते हैं सन्धि में स्थित ग्रह पूर्ण फल नहीं देते तो सन्धि से न्यून ग्रह पूर्वभाव का और संधि से विशेष परभाव का फल देते हैं ॥ २१ ॥

प्राणपदसाधनं (संग्रह सर्वस्वे)-

स्वेष्टकालं पलीकृत्य तिथ्याप्तं भादिकं च यत् ।
चरागद्विभगेभागे भानौ युङ्नवमे सुते ॥ २२ ॥
स्फुटं प्राणपदं तस्मात् पूर्ववच्छोधयेत् तनुम् ।

भा० टी०–इष्टकाल को पला बना कर उसमें १५ का भाग देने से जो लब्ध मिले उसको सूर्य चर राशिका हो तो उसी में, स्थिरका हो तो उससे ९ वीं राशि में द्विस्वभाव के हो तो उससे ५वीं राशि में जोड़ने से प्राणपद होता है, "लग्नांश प्राणांश पदैक्यतास्यात्" लग्न का अंशादि प्राणपद का अंशादि का समता होना चाहिये, ऐसा न हो तो दोनों के अंशादि के अर्धभाग को इष्टकाल में बार २ न्यूनाधिक कर लग्नांश और प्राणपदांश को समान बनावे ॥ २२ ॥

होरालग्नसाधनम् (महादेवपद्धतिः)-

द्विघ्नेष्टनाड्यः पञ्चाप्तः भं शेषं च पलीकृतम् ।
दशाप्तमंशास्तैर्युक्ता स्वौ होरोदयं भवेत् ॥ २३ ॥
विषमेऽङ्के खौ योज्यं समेऽङ्के लग्नभादिषु ॥ २४ ॥

भा० टी०–इष्ट घटी पल को २ से गुणा करके ५ से भाग देने पर लब्धि राशि होगी, शेष को पल बनाकर १० का भाग देने से जो लब्धि मिले वह अंश, फिर शेष को ६० से गुणा कर १० के भाग से जो लब्धि मिलेगी वह कला होगी * इस राशि आदि को जन्म लग्न विषम हो तो सूर्य के राशि आदि में और सम हो तो जन्म लग्न में जोड़ने से होरा लग्न होता है ॥ २३ ॥ २४ ॥

* ढाई घड़ी का होरालग्न होता है, (एक घड़ी का १२ अंश होता है, ५ पल का एक अंश होता है, १२ पल का एक कला होता है) अतः एकघटी १२ के १६० का

जैमिनिसूत्रानुसारेणायुर्निर्णयम् ।

आयुः पितृदिनेशाभ्याम् १ ।
प्रथमयोरुत्तरयोर्वा दीर्घम् २ ।
प्रथमद्वितीययोरन्त्ययोर्वा मध्यम् ३ ।
मध्यमयोराद्यन्तयोर्वा हीनम् ४ ।
एवं मन्दचन्द्राभ्याम् ५ ।

१ दीर्घ १	१ मध्य २	१ अल्प ३
२ दीर्घ ३	२ मध्य १	२ अल्प २
३ दीर्घ २	३ मध्य ३	३ अल्प १

१ से चर, २ से स्थिर, ३ से द्विस्वभाव राशि को जाने

पितृकालतश्च ६ । सम्वादात्प्रामाण्यम् ७ । विसंवादे पितृकालतः ८ । पितृलाभगेचन्द्रे मन्दचन्द्राभ्याम् ९ । पितृलाभरोगेशे प्राणिनिकण्टकादिस्थेस्वतश्चैवंत्रिधा ।

भा० टी०—यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों चर राशि में हो या एक दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो दीर्घायु, दोनों द्विस्वभाव राशि में या एक चर दूसरा स्थिर राशि में हो तो मध्यायु, दोनों स्थिर राशि में या एक चर दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो अल्पायु जाने । लग्न या सप्तम में चन्द्रमा हो तो लग्न चन्द्रमा से या शनि चंद्रसे आयु विचारे इन तीनों प्रकारसे अथवा दो प्रकारसे जो आयु आवे उसीको ग्राह्य करे, यदि तीनों प्रकारसे भिन्न २ आयु आवे तो जन्मलग्न या होरा लग्न से आयु का ग्रहण करे । जो द्वितीयेश और अष्टमेश बलवान् होकर केन्द्र में हो तो दीर्घायु, पणफर में मध्यायु, आपोक्लिम में हो तो अल्पायु होती है ॥

पञ्चधामैत्री (माधवसुबोधे)—

व्ययायकर्मद्विसहाम्बुसंस्थिता भवन्ति मित्राणि परेषु ये पराः ।
निजस्थिते तुङ्गगृहेऽपि ये स्थिता तत्कालमित्राणि वदन्ति केचन ॥

भा० टी०—जो ग्रह १२।११।१०।२।३।४ स्थानों में रहता है वह तत्काल मित्र होता है और अन्य (१।५।६।७।८।९) स्थानों में रहनेवाला तत्काल शत्रु होता है, किसी का मत है कि अपने गृह तथा अपने उच्च स्थान का रहनेवाला भी तत्काल मित्र होता है ॥ २५ ॥

नैसर्गतात्कालिकयोर्यदिद्वयो मित्रं भवेत्सोऽधिसुहृत्तथाऽरिः ।
समान्वितौ मित्ररिपू तथा त्रिधौ दिनादिनं चेत्समतां भजेत्ययौ ।२६।

[illegible] २० से गुणा कर १५० का भाग [illegible]
[illegible] २० से गुणा कर १५० के भाग से [illegible] होती है ।

भा० टी०-स्वाभाविक और तात्कालिक दोनों में मित्र है वह अधिमित्र है, दोनों जगहके शत्रु अधिशत्रु हैं एक जगह मित्र दूसरे जगह शत्रु सम है, मित्र सम मित्र है, शत्रु सम शत्रु होते हैं । सारावली में लिखा है कि-जो नैसर्गिक (स्वाभाविक) मित्र सम शत्रु हैं वह तत्काल में मित्र हो जाय तो अधिमित्र मित्र सम क्रमसे होते हैं। जो स्वाभाविक शत्रु सम मित्र हैं वह यदि तात्कालिक शत्रु हो तो क्रम से अधिशत्रु शत्रु सम होते हैं ॥ २६ ॥

विंशोत्तरीदशाभेदाः—

दशा चान्तर्दशाचैव तत् तदन्तर्दशा तथा ।
सूक्ष्मभुक्ति प्राणदशाप्येवं पञ्चदशाः स्मृताः ॥ २७ ॥

भा० टी०-१ दशा, २ अन्तर्दशा, ३ प्रत्यन्तर्दशा, ४ सूक्ष्मदशा, ५ प्राण दशा इस प्रकार पाराशरजी पाँच प्रकार से दशा का भेद कहा है ॥ २७ ॥

विंशोत्तरी दशाप्रकारः (भाव० कुतू०)-

कृत्तिकादित्रिरावृत्त्या दशाविंशोत्तरी मता ।
अष्टोत्तरी न संग्राह्या मारकार्थं विचक्षणैः ॥ २८ ॥
रसाआशाशैला वसुविधुमिता भूपतिमिता ।
नवेलाशैलेला नगपरिमिता विंशति मिताः ॥
रवाविन्दावारे तमसि च गुरौ भानुतनये ।
बुधेकेतौशुक्रे क्रमत उदिताः पाकशरदः ॥ २६ ॥

भा० टी०-कृत्तिका से तीन आवृत्ति गणना करने से दशाधिपति होता है। (कृत्तिका में सूर्य की, रोहिणी में चन्द्र की, मृगशिरा में मंगल की इत्यादि क्रम क्रम से जाने) सूर्य की ६ वर्ष, चंद्र की १० वर्ष, मंगल की ७ वर्ष, राहु की १८ वर्ष, गुरु की १६ वर्ष, शनि की १९ वर्ष, बुधकी १७ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष, और शुक्र की २० वर्ष दशा कही गई है ॥ २८-२९ ॥

गतर्क्षनाडीनिहतादशाब्दे र्भभोगनाड्याविहृता फलं यत् ।
वर्षादिकं भुक्तमिदमरीये र्भोग्यं दशाब्दान्तरितं निरुक्तम् ॥३०॥

भा० टी०-पलात्मक भयात को जिस ग्रह की दशा हो उसके वर्ष प्रमाण से गुणा करके भभोग से भाग दे जो लब्धि हो वह गत-वर्ष होता है शेष को १२ से गुणा करके भभोग से भाग लेने पर मास शेष को ३० से गुणा कर

भभोग से भाग लेने पर दिन एवं शेष को ६० से गुणा कर भभोग से भाग लेने पर घटी पुनः शेष को ६० से गुणा कर ६० का भाग लेनेसे पल होता है वर्षादि को दशा के वर्ष प्रमाण में घटाने से भोग्य वर्षादि होते हैं ॥ ३० ॥

सूतिकाम्बरम् (मदीयपद्यम्)-

रक्तः स्वच्छः पाटलः श्वेतवर्णः शुभः कृष्णेनान्वितः चित्रवर्णः ।
कृष्णः पीतः कर्बुरो बभ्रुरेतः वाच्यं मेषाद्याम्बरं सूतिकायाः ३१

भोजनम् (मदीयपद्यम्)-

सूतेः प्राग्भोजनं मातुर्वाच्यं तूर्यंशतः क्रमात् ।
वृत्ताश्रितस्तुसूर्यादे दैवज्ञभूषणा । बुधाः ॥ ॥ ३२ ॥
मधुरं कठिनं रुक्षं पेयं लेह्यादिकं मृदुः ।
पयोगुडं च शोपाम्लं स्वल्पं वैचित्रभोजनम् ॥ ३३ ॥
वटकाद्यं बहुरसं मिष्टं पेयादिकं तथा ।
क्रोधात् कदन्नं स्वल्पं वा दीर्घं तु भोजनं स्मृतम् ॥३४॥

मातुः क्लेशज्ञानम् (मदीयवृत्तम्)-

बन्धुसमगैः क्रूरैः मातुः क्लेशं वदेद्ध्रुवम् ।
तथा शशाङ्कसंयुक्तैः दुःखं मातुर्न संशयः ॥ ३५ ॥

सूतिका (मदीयवृत्तम्)-

तावत् तु सूतिकावर्णाः चतुर्थदशगे गृहे ।
संख्याग्रहाणां यावद्दृष्टिः स्यादादिशेद्ध्रुवम् ॥ ३६ ॥

उपसूतिका (वृहज्जातके)-

चन्द्रलग्नान्तरगतैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिकाः ।
बहिरन्तश्चचक्रार्द्धे दृश्यादृश्येऽन्यथा परे ॥ ३७ ॥

दीपस्नेहद्वारज्ञानम् (वृ० जा०)-

स्नेहः शशाङ्कादुदयाच्चवर्ती दीपोऽर्क युक्तर्क्षवशादगारम् ॥
द्वारं च तद्वास्तुनि केन्द्रसंस्थैर्ज्ञेयं ग्रहे वीर्यसमन्विते वा ॥३८॥

सूतिकागृहम् (वृ० जा०)-

मेषकुलीरतुलालिघटैः प्रागुत्तरतो गुरुसौम्यगृहेषु ।
पश्चिमतश्च वृषेणनिवासो दक्षिणभागकरौ मृगसिंहौ ॥३९॥

सूतिकाशयनम् (पृ० जा०)-

प्राच्यादिगृहे क्रियादयो द्वौ द्वौ कोणगता द्विमूर्तयः।
शय्यास्वपि वास्तुवद्वदेत् पादैः पट्त्रिनवान्त्यसंस्थितैः ॥४०॥

स्पष्टार्थः ॥ ३१–४० ॥

इति श्रीदैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संग्रहीते फलितप्रकाशे तत्कृत सुधानाम्नि टीकान्विते जन्मांगसाधन रत्नं समाप्तम् ॥ ७ ॥

—ः०ः—

अथ वर्ष रत्नम् ८।

वर्षप्रवेशेष्टकालज्ञानम् (संग्रहसर्वस्वे)-

सपादमर्धसार्धं वा गताब्दानामनुक्रमम्।
जन्मवारादयोयोज्याः स्फुटं वर्ष फलं भवेत् ॥ १ ॥

भा० टी०—गत वर्ष को एक जगह सवाई * दूसरे जगह आधा तीसरे जगह ड्यौढ़ा करके क्रमशः जन्मके घड़ी आदिको जोड़नेसे वर्ष के समयका वारादि घड़ी जाने।

जन्मलग्नाद्वर्षलग्न ज्ञानम् (नी०क०)-

गताब्दात्रिनिघ्ना द्विधाशून्यरामैरवाप्तं फलं चार्धराशीपुयुक्तम्।
ततोभानुभिर्भक्तशेषेणयुक्ता ततोजन्मलग्नाद् भवेदब्दलग्नम् ॥२॥

जन्माङ्गोपरि वर्षमासादि ज्ञानम्—

तत्र वर्षज्ञानम्—यस्मिन्राशौ भवेत्सौरिर्जन्मकालात् सार्द्धं च द्वे समाः।
शनिर्यावद् भवेद् वर्षस्तथैवास्मिन् गादितः ॥ १ ॥

मासज्ञानम्—वैशाखे स्थापयेज्जन्म यावद्भानुश्च गच्छति।
तावन्मासो भवेज्जन्म गर्गस्य वचनं यथा ॥ २ ॥

पक्ष ज्ञानम्—यत्रराशौ भवेत्सूर्यस्तस्मात् च सप्तान्तरे।
चन्द्रे शुक्लो भवेत्पक्ष अन्यथा कृष्णपक्षकः ॥ ३ ॥

तिथि ज्ञानम्—यत्रभानुः शुद्धस्तत्र सार्द्धं द्वे तिथि गण्यते।
चन्द्रं यावत् समाख्यातं तिथिज्ञानं मनीषिभिः ॥ ४ ॥

दिनरात्रि ज्ञानम्—सूर्याक्रान्तस्य भवनात् लग्नं सप्तान्तरे।
दिनेजन्म भवेन्नाम अन्यथा निशिजं भवेत् ॥ ५ ॥

इष्टकाल ज्ञानम्—सूर्याक्रान्तभवनात् एक एक हि गण्यते।
लग्नं यावत् समाख्यातं घटीज्ञानं मनीषिभिः ॥ ६ ॥

शुभाशुभ फलम्—जन्म लग्नं समारभ्य जन्मवर्षोऽपि वर्जयेत्।
मारकेषु च आदेषु [illegible] द्वन्द्वम् ॥ ७ ॥

* वर्षे सवाई अर्ध करि, पुनि ड्योढ़े करदेव। जन्मवार इत्यादि में, [illegible] अंक दुनि देव॥

वर्षेग्रहमैत्रीचक्रम् (नी० कं०)-

मित्रं तृतीय पञ्चमनवमैकादशगतोऽपि यो यस्य ।
धनमृतिरिपुरिःफेषु च समोग्रहः स्यादितिज्ञेयम् ॥ ९ ॥
शत्रुस्तथैकतुर्ये जायास्थाने तथा दशमे ।
ताजिकहिल्लाजमते नैतादृक् कथितमस्माभिः ॥ १० ॥

भा० टी०—जो ग्रह जिस ग्रह से ३।५।९।११ वें भाव में स्थित हो तो वह उसका मित्र होता है । तथा २।८।६,१२वें भाव में स्थित हो वह उसका सम होता है । और १।४।७।१०वें भाव में हो तो वह शत्रु जाने ऐसा ताजिकविशहिल्लाज जी का कथन है ॥ ९ ॥ १० ॥

सूर्यादिग्रहाणामुच्चनीचराशिज्ञा० (ताजक सुबोधे)-

अजर्षभनक्रमदेन्दुभान्यथो पाठीनयूकौ क्रमतोदिनेश्वरात् ।
उच्चास्तथांशैर्दशभिर्गुणैर्गजाश्विभिः शराङ्गैर्विषयैर्नगाश्विभिः ११
नखैः स्वतुङ्गान्मदनेतुनीचाभान्यंशैः पुरोक्तैः सततं खचारिणां ।
उच्चास्थिते वा स्वगृहादिसप्तकेबलीग्रहःस्यात्सुहृदोऽथवाभवेत् ।

भा० टी०—मेष का सूर्य, वृष का चंद्रमा, मकर का मंगल, कन्या का बुध, कर्क का बृहस्पति, मीन का शुक्र, तुला का शनि उच्च है । जिस ग्रह का जो उच्च राशि है उन राशियों का ग्रह परमोच्चांश इस प्रकार है । सू० १० अंश, चंद्रमा ३ अंश, मं० २८ अंश, बु० १५ अंश, गुरु ५ अंश, शु० २७ अंश, शनि २० अंश पर्यन्त उच्च रहता है । अपनी उच्च राशि से सब ग्रह सातवीं राशि में नीच होते हैं और परमोच्च अंश के सदृश परम नीच रहते हैं । उच्च में स्थित ग्रह वा स्वगृहादि सप्तस्थान में तथा सुहृद होने पर बली होता है ॥ ११ ॥

मुन्थाज्ञानं (नी० कं०)-

स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्षमेकैकराशिभोगान्मुथहा भ्रमेण ।
स्वजन्मलग्नं रवितष्टजातशरद्युतं सा मुथहेन्थिहास्यात् ॥१२॥

भा० टी०—जन्म लग्न से प्रत्येक वर्ष में एक २ राशि मुंथहा बढ़ता है जन्म लग्न को गतवर्ष में युत कर १२ का भाग देने से जो शेष बचे उसके सदृश मुंथहा होता है ॥ १२ ॥

उदाहरण—जन्म लग्न राश्यादि १०।११।२७।३१।४८ इसमें गतवर्ष संख्या

५० जोड़ा तो ६०।११।२७।३१।४८ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष राश्यादि ०।११।२७।३१।४८ हुआ तो यहाँ मीनगत मेष राशि को मुंथहा ११ अंश कलादि २७।३१।४८ है।

त्रिराशिपतिज्ञानम् (नी० कं०)-

त्रिराशिपाः सूर्यसितार्किशुक्रा दिने निशीज्येन्दुबुधेक्षमाजाः।
मेषाच्चतुर्णां हरिभाद्विलोमं नित्यं परेष्वार्किकुजेज्यचन्द्राः ॥१३॥

भा० टी०–दिन में वर्ष प्रवेश हो तो मेषादि चार राशि के सूर्य, शुक्र,शनि, शुक्र ये त्रिराशिप होते हैं और रात्रि में मेषादि चार राशि के स्वामी बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध, मंगल त्रिराशिप होते हैं और सिंह आदि ४ राशि में इससे विपरीत जाने और धन आदि चार राशियों में दिन रात दोनों में शनि, मंगल, बृहस्पति, चन्द्रमा त्रिराशिप है ॥ १३ ॥

वर्षेशार्थे पञ्चाधिकारिणः (नी० कं०)-

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशिपः।
सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रभाधीश्वरो निशिविमृश्यपञ्चकम् ॥ १४ ॥

भा० टी०–१ जन्म लग्न का स्वामी, २ वर्ष लग्न का स्वामी, ३ मुंथा का स्वामी, ४ त्रिराशिप, ५ दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य राशि को स्वामी, और रात्रि का वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा के राशि के पति, ये ही पाँचो वर्षेश होने के अधिकारी हैं ॥ १४ ॥

बलप्रकारः (मदीयवृत्तम्)-

स्वनीचेनग्रहोहीनो रसभादधिको यदा।
शोध्यश्चक्रात् तदंशाङ्कलवोस्यात् तु बलं तदा ॥ १५ ॥

भा० टी०–बल बनाने का प्रकार यह है कि जिस ग्रह का उच्च बल बनाना हो तो उसको अपनी नीच राशि में हीन करे हीन करने से यदि छः राशि से अधिक हो तो चक्र (बारह राशि) में घटा दे शेष को अंश बनाकर नव को भाग देने से जो लब्ध कलादि आती है वही उच्च बल है ॥ १५ ॥

पञ्चवर्गीबलमाह (नी० कं०)-

त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे हद्देक्षचन्द्रा दशकं दृकाणे।
मुसल्लहे पञ्चलवाः प्रदिष्टा विंशोपकावेदलवैः प्रकल्प्याः।

भा० टी०–घर अपनी राशि का हो तो ३० का बल, अपने उच्च का २०

का बल, अपने हद्दा में १५ का बल, अपने द्रेष्काण में २० का, अपने नवांश में ५ का बल इस बल के चतुर्थांश को विशोपक (विश्वा) बल को जाने ॥

मित्रमित्रादिराशिगते बलनिर्णयः (नी० कं०)-

स्वस्वाधिकारोक्त बलं सुहृद्भे पादोनमर्धं समभेऽरिभेऽङ्घ्रिः ।
एवं समानीय बलं तदैक्यं वेदोद्धृते हीनबलः शरोनः ॥१७॥

भा० टी०-जो अपने २ अधिकार में बल कहा है उसका विभाग करते हैं। जो ग्रह अपने मित्र के घर में हो उसका चौथाई बल न्यून होता है, सम घर में हो वह आधा बल ग्रहण करता है और शत्रु घर में हो वह चौथाई बल पाता है।

द्वादशवर्गी (नी० कं०)-

क्षेत्रं होरा त्र्यब्धि पञ्चाङ्गसप्तवस्वङ्काशेशार्कभागाः सुधीभिः ।
विज्ञातव्या लग्नसंस्थाःशुभानां वर्गाः श्रेष्ठाःपापवर्गास्त्वनिष्ठाः॥१८॥

भा० टी०-राशि, होरा, तृतीयांश, चतुर्थांश, पञ्चमांश, षष्ठमांश, सप्तांश, अष्टमांश, नवमांश,दशमांश, एकादशांश द्वादशांश ये १२ वर्ग पण्डितों ने कहा है।

होराद्रेष्काण चतुर्थांशेशाः

ओजे रवीन्द्वोः समइन्दुरव्यो र्होरेगृहार्द्धप्रमिते विचिन्त्ये ।
द्रेष्काणपाः स्वेपुनवर्क्षनाथास्तुर्यांशपाः स्वर्क्षजकेन्द्रनाथाः ॥१६॥

भा० टी०-विषम राशियोंमें १५ अंश तककी पहिली होरा सूर्य और दूसरी १६वें अंश से ३० अंश पर्यन्त चंद्रमा की, सम राशियों में पहिली १५ अंश तक चंद्रमा का, फिर दूसरी १६ वें अंश से ३० अंश पर्यन्त सूर्य की होरा होती है। अपनी पाँचवीं नववीं राशि के स्वामी क्रम से दश २ अंश के द्रेष्काणेश होते हैं। इसी प्रकार अपनी राशि से चारों केन्द्रों के मालिक साढ़ेसात२ अंश के चतुर्थांश के स्वामी होते हैं ॥ १६ ॥

पञ्चमेशद्वादशांशेशाः (नी० कं०)-

ओजर्क्षे पञ्चमांशेशाः कुजार्किज्यज्ञभार्गवाः
समभे व्यत्ययाज्ज्ञेया द्वादशांशाः स्वभात्स्मृताः ॥ २० ॥

भा० टी०-विषम राशियों में छः छः अंशों के क्रम से मंगल, शनैश्वर, बृहस्पति, बुध, शुक्र और सम राशियों में विपरीत (६ अं० प्रथम शु०, फिर ६ अं० बुध, ६ अंश बृहस्पति, ६ अंश शनि, फिर ६ अंश मंगल) पञ्चमांश शेष होते हैं। प्रत्येक राशि में अपने राशि के क्रम से द्वादशांशेश होते हैं, ढाई २ अंश

का एक द्वादशांश होना निश्चय है ॥ २० ॥

षष्ठ सप्तमाष्टमनवमदशमैकादशांशेशाः (नी० कं०)-

लवीकृतोऽव्योमचरोङ्गशैल वस्वङ्कदिग्रुद्रगुणाः खरामैः ।
भक्तोगतास्तर्कनगाष्टनन्द दिग्रुद्रभागाः कुयुताः क्रियात्स्युः॥२१॥

भा० टी०—षडांश, सप्तमांश, अष्टमांश, नवमांश, दशमांश, एकादशांश इनके स्वामियों के जानने का प्रकार यह है कि ग्रह की राशि को अंश बनाकर फिर कला विकला सहित छः स्थान में धरे फिर क्रम से ६।७।८।९।१०।११ से गुणा कर ३० का भाग देने से जो लब्ध उपलब्ध हो वह गत छः, सात, आठ, नव, दश, ग्यारह भाग होते हैं। इन सबों में एक मिलाकर मेष से गणना करने पर जो राशि हो उस राशि का स्वामी उस वर्ग का स्वामी जाने। यदि १२ से अधिक हो जाय तो १२ से शेषित कर शेष को ग्रहण करे ॥ २१ ॥

द्वादशवर्गफलम् (नी० कं०)-

एवं द्वादशवर्गीस्याद् ग्रहाणां बलसिद्धये ।
स्वोच्चमित्रशुभाच्छ्रेष्ठा नीचारि क्रूरतोऽशुभा ॥ २२ ॥

भा० टी०—इस प्रकार ग्रहोंके बल सिद्धि के निमित्त * द्वादशवर्गी होती है, वह अपने उच्च मित्र शुभों से श्रेष्ठ फल देने वाला होती है। और नीच शत्रु क्रूर का वर्ग अशुभ है ॥ २२ ॥

वर्गेशानिर्णय (नी० कं०)-

वलीय एषा तनुमीक्षमाणः स वर्गपो लग्नमनीक्षमाणः ।
नैवाब्दपो दृष्टयनिरीक्षनः स्यादलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ॥२३॥

* होरा, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिंशांश इन छः को षड्वर्ग कहते हैं, इसमें त्रिंशांश का ज्ञान हुआ, और इन द्वादशवर्गों से होरा, द्रेष्काण नवमांश द्वादशांश का ज्ञान होता परन्तु त्रिंशांश को इसमें कुछ नहीं लिखा है। इस त्रिंशांश का ज्ञान इस प्रकार करे कि "पञ्चपञ्चाष्टसप्तपञ्च [illegible]" विषम राशि में ५ अंश मंगल, ५वें से १० अंश तक शनि का ११वें से १८वें अंश तक गुरु का, १९वें अंश से २५वें अंश पर्यन्त बुध का और शुक्र का ३० अंश पर्यन्त त्रिंशांश होता है। और मतान्तर का विचार [illegible] के कारण [illegible] विषम में [illegible] राशि में और [illegible] राशि में [illegible] होता है, [illegible] अंश ३० कला का एक २ अंश होता है, [illegible]। इस प्रकार समझने से [illegible] होगा।

भा० टी०—शुक्र, बुध, सूर्य एक राशि पर एक मास रहता है, मंगल एक राशि पर डेढ़ मास, बृहस्पति १३ मास, चंद्रमा सवा दो दिन, राहु अठारहमास, और शनि एक राशि पर ३० मास रहता है। राहु के समान केतु भी १८ मास एक राशि पर रहता है इस प्रकार ग्रहों को भोग कहा है॥ १॥ २॥

फलसमयः (मु० मं०)—

भादितोरविकुजौफलप्रदौमध्यतोगुरुसितौ सदाबुधः।
गच्छतः शनिविधू अथोपुरोगम्यभस्यफलदाःखगाः क्रमात्॥३॥

भा० टी०—राशि के आरम्भ में मंगल सूर्य मध्य में गुरु शुक्र सदा बुध और अन्त्य में शनि चन्द्रमा फल देते हैं। गम्य राशि का ग्रह पहले फल देते हैं सो आगेके श्लोक से निर्णय होगा॥ ३॥

पञ्चनागनगसप्तवासरान् सूर्यभौमबुधभार्गवामताः।
राहुजीवशनयोऽग्निदस्रषान् मासइन्दुरिह नाडिकात्रयम्॥ ४॥

भा० टी०—सूर्य अपने गन्तव्य राशि का ५ दिन पहले फल देते हैं। मंगल ८ दिन पहले, बुध ७ दिन पहले, शुक्र ७ दिन पहले, राहु ३ मास, गु० २ मास, शनि छः मास पूर्व फल देता है और चंद्रमा अपने गन्तव्य राशि का तीन दंड पहले फल देता है॥ ४॥

सर्वे लाभगृहे शुभा उपचये पापग्रहाश्चन्द्रमा,
जन्मभ्रातरिपुघ्नाम्बरगृहेजीवः स्वकोणेघ्नने।
शुक्रोकर्मरिपुघ्नेसमगृहे चान्द्रिर्व्ययर्क्षं विना,
चन्द्रःकोणधनेतथाशुभफलः शान्त्याशुभा अन्यथा॥ ५॥

भा० टी०—लाभ स्थान में सब ग्रह शुभ हैं, उपचय स्थान में पापग्रह शुभ फल दाता हैं, जन्म चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम, दशम, चंद्रमा शुभप्रद है, त्रिकोण तथा सप्तम गुरु शुभ है, दशम षष्ठ सप्तम स्थान में शुक्र शुभ है, व्यय के अतिरिक्त सब ग्रह में बुध शुभ है, चंद्रमात्रिकोण (५।९) में तथा धन भाव में शुभ है अन्यत्र शुभ नहीं है, अतः अन्यत्र शांति से शुभ होते हैं॥ ५॥

संवत् सर्वार्थे—

धनजन्मनि पञ्चमसप्तमगाः चतुरष्टमद्वादशा धर्मसुताः।
धनधान्यहिरण्य विनाशकरा रविराहुशनैश्चर भूमिसुताः॥ ६॥

भा० टी०—सूर्य, राहु, शनि, मंगल ये ग्रह दूसरे, पहले, पांचवें, सातवें, चौथे, आठवें, बारहवें और नवमें हों तो धनधान्य और सुवर्णका नाश करते हैं॥६॥

तृतीयैकादशे षष्ठे शन्यर्ककुजराहवः।
चत्वारः तस्यराज्यं वा शरीरे सौख्यमादिशेत् ॥ ७ ॥

भा० टी०—तृतीय, एकादश तथा षष्ठ स्थान में जिसके शनि, सूर्य, मंगल, राहु ये चार हों तो उसके राज्य अथवा शरीर में सुख होय ॥ ७ ॥

द्वादशदशमचतुर्थे जन्मनि षष्ठाष्टमे तृतीये च।
व्याधिं विदेशगमनं मित्रविरोधं सुग्गुरुः कुरुते ॥ ८ ॥

भा० टी०—यदि गुरु बारहवें दशवें चौथे जन्मस्थान के छठें तथा आठवें हों तो व्याधि विदेशगमन मित्र के साथ विरोध को करते हैं ॥ ८ ॥

द्वादशे जन्मगे राशौ द्वितीये च शनैश्चरः।
सार्धानि सप्तवर्षाणि तदा दुःखैर्युतो भवेत् ॥ ९ ॥

भा० टी०—जन्म राशिमें तथा बारहवें दूसरे शनि साढ़ेसाती होते हैं साढ़ेसात वर्ष तक अरिष्टकारक रहते हैं उस समय मनुष्य दुःख से युत रहता है ॥ ९ ॥

जन्माङ्गरुद्रेषु सुवर्णपादं, द्विपञ्चनन्दे रजतस्य पादम्।
त्रिसप्तदिग् ताम्रपदं वदन्ति, वेदाष्टसार्केष्विहलोहपादम् ॥१०॥

भा० टी०—शनि १।६।११वें हो तो सुवर्णपाद, २।५।९वें रजतपाद, ३।७।१०वें ताम्रपाद, और ४।८।१२वें लोहपाद है ॥ १० ॥

चन्द्रपरिहारः (मु० मं०)–

शुभांशेऽधिमित्रांशके दृष्टःशुभोमध्ययुक्तेऽहितो नो खलानाम्।
सितेपक्षतोचन्द्रवीर्ये सपक्षः शुभोऽथोशुभः कृष्णाद्यवीर्ये ॥ ११ ॥

दानकालः तदुपायश्च (ग्रन्थान्तरे)–

सूर्यादिकानां यद्दानं जपहोमार्चनादिकम्।
तेषां वारे प्रकुर्वन्ति सन्तुष्टास्ते भवन्ति हि ॥ १२ ॥

देवब्राह्मणपूजनाद् गुरुवचः सम्पादनात्प्रत्यहं,
साधूनामभिभाषणाच्छ्रुतिरवः श्रेयस्कथाकर्णनात्।
होमादध्वरदर्शनाच्छुचिमनोभावाज्जपाद् दानतो,
नो कुर्वन्ति कदाचिदेव पुरुषस्यैवं ग्रहाः पीडनम् ॥ १३ ॥

ग्रहाणां स्नानौषधयः (मु० चि०)-

लाजा कुष्ठवलाप्रियङ्गुघनसिद्धार्थै निशादारुभिः
पुंखालोध्रयुतैर्जलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थाघहृत् ॥ १४ ॥

नक्षत्राणां स्त्र्यादिसंज्ञा वर्षाविचारश्च (संग्रहे)-

दशार्द्रांद्याःस्त्रियस्तासां विशाखाद्याः नपुंसकाः ।
त्रिसतारा च मूलाद्या पुरुषाश्च चतुर्दशः ॥ १५ ॥
स्त्रीपुंसयोर्महावृष्टिः स्त्रीनपुंसकयोः क्वचित् ।
स्त्रीस्त्रियोः शीतलच्छाया योगः पुरुषयोर्न च ॥ १६ ॥
उदयास्तंगतः शुक्रो बुधश्च वृष्टिकारकः ।
जलराशिस्थिते चन्द्रे पक्षान्तेः संक्रमे तथा ॥ १७ ॥
बुधः शुक्रसमीपस्थः करोत्येकार्णवां महीम् ।
तयोरन्तर्गतो भानुः समुद्रमपि शोषयेत् ॥ १८ ॥
चलत्यङ्गारके वृष्टिस्त्रिधावृष्टिः शनैश्चरे ।
वारिपूर्णां महीं कृत्वा पश्चात् संचरते गुरुः ॥ १९ ॥
भानोरग्रेमहीपुत्रो जलशोषः प्रजायते ।
भानोः पश्चाद्धरासूनुर्वृष्टि र्भवति भूयसी ॥ २० ॥

११ से २० तक के श्लोकों का अर्थ सरल है ।

संक्रान्तीनां विष्णुपदादिसंज्ञा (मीमांसुकण्ठाभरणे)-

वृषकुम्भमृगेन्द्रवृश्चिकाः कथिता विष्णुपदाभिधाबुधैः ।
झषयुग्मशरासनाङ्गनाः षडशीत्याननसंज्ञकास्तथा ॥ २१ ॥

भा० टी०-वृ०, कु०, सि०, वृ० इन चार संक्रान्तियोंका विष्णुपद नाम है, मीन, मिथुन, धन, कन्या इन चारों का षडशीत्यानन नाम है (वृ०, सि०, वृ०, कु०, विष्णुपद, इसके आगेकी संक्रान्ति मि०क०ध०मी०षडशीत्यानन संज्ञक है) २१

तुलाजौ विषुवत् संज्ञौ नक्रं सौम्यायनं जगुः ।
कर्कयाम्यायनं प्राहुः परे वाग्वर्तिबुद्धयः ॥ २२ ॥

भा०टी०-तुला और मेष इन दोनों का विषुवत् नाम है, मकर संक्रान्तिका

सौम्यायन(उत्तरायण)नाम है और कर्क संक्रान्ति का याम्यायन(दक्षिणायन)नाम है २२

पुण्यकाल विचारः (मीमांसुकण्ठाभ०)-

भास्वत्संक्रान्तिकालादुभयतउदिता भूपनाड्यः सुपुण्याः,
पूर्वं सा चेन्निशीथाद् भवति निशि सदा पूर्वघस्रोत्तरार्धम् ॥
पुण्यं चेदूर्ध्वमस्तादभिदधतिपरे वासरे पूर्वमर्धम्,
सम्पूर्णे चेन्निशीथे दिनमिह सुधियः पूर्वमप्युत्तरञ्च ॥ २३ ॥

भा०टी०—सूर्यकी संक्रान्तिके समयसे पूर्व उत्तर दोनों तरफ सोलह २ दण्ड पुण्यकाल रहता है, और यदि आधीरात के पहले संक्रान्ति हो तो पूर्व दिन के उत्तरार्ध में पुण्यकाल है, और यदि आधी रात के बाद संक्रान्ति हो तो आगामी दिनके पूर्वार्ध में पुण्यकाल है और यदि ठीक अर्ध रात्रि (२ दंड) ही में संक्रान्ति हो तो पूर्व और पर दोनों दिन भर पुण्यकाल है। और मेरी टीकासे सुशोभित मीमांसुकंठाभरणके अवलोकन करनेपर तिथि संक्रान्ति पर्वोंका विशेष विज्ञान होगा २३

अर्द्धोदिताद्भास्करबिंबतः प्राक् सन्ध्ये त्रिनाडी त्रयमुक्तमार्य्यैः ।
अर्द्धास्ततो भास्करबिंबतस्तु*सन्ध्येतितिस्रोभिहिताः परस्तात् ॥

भा० टी०—सूर्योदयके अर्द्धोदय समयसे पूर्व तीन दंड तक प्रातः संध्या और सूर्य बिंबके अर्द्धास्त समयके बाद तीन दंड तक सायं सन्ध्या कही जाती है २४

अर्धोदययोगः [] (मु० ग०)-

माघमासि रवौ दर्शे व्यतीपाते श्रवान्विते ।
अर्धोदयाभिधो योगः सूर्यपर्वशताधिकः ॥ २५ ॥

---

* त्रिंशत् कर्कटकेनाड्यः मकरे तु दशाधिकाः । वर्तमानेतुलामेषे नाड्यस्तूभयतो दश ॥१॥
सूर्यस्योदयसन्ध्यायांयदि याम्यायनंभवेत् । तदोदयादहःपुण्यं पूर्वाह्नःपूर्वतो यदि ॥२॥
सूर्यास्तमयसन्ध्यायांयदियाम्यायनं भवेत् । तदाहःपुण्यकालःस्यात्परतश्चोत्तरेऽहनि ॥३॥
अह्निसंक्रमणेपुण्यमहः कृत्स्नंप्रकीर्तितम् । रात्रौसंक्रमतेभानौ दिनार्धेस्नानदानयोः ॥४॥
पूर्णं चेदर्धरात्रौ तु यदा संक्रमणं रविः । प्राहुर्दिनद्वयं पुण्यं मुक्त्वामकरकर्कटौ ॥५॥
यदास्तमयवेलायां मकरंयाति भास्करः । प्रदोषेचार्धरात्रे वा स्नानंदानं परेऽहनि ॥६॥
रात्रौस्नानं न कुर्वीतदानंचैवविशेषतः । स्नानंदानंग्रहणवत् सौम्ययाम्यायन द्वयं ॥७॥

[] मीमा०कं०-श्रुतिपातदिनेश्वरेंदिवासहितामा यदि पौषमाघयोः ।
उपरागशतोपमस्तदा कथितोऽर्धोदयपर्वदुर्लभः ॥ १ ॥
भयकेनविदेपुचेदुभयेचदिह्नौनापिर्दयतानिधिः ।
भयतीहमहोदयस्तदा स तु नाम्नैव न पुण्यतो महान् ॥ २ ॥

अयमुक्तोदिवायोगः किंचिन्न्यूनो महोदयः।

गजच्छाया (मु० ग०)-

पितृपक्षे त्रयोदश्यां हस्तेऽर्केऽब्जे मघागते।
गजच्छायाभिधोयोगः श्राद्धेऽक्षय्य फलप्रदः॥ २६॥

कपिलाषष्ठी (मु० ग०)-

आश्विनेकृष्णपक्षे च षष्ठ्यां भौमोऽथरोहिणी।
व्यतीपातस्तदाषष्ठी कपिलानन्तपुण्यदा॥ २७॥

व्यतीपातयोगः (सीमा० कं० भ०)-

वसुदस्नहरीरवरोरगैः शशिना वा सहितो विधुक्षयः।
दिनकृद्दिवसे यदा भवेत् व्यतिपातोऽभिहितस्तदाबुधैः॥ २८॥

गोविन्दद्वादशी (पर्व सर्वस्वे)-

यदा चापेजीवे भवति घटराशौ दिनमणि-
स्तदातारानाथे स्वभवनगते फाल्गुनसिते।
यदार्के द्वादश्यां भवति गुरुभं शोभनयुतम्।
तदा गोविन्दाख्यो हरिदिवसमस्मिन् भुवितले॥२९॥

वारुणी (पर्व सर्वस्वे)-

वारुणेन* समायुक्ता मधौ कृष्णात्रयोदशी।
गङ्गायां यदि लभ्येत कोटिसूर्यग्रहैः समा॥ ३०॥
शनिवारसमायुक्ता सा महावारुणी स्मृता।
शुभयोग समायुक्ता शनौ शतभिषा यदि॥ ३१॥
महामहेति विख्याता त्रिकोटि कुलमुद्धरेत्।

हरद्वारे कुम्भपर्वः (पर्व सर्वस्व)-

पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिस्थिते गुरुः।

---

* वरुण नाम शतभिषा का है, अतः जो इस योग में वरुण संगम का स्नान करते हैं, या करते हैं उनको धर्म है। और यदि [illegible] मदिरा दान का [illegible] लिया या उसको महाधम है जो योग लगे बिना भी प्रत्येक साल पंचांग में लिखते हैं उनका अति महात्म्य है इसका विशेष निर्णय "सनातनधर्म" साप्ताहिक पत्र काशी वर्ष १ अंक ११ में लिख दिया है।

गङ्गाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामस्तदोत्तमः ॥ ३२ ॥

प्रयागेकुम्भपर्वः (पर्वसर्वस्वे)-

मकरे च दिवानाथे ह्यजगे च बृहस्पतौ ।
कुम्भयोगो भवेत् तत्र प्रयागेह्यतिदुर्लभः ॥ ३३ ॥
माघेमेषगतेजीवे मकरे चन्द्रभास्करौ ।
अमावस्यान्तदायोगः कुम्भाख्यस्तीर्थ नायके ॥ ३४ ॥

उज्जयिन्यांकुम्भपर्वः (पर्वसर्वस्वे)-

घटेगुरुः शशीसूर्यः कुह्वांदामोदरे यदा ।
धारायां च तदा कुम्भोजायते खलु मुक्तिदः ॥ ३५ ॥

गोदावर्य्यांकुम्भपर्वः (पर्वसर्वस्वे)-

कर्के गुरुस्तथाभानुश्चन्द्रश्चन्द्रक्षयस्तथा ।
गोदावर्य्यां तदा कुम्भो जायतेऽवनिमण्डले ॥ ३६॥

पद्मकयोगः (निर्णयसिन्धौ)-

षष्ठी च सप्तमी चैव वारश्चेदंशुमालिनः ।
तदा पद्मकयोगोयं कोटिसूर्यग्रहैः समः ॥ ३७ ॥

पञ्चपर्वाणि (नारदे)-

चतुर्दश्यष्टमीकृष्णा ह्यमावस्या च पूर्णिमा ।
पुण्यानि पञ्चपर्वाणि संक्रान्तिदिवसं तथा ॥ ३८॥

कार्यसिद्धिप्रश्नः (प्रश्नभावे)-

स्थिरगशौ* लग्नगते स्थानप्राप्तिं वदेन्न चागमनम् ।
रोगोपशमो नाशो द्रव्याणां स्यात्पराभवो नात्र ॥ ३९ ॥
चरराशौ विपरीतं मिश्रं वाच्यं द्विमूर्त्तुदये ।
स्थिरचरयोमध्ये स्यादपरे चराशिरसमर्गाम् ॥ ४०॥

गर्भिणीप्रश्नः (नारदसर्वस्वे)-

नष्टर्य □ गर्भिणिनामधेयं तिथियुक्तं समंपुर्नं च ।

---

* [illegible]
[illegible]
‡ [illegible]

एकेनहीनं नवभागघेयं समेकुमारीविषमेकुमारः ॥ ४१ ॥

दोषज्ञानम् (संग्रहसर्वस्वे)-

आत्मनामाक्षरश्चैव दूतश्चैव चरोगिणः ।
एकीकृत्यत्रिगुणितं नवभिर्भागमाहरेत् ॥ ४२ ॥
शेषे षट् वेद भूभूतः द्विके सप्त तथेश्वरः
अष्टमे पितश्चैव वाणाङ्के ग्रहजा भवेत् ॥ ४३ ॥
देवस्य मेषे गावि पितृपक्षादाकाशदेव्या मिथुनेऽथ कर्के
स्याच्छाकिनी चेत्रपतेस्तुसिंहे स्त्रियांकुलार्हां च तुले तु मातुः॥
नागस्त्वलौ यक्षपतिर्धनुष्ये नक्रेऽम्बुदेव्यास्तु घटेऽथपक्षी ।
झषे कुलोपासितदेवतस्य दोषं भवेदुधर्म वहिष्कृतस्य॥४५॥

तथा च (संग्रहसर्वस्वे)-

तिथिवारं च नक्षत्रं लग्नं ग्रहमेव च ।
अष्टभिस्तु हरेद्भागं शेषं तु फलमादिशेत् ॥ ४६ ॥
हयाग्नौ देवतावाधा पित्रेर्वे नेत्र दन्तिषु ।
षट् तूर्ये भूतवाधा च न वाधा चन्द्रपञ्चके ॥ ४७ ॥

जीवनमरण प्रश्नः (संग्रहसर्वस्वे)-

उदयाद् घटिका द्विघ्नास्तिथिवारेण मिश्रिता ।
सूर्यैश्च विभजेच्छेषे विज्ञेयं मृत्यु जीवनम् ॥ ४८ ॥
राम वाण रसैः सिद्धि र्नन्दरुद्रैश्च जीवनम् ।
रुप पक्षयुग द्वीपदश सूर्यैर्न जीवनम् ॥ ४९ ॥

विदेशस्थस्य प्रश्नः (संग्रहसर्वस्वे)-

प्रश्नवर्णं द्विगुणीतं त्रयोदशसमन्वितम् ।
वसुभिस्तु हरेद्भागं शेषे प्रश्नस्य लक्षणम् ॥ ५० ॥
एकेचागमनं ब्रूयाद् द्वितीये मार्ग एव च ।
अर्धमार्गे तृतीये च चतुर्थे द्वार मार्गतः ॥ ५१ ॥
पञ्चमे पुनरावृत्तिः षष्ठे व्याधि समन्वितः ।

सप्तमे शून्यता वृत्तिरष्टमे मरणं ध्रुवम् ॥ ५२ ॥

चौरप्रश्नः (षट्पञ्चाशिकायाम्)-

स्थिरोदये* स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेऽपि वा ।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीये नैव चौरितम् ॥ ५३ ॥
आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु विशेषतः ।
द्वारदेशे तथा मध्ये गृहान्ते च वदेद्धनम् ॥ ५४ ॥

नष्टलाभज्ञानम् (षट्पञ्चाशिकायाम्)-

पूर्णः शशी लग्नगतः शुभो वा शीर्षोदये सौम्यनिरीक्षितश्च ।
नष्टस्य लाभं कुरुते तदाशु लाभोपयातो बलवान् शुभश्च ॥५५॥

दिशाज्ञानम् (षट्पञ्चा०)-

दिग्वाच्या केन्द्रगतैरसंभवे वा वदेद्विलग्नर्क्षात् ।
मध्याच्युतैर्विलग्नान्नवांशकैर्योजना वाच्या ॥ ५६ ॥

नेत्रस्फुरणफलम् (ज्योतिषसारे)-

नेत्रस्योर्ध्वं हरति सकलं मानसं दुःखजालम् ।
नेत्रोपान्ते दिशति च धनं नाशिकान्ते च मृत्युः ॥
नेत्रस्याधः स्फुरण मसकृत्संगरेभङ्गहेतु
र्वामे चैतत्फलमविकलं दक्षिणे वैपरित्यम् ॥ ५७ ॥

खञ्जनदर्शनफलम् ।

वित्तं ब्रह्मणि || कार्यसिद्धिरतुला शक्रे हुताशे भयम्,
याम्ये रोगभयं सुरारिकलहं लक्ष्मी समुद्रालये ।
वायव्ये वरवस्त्रलाभमखिलं दिव्याङ्गना चोत्तरे,
ईशान्ये मरणं ध्रुवं निगदितं दिग्लक्षणं खञ्जने ॥५८॥
अञ्जनेषु गोषु गजवाजिमहोरगेषु,
राज्यप्रदः कुशलदः शुचिशाद्वलेषु ।

* [illegible] क्षत्रिया वैश्यः शूद्राश्च [illegible] ।
[illegible] भूम्यश्च [illegible] ॥
[illegible] ।

|| [illegible] गजमस्तके वा [illegible] ।
[illegible] ॥

भस्मास्थिकेशतुषचर्मनखेषु दृष्टः,
दुःखं ददाति बहुशः खलु खञ्जरीटः ॥ ५६ ॥

पल्लीपतनसरटारोहण फलम् (शान्तिसारग्रंथे)-

यदि पततिपल्ली दक्षिणाङ्गे नराणां,
स्वजनजनविनाशो वामभागे तु लाभः ।
उदरशिरकण्ठे पृष्ठदेशे च मृत्युः,
चरणहृदयसंस्था सर्वसौख्यं करोति ॥ ६० ॥
पल्लीपतनवद्ज्ञेयं सरटारोहणेफलम् ।
शान्तिं दुष्टफले कुर्याच्छुभे स्नानं सचेलकम् ॥६१॥

काक शकुनः (संग्रहे)—

काकस्यवचनं श्रुत्वा गृहीत्वा तृणमुत्तमम् ।
मापयेदंगुलेनैव त्रयोदशसमन्वितम् ॥ ६२ ॥
भूहीन सप्तभिर्भक्तं शेषांके फलादिशेत् ।
लाभं नष्टं महासौख्यं भोजनप्रियदर्शनम् ॥ ६३ ॥
कलहो मरणं चैव काकोवदति नान्यथा ।

छिक्काविचारः ।

छिक्काफलं प्रवक्ष्यामि पूर्वस्यामशुभं भवेत् ।
आग्नेय्यां शोकदुःखं स्यादशिष्टं दक्षिणे तथा ॥ ६४ ॥
नैऋत्यां च शुभं प्रोक्तं पश्चिमे मिष्टभक्षणम् ।
वायव्ये धनलाभस्तु उत्तरे कलहस्तथा ॥ ६५ ॥
ईशान्यां च शुभं क्षेम आत्मच्छिक्कामहद्भयम् ।
ऊर्ध्वं चैव शुभं ज्ञेयं मध्ये चैव महद्भयम् ॥ ६६ ॥
आसने शयने चैव दाने चैव तु भोजने ।
वामाङ्गे पृष्ठतश्चैव परस्तु छिक्का शुभावहाः ॥ ६७ ॥

श्लोक २५ से ६७ पर्यन्त के श्लोकों का अर्थ सुगम है ।

इति श्रीदैवज्ञभूषण मातृप्रसाद संगृहीते फलितप्रकाशे सकुन सुधानन्दिनि टीकान्विते मिश्रितरत्नं समाप्तम् ॥ ६ ॥